पूर्वोत्तर विषयक हिंदी कथा साहित्य: आदिवासी समाज के सन्दर्भ में

शोध-प्रबन्ध

हिंदी विभाग में

पी-एच०डी० उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोधकर्ता

पूजा श्रीवास्तव

MUIT0120038261

शोध निर्देशक

डॉ0 मनोज कुमार सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग

महर्षि विज्ञान एवं मानविकी स्कूल

महर्षि सूचना प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, लखनऊ

सीतापुर रोड, पोस्ट महर्षि विद्या मंदिर

लखनऊ, 226013

अक्टूबर-2024

महर्षि सूचना प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, लखनऊ

शोध छात्र का प्रतिज्ञा-पत्र

मैं एतद्द्वारा घोषणा करती हूँ कि इस शोध प्रबंध में प्रस्तुत कार्य जिसका शीर्षक है **"पूर्वोत्तर विषयक हिंदी कथा साहित्य: आदिवासी समाज के सन्दर्भ में"** महर्षि विज्ञान एवं मानविकी स्कूल, महर्षि सूचना प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, लखनऊ में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी की डिग्री के आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए, इस विश्वविद्यालय में महर्षि विज्ञान एवं मानविकी स्कूल के **डॉ0 मनोज कुमार सिंह,** असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग की देखरेख में किए गए मेरे अपने शोध कार्य का एक प्रामाणिक रिकॉर्ड है। मैं यह भी घोषणा करती हूँ, कि वर्तमान शोध प्रबंध में निहित कार्य-

i) यह मेरा मौलिक कार्य है तथा इसे किसी पत्रिका/ थीसिस/ पुस्तक से कॉपी नहीं किया गया है; तथा

ii) इसे मेरे द्वारा किसी विश्वविद्यालय/ संस्थान की किसी अन्य डिग्री या डिप्लोमा के लिए प्रस्तुत नहीं किया गया है।

दिनांक: **पूजा श्रीवास्तव**

महर्षि सूचना प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, लखनऊ

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है की प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध **"पूर्वोत्तर विषयक हिंदी कथा साहित्य: आदिवासी समाज के सन्दर्भ में"** पूजा श्रीवास्तव, शोध छात्र, हिंदी विभाग, महर्षि सूचना प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, लखनऊ द्वारा इतिहास में पी-एच०डी० उपाधि हेतु मेरे निर्देशन में नियमानुसार परिपूर्ण कर प्रस्तुत किया गया है। इस विषय पर यह शोध सर्वथा मौलिक और नवीन उपलब्धियों से युक्त होने के साथ ही इनके निजी अध्यवसाय एवं कठिन परिश्रम का परिणाम है। यह शोध पूजा श्रीवास्तव द्वारा एक किये गए तथ्यों एवं आकड़ो पर आधारित है। इसके अन्तर्गत वैज्ञानिक तथा पद्धति शास्त्रीय रूप में तथ्यों एवं आकड़ो का प्रस्तुतिकरण उनका स्वतः प्रयास है।

मैं, पूजा श्रीवास्तव के इस कार्य से पूर्ण रूप से संतुष्ट हूँ तथा इस शोध-प्रबन्ध को पी-एच0डी0 उपाधि हेतु परीक्षणार्थ सम्प्रेषित करने के लिए अनुमोदित करता हूँ।

दिनांक:

स्थान:

शोध निर्देशक
डॉ0 मनोज कुमार सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग

आभार

आज शोध प्रबंध के रूप में अपनी साधना व मेहनत को साकार होते देखकर मेरे हृदय में जो आनन्द की अनुभूति हो रही है, उसकी अभिव्यक्ति मैं शब्दों में वर्णित करने में असमर्थ महसूस कर रही हूँ। इस सफलता के लिए सर्वप्रथम मैं शक्तिस्वरूपा माँ सरस्वती को कोटिशः नमन करते हुए अपने आभार की अभिव्यक्ति प्रस्तुत कर रही हूँ ।

सर्वप्रथम, मैं विश्वव्यापी शक्तिस्वरूपा के चरणों में स्वयं को समर्पित करते हुए प्रार्थना करती हूँ जिसने अपनी कृपा से मुझे शोध कार्य को सफल करने की प्रेरणा दी साथ ही साथ विकट से विकट परिस्थितियों में अपनी असीम शक्ति व कृपा से मुझे अपने कार्य को पूर्ण करने व आगे बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित किया और लड़खड़ाते कदम में साहस का संचार प्रवाहित किया।

मैं, महर्षि सूचना प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के प्रति आभार प्रकट करती हूँ। यह मेरा सौभाग्य है कि मुझे इस विश्वविद्यालय द्वारा विद्यावारिधि उपाधि प्राप्त करने का अवसर मिला। विश्वविद्यालय के सहयोग के लिए आभारी हूँ।

मैं, श्रद्धेय गुरू डॉ0 मनोज कुमार सिंह, हिंदी विभाग, महर्षि सूचना प्रौद्योगिकी लखनऊ एवं पुस्तकालयाध्यक्ष लखनऊ विश्वविद्यालय सहित समस्त प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष गुरूजनों को नमन व आभार प्रकट करती हूँ, जिन्होंने समय-समय पर आवश्यक दिशानिर्देश एवं सुझावों के माध्यम से मेरा मार्गदर्शन किया।

इस शोध यात्रा में सफल बनाने के लिए मेरे कई सहपाठियों ने अपना अमूल्य समय देकर मुझे ऋणी बना दिया। मैं उन सभी सहपाठियों को आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने मेरे शोध कार्य में मेरा सहयोग किया। मैं अपने परिवार के सभी सदस्यों के प्रति आभारी हूँ जिन्होंने कठिन परिस्थितियों में भी प्रोत्साहित किया ।

कार्य के प्रति पूर्ण निष्ठा और समर्पण होने के बावजूद उनमें यदा-कदा त्रुटियाँ हो सकती हैं। इन त्रुटियों के लिए क्षमा याचना के साथ मैं अपनी साधना का प्रसून माँ सरस्वती के चरण कमलों में अर्पित करती हूँ। विद्वानजन अपने अमूल्य सुझावों से मेरा मार्गदर्शन करेंगे, इस विश्वास व आशा के साथ यह शोध प्रबन्ध प्रस्तुत है।

दिनांकः

पूजा श्रीवास्तव,
हिंदी विभाग
महर्षि सूचना प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय

सारांश

पूर्वोत्तर भारत का हिंदी कथा साहित्य आदिवासी समाज की समृद्ध सांस्कृतिक धरोहर, सामाजिक संघर्षों और आधुनिकता के प्रभावों की गहरी छानबीन करता है। यह साहित्य आदिवासी पहचान, परंपराओं और उनके समक्ष आने वाली चुनौतियों को समझने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है।

कहानियों में आदिवासी समुदायों और उनके प्राकृतिक परिवेश के बीच गहरे संबंध को उजागर किया गया है। भूमि और संसाधनों के लिए संघर्ष, आधुनिकता के प्रभाव, और उनके जीवन में परिवर्तन की परतें कहानी के केंद्र में होती हैं, जो आदिवासी लोगों की लचीलापन और अनुकूलता को दर्शाती हैं। इसके अलावा, यह साहित्य आदिवासी महिलाओं की भूमिका पर भी प्रकाश डालता है, उनकी ताकत, संघर्ष और समाज में उनके योगदान को प्रमुखता से प्रस्तुत करता है।

समृद्ध कथानक और जीवंत चरित्र चित्रण के माध्यम से, पूर्वोत्तर का हिंदी कथा साहित्य न केवल आदिवासी समुदायों की आवाज़ को संरक्षित करता है, बल्कि उनकी समस्याओं और आकांक्षाओं के प्रति जागरूकता भी फैलाता है। यह एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक दस्तावेज है, जो पाठकों को पूर्वोत्तर भारत के आदिवासी समाज के विविध अनुभवों और चुनौतियों से जोड़ता है।

पूर्वोत्तर भारत का हिंदी कथा साहित्य आदिवासी समाज की जीवनशैली, संस्कृति और संघर्षों को दर्शाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस साहित्य में आदिवासी लोगों की पहचान, परंपराएँ और उनके सामाजिक एवं आर्थिक मुद्दे केंद्र में होते हैं। कहानियाँ अक्सर भूमि, संसाधनों और अधिकारों के लिए चल रहे संघर्षों को उजागर करती हैं, जो आदिवासियों की जीवंतता और साहस को दर्शाती हैं। प्राकृतिक परिवेश और उसके साथ आदिवासियों के गहरे संबंध को भी महत्वपूर्ण रूप से चित्रित किया गया है।

इसके अलावा, साहित्य में आदिवासी महिलाओं की भूमिका को भी प्रमुखता दी गई है, जो उनकी ताकत और सामाजिक स्थिति को प्रकट करती है। इस प्रकार, पूर्वोत्तर का हिंदी कथा साहित्य न केवल आदिवासी जीवन की विविधताओं को उजागर करता है, बल्कि उनकी आवाज़ और संघर्षों को भी पाठकों के सामने लाता है, जिससे यह एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक दस्तावेज बन जाता है।

कथाओं में आदिवासी जीवन की जटिलताएँ, उनके रीति-रिवाज, परंपराएँ और संघर्षों को बारीकी से चित्रित किया गया है। आदिवासी समुदायों की पहचान और उनके अस्तित्व की लड़ाई अक्सर केंद्रीय विषय होते हैं। कई कहानियों में भूमि, संसाधनों और अधिकारों की लड़ाई को दिखाया गया है। इन संघर्षों के माध्यम से आदिवासी समाज की पराधीनता और शोषण को उजागर किया गया है। पूर्वोत्तर के आदिवासी समाज में भाषाई विविधता है, और हिंदी कथा साहित्य इस विविधता को समेटने का प्रयास करता है। लेखकों ने विभिन्न भाषाओं और बोलियों का समावेश करते हुए स्थानीय रंग भरने की कोशिश की है।

कहानियों में प्राकृतिक सौंदर्य और जीवन के साथ आदिवासियों के गहरे संबंध को दर्शाया गया है। यह उनके जीवन का एक अभिन्न हिस्सा है और इसके संरक्षण की आवश्यकता पर जोर दिया गया है। आधुनिकता का प्रभाव और उसके कारण आदिवासी जीवन में आ रहे परिवर्तनों का भी समावेश किया गया है। यह बदलाव उनके पारंपरिक जीवनशैली के साथ संघर्ष को जन्म देता है।

प्रस्तावना

प्रस्तुत शोध-प्रबंध का शीर्षक है- **'पूर्वोत्तर विषयक हिंदी कथा साहित्य: आदिवासी समाज के सन्दर्भ में'** है। जैसा कि हमें ज्ञात है कि भारतीय समाज विभिन्न समुदायों का समुच्चय है। मतलब कि यह समाज कई समुदायों से मिलकर बना है। वर्षों से यहाँ अनेक समुदाय आपस में प्रेमपूर्वक एक साथ रहते चले आ रहे हैं तथा अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं। इसी भारतीय समाज में ऐसे कुछ समुदाय या वर्ग भी हैं जो वर्षों से उपेक्षित, तिरस्कृत, वंचित और शोषित हैं। जिनमें 'आदिवासी' एक महत्त्वपूर्ण समुदाय है।

वर्तमान समय में 'आदिवासी' समुदाय को हाशिये का समाज कहा जा रहा है। यह वर्ग हमेशा समाज की परिधि पर अपना जीवन- निर्वाह करने पर विवश हुआ है और इसे केन्द्रीय भूमिका प्राप्त नहीं हुई है। यह स्वस्थ समाज की तमाम बुनियादी सुविधाओं से वंचित रहा है। विकास प्रक्रिया में यह समाज उपेक्षित रहा है। इसका एक मुख्य कारण यह है कि विकास की दौड़ में ये लगातार पिछड़ते चले गये हैं। विकास की दौड़ में ये इतना पीछे छूट गये हैं कि संकटपूर्ण जीवन जीने को अभिशप्त हैं। ये विस्थापन के शिकार हैं। वर्तमान में ऐसी अनेक घटनाएँ देखने को मिलती हैं, जहाँ इनके साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार किया जाता है। यद्यपि आज इस मानसिकता में कुछ परिवर्तन होता दिखाई दे रहा है। आदिवासी समुदाय के एक सदस्य का महामहिम राष्ट्रपति बनना बहुत बड़े परिवर्तन की ओर संकेत करता है।

जो समाज में होता है वही कलात्मक रूप से साहित्य में चित्रित होता है। समाज को सुंदर ढंग से साहित्य में प्रतिफलित करने का कार्य करके साहित्यकार हमारी श्रद्धा का पात्र बनते हैं। आधुनिक काल में कथा-साहित्य साहित्य की सबसे लोकप्रिय विधा है। कथा साहित्य के अंतर्गत उपन्यास और कहानी का विवेचन होता है। जानकार बताते हैं कि जब व्यक्ति काम करते-करते थक जाता है, तब उसे संगीत सुनना चाहिये या कथा - साहित्य (Fiction) पढ़ना चाहिये। ये व्यक्ति का मनोरंजन करके मस्तिष्क को तरोताजा करते हैं। जब रेडियो, टी. वी., इंटरनेट नहीं था, तब लोग कहानी और उपन्यास पढ़कर ही अपना समय व्यतीत करते थे। लोगों का मनोरंजन करने के साथ-साथ कथा - साहित्य समाज की समस्याओं एवं विषमताओं को भी पाठकों के सामने लाकर समाज के हित में कार्य करने के लिये उन्हें प्रेरित करता है।

आदिवासी समाज का अध्ययन-अध्यापन वर्तमान में ज्ञान के विभिन्न अनुशासनों के अंतर्गत किया जा रहा है। परिणामस्वरूप हमें इनके जीवन-दर्शन और मूल्यबोध की अनेक जानकारियाँ प्राप्त होने लगी हैं। जहाँ तक हिन्दी का प्रश्न है यह साहित्य लगभग हजारों साल के जीवन स्पंदन को अपने अंदर समेटे हुए है। इनमें नाना विषयों पर विचार-विमर्श हुआ है। हम सब के लिए यह सुखद विषय है कि विचार-विमर्श का यह सिलसिला कालांतर से आज भी जारी है। किन्तु जब हिन्दी साहित्य के विपुल भंडार को खंगालते या उसके पन्नों को उलटते हैं तो यह स्पष्ट दिखाई देता है कि हिन्दी साहित्य में पूर्वोत्तर भारत विस्मृत-सा रहा है। इस बात को इस ढंग से कहा जा सकता है कि हिन्दी साहित्य लेखन की दृष्टि से पूर्वोत्तर भारत सदा से उपेक्षित एवं अछूता रहा है।

साथ ही यह भी सत्य है कि हिन्दी साहित्य लेखन में आदिवासी जीवन और भी अधिक अनुपस्थित रहा है। ध्यान देने की बात यह है कि पूर्वोत्तर भारत को लेकर हिन्दी साहित्य में लेखन कार्य का आरंभ बीसवीं सदी से हुआ। किंतु इस समय को केवल आरंभ के रूप में ही देखना सही होगा। वास्तव में इस समय जो रचनाएँ मिलती हैं उनमें आदिवासी जीवन की झलक नहीं के बराबर है। वास्तविक रूप से इक्कीसवीं सदी में पूर्वोत्तर भारत के विषय में लेखन हुआ है और उनमें आदिवासी जीवन उभर कर सामने है।

कथा साहित्य में पूर्वोत्तर भारत की आदिवासी अस्मिता एवं अस्तित्व के प्रश्न को मुख्य रूप से उठाया गया है। इसके साथ ही पूर्वोत्तर भारत के आदिवासी समाज की मुख्य चिंता और समस्याओं को अभिव्यक्ति मिली है । आज अनेक ऐसी रचनाएँ लिखी जा रही हैं जो पूर्वोत्तर भारत के आदिवासी विमर्श को केंद्र में लाने की आधारभूमि बनी हैं । अर्थात् पूर्वोत्तर भारत के आदिवासी जीवन को स्वर दे रही हैं। जो उनके जीवन की हलचलों एवं समस्याओं को सामने ला रही हैं। अतः यह शोध प्रबंध पूर्वोत्तर भारत केंद्रित हिन्दी कथा साहित्य में विद्यमान आदिवासी विमर्श के सूत्रों के माध्यम से आदिवासी जीवन के आधारभूत प्रश्नों की जाँच-पड़ताल करने की कोशिश है। उनके स्वरों को विश्लेषित करने के उद्देश्य से यह शोध प्रबंध आपके समक्ष संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत है ।

इस अध्ययन का उद्देश्य यह देखना है कि पूर्वोत्तर भारत और आदिवासी जीवन को हिंदी कथा-साहित्य में कितनी सफलता से चित्रित किया गया है। इस चित्रिण में जो खूबियाँ हैं उन्हें सामने लाना और अगर कुछ त्रुटियाँ हैं, तो उन्हें रेखांकित करना भी हमारा उद्देश्य है । इन पुस्तकों में पूर्वोत्तर भारत के जनजीवन के जिन पक्षों पर प्रकाश नहीं पड़ा है उनको उभारकर हिंदी लेखकों को उन पक्षों को अपनी रचना का विषय बनाने के लिये प्रेरित करना भी हमारा उद्देश्य है ।

अध्ययन की पद्धति विश्लेषणात्मक है । अवतरण एवं ग्रंथसूची MLA (Modern Language Association) में प्रस्तुत किया गया है। अध्ययन में हिंदी, अंग्रेजी, असमीया ग्रंथों के अतिरिक्त कुछ शोध- प्रबंधों एवं इंटरनेट का भी उपयोग हुआ है।

अध्ययन की सुविधा के लिये मैंने शोध-प्रबंध को छः अध्यायों में बाँटा है। इसका संक्षिप्त विवेचन निम्नलिखित है-

इस शोध-प्रबंध के प्रथम अध्याय का शीर्षक- 'पूर्वोत्तर का आदिवासी समाज' है । इस अध्याय के अंतर्गत पूर्वोत्तर के समाज की सामाजिक संरचना एवं स्थिति को स्पष्ट करते हुए उनके इतिहास को समझने का प्रयास किया गया है । यहाँ पूर्वोत्तर की संस्कृति को भी विश्लेषित एवं विवेचित करने का प्रयत्न किया गया है। इस अध्ययन के पश्चात् इस परिणाम पर पहुँचते हुए कहना उचित जान पड़ता है कि पूर्वोत्तर देश का एक ऐसा भाग है जो प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक रूप से सर्वाधिक समृद्ध है । पूर्वोत्तर के सभी राज्य एक-दूसरे से कई दृष्टियों में भिन्न हैं और उनकी संस्कृति के अवयव भी आपस में भिन्नता रखते हैं। यह विविधता ही पूर्वोत्तर की प्रमुख विशेषता एवं ताकत है। भारत के बारे में कहा जाता है कि यह देश विविधता में एकता रखने वाला देश है। उसे इस पूर्वोत्तर में सहजतापूर्वक देखा जा सकता है । यहाँ भारत के सभी क्षेत्रों के लोगों एवं उनकी वैविध्यपूर्ण संस्कृति को देखा जा सकता है। यह कहना गलत न होगा कि पूर्वोत्तर भारत विविध जनजातियों, विविध भाषाओं एवं विविध संस्कृतियों का एक ऐसा पुष्प गुच्छ है, जिसमें अनेक प्रकार के पुष्प हैं। अनेक प्रकार के रंग हैं । अनेक प्रकार की सुगंध है। निस्संदेह यह कहा जा सकता है कि पूर्वोत्तर हमारे देश की आत्मा है जिसके बिना पूर्ण भारत की कल्पना करना संभव नहीं है।

पूर्वोत्तर के आदिवासी समुदायों की यदि चर्चा करें तो यह स्पष्ट होता है कि सभी समुदाय अपने आप में विशिष्ट एवं भिन्न सांस्कृतिक मूल्यों वाले होते हैं । उदहारण के तौर पर देखा जा सक है कि खासी जनजाति मेघालय की खासी पहाड़ियों में निवास करती है। यह जनजाति मातृवंशीय है । विवाह के पश्चात् पुरुष अपनी पत्नी के घर चला जाता है। स्त्रियाँ धार्मिक एवं आर्थिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण पदों को धारण करती हैं। "खासी परिवार का केन्द्र बिंदु माँ होती है वही परिवार की देख- रेख करती है । संपत्ति की स्वामिनी होती है। निवास स्थान मातृस्थानिक है। परिवार में मामा की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। वह एक परामर्शदाता के रूप में माना जाता है। माँ की तरह परिवार की सबसे

छोटी पुत्री की स्थिति महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। वह परिवार में धार्मिक कार्यों का संचालन करती है तथा परिवार के पुरोहित का कार्य भी करती है। परिवार की संपत्ति भी उसे उत्तराधिकार में प्राप्त होती है। [5]

नागा समुदाय अनेक समूहों में विभाजित है। प्रत्येक समूह की भाषा भिन्न है। साथ ही सबकी एक स्वतंत्र पहचान है । ये मुख्य रूप से नागालैंड एवं मणिपुर आदि में निवास करते हैं । ये लोग स्थायी रूप से अपने गाँवों में रहते हैं । इनके गाँव काफ़ी बड़े-बड़े होते हैं । एक शताब्दी पूर्व ऐतिहासिक प्रमाण बताते हैं कि इनके पाँच सौ परिवारों तक के एक गाँव होते थे। गाँवों की बनावट सुरक्षा की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। नागाओं में युवागृह जिन्हें 'मोरंग' नाम से जाना जाता है, पर्याप्त लोकप्रिय थे । मोरंग आवास काफ़ी महत्त्वपूर्ण होता था । मोरंग की स्थिति से गाँव की स्थिति का आकलन किया जा सकता था। एक अच्छे सुसज्जित मोरंग का तात्पर्य था कि गाँव स्वस्थ और सम्पन्न है। मोरंग में नवयुवकों को जनजातीय परम्पराओं की सीख दी जाती थी । पुरानी पीढ़ियों के शौर्य एवं परम्पराओं से अवगत कराया जाता था । मोरंग एक पाठशाला होने के साथ-साथ एक मनोरंजन का केन्द्र स्थल भी होता था । जहाँ नवयुवकों को बड़े समूह के साथ सामंजस्य करने योग्य बनाया जाता था । इसके अतिरिक्त युद्ध, सुरक्षा तथा विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण भी प्रदान किये जाते थे । अनुशासनहीनता पर उन्हें दण्डित भी किया जाता था। पूर्वोत्तर भारत में अनेक आदिवासी समुदाय निवास करते हैं और वे आपस में भिन्नता लिये हुए हैं किन्तु अधिक विस्तार न हो इसलिए यहाँ कुछ ही समुदायों के बारे में उल्लेख किया गया है।

इस अध्ययन का द्वितीय अध्याय 'पूर्वोत्तर विषयक हिन्दी कथा साहित्य: राजनीतिक एवं आर्थिक संदर्भ' है। प्रस्तुत अध्याय में पूर्वोत्तर के आदिवासी समाज से जुड़े राजनीतिक और आर्थिक पहलुओं पर चर्चा की गयी है। यह भी जानने का प्रयत्न किया गया है कि राजनीतिक और आर्थिक संदर्भ एवं आदिवासी विमर्श का आपस में क्या संबंध है। कहने का अभिप्राय यह है कि आदिवासी विमर्श पर राजनीतिक और आर्थिक गतिविधियों ने क्या असर डाला है । इस कार्य में पूर्वोत्तर विषयक हिन्दी कथा साहित्य को आधार बनाया गया है । पूर्वोत्तर विषयक हिन्दी कथा साहित्य में कई उपन्यास हैं जैसे 'मुक्ति', 'उत्तर-पूर्व', 'जहाँ बाँस फूलते हैं', 'आहुति', 'देश भीतर देश' आदि। जिनमें पूर्वोत्तर के आदिवासी समाज में घटित आर्थिक और राजनीतिक घटनाओं को देखा जा सकता है। इन उपन्यासों में भारतीय राजनीतिक व्यवस्था का सजीव चित्रण किया गया है । जिस तरह से भारतीय राजनीति पूर्वोत्तर के लिए दोहरा रवैया अपनाती रही है, उन सब का सिलसिलेवार वर्णन इन उपन्यासों में हुआ है। 'जहाँ बाँस फूलते हैं' उपन्यास में उपन्यासकार ने एक स्थल पर लिखा है कि "केंद्रीय सरकार के गृह मंत्रालय का कोई अधिकारी, जो गाँव-गाँव में प्रभावशाली लोगों से मिलकर आश्वासन दे रहा है कि जंगल से लौट आए लोगों को पकड़ा नहीं जाएगा और जो हथियार के साथ सरकार को सरेंडर करेगा उसके पुनर्वास के लिए सरकार पूरी व्यवस्था करेगी ।" [10]

किन्तु प्रश्न यह है कि कितनों को पुनर्वास मिला और जिनको मिला है वे कितना सम्मानपूर्वक जीवन जी रहे हैं ? आज भी नीति-निर्माताओं के समक्ष यह प्रश्न उपस्थित है । अध्ययन के उपरांत यह तथ्य सामने आया है कि यदि आदिवासी समाज में भारतीय राजनीति के आदर्श को स्थापित करना है तो उनके समाज के लोगों को हिस्सेदारी देनी होगी। जब उनके समाज के लोग अपने जीवनानुभव से कानून का निर्माण करेंगे तब वह फिर अधिक आदिवासी हित में होगा । जैसा कि 'मुक्ति' उपन्यास में इस बात का पर दृष्टि गई है कि किस तरह से गोपीनाथ बोरदोलोई ने अपनी सूझ-बूझ से पर्वतीय क्षेत्रों में निवास करने वाली जनजातियों के लिए संविधान में स्थान सुरक्षित कराया ।

वर्तमान में पूर्वोत्तर के लिए ऐसे हस्तक्षेप की आवश्यकता है । तभी आदिवासी समाज को मुख्यधारा के समांतर खड़ा किया जा सकता है। अन्यथा एक-दूसरे पर इसी प्रकार अविश्वास बना रहेगा । इस अध्याय के दूसरे उप-अध्याय पर विचार करने के पश्चात् यह समझना

मुश्किल नहीं रह जाता है कि आर्थिक संदर्भ आदिवासी समाज को कितना प्रभावित करता है। जैसा कि हमें यह ज्ञात है कि आदिवासी समाज के लिए वर्षो से प्रकृति से संबंधित जंगल, पहाड़, नदियाँ उनकी आय की स्रोत रही हैं। प्रकृति के इन्हीं नाना रूपों से वे अपने लिए खाद्य सामग्री अर्जित करते रहे हैं । जिनमें शिकार करना, मछली मारना, पशुपालन, झूम खेती मुख्य हैं। किंतु भूमंडलीकरण तथा पूँजीवादी व्यवस्था के दबाव में जब पूरा विश्व एक बाजारवादी संस्कृति में परिवर्तित हो गया है। उससे आदिवासी समाज भी अछूता नहीं रहा । इस बाजारवादी संस्कृति ने सरकारों द्वारा दोहन की नीति मार्ग प्रशस्त किया ।

एक स्तर पर उससे प्रभावित होकर सरकारों ने पूर्वोत्तर के विकास के नाम पर दोहन करना आरंभ कर दिया । अपनी इस बात को रमणिका गुप्ता के माध्यम से कहना अधिक श्रेयस्कर होगा । वह लिखती हैं कि "भारत में आदिवासी जनसमूहों का विस्थापन व पलायन सदियों से ही जारी है । परंतु इधर विकास के नाम पर बनायी गयी नीतियों के कारण वे केवल अपनी जमीनों, जंगलों, संसाधनों व गाँवों से ही बेदखल नहीं हुए, बल्कि उनके नैतिक मूल्यों, नैतिक अवधारणाओं, जीवन शैलियों, भाषाओं एवं संस्कृति से भी इनके विस्थापन की प्रक्रिया तेज हो गयी है । [11]

यह भी यथार्थ है कि विस्थापन की प्रक्रिया ने न केवल उनकी सामाजिक, सांस्कृतिक पद्धतियों को प्रभावित किया है। बल्कि उनके जीवनयापन के लिए जो मुख्य आर्थिक स्रोत हुआ करते थे उनसे उनको दूर कर दिया है।

अध्ययन में एक हिस्सा यह भी है कि पूर्वोत्तर के आदिवासी समाज की आर्थिक स्थिति को समझा जाए। इस पर जब दृष्टि डाली गई तो पाया गया कि आदिवासी समाज की आर्थिक स्थिति अत्यंत ही दयनीय है । 'जंगली फूल' जैसी रचनाओं में इसे देखा जा सकता है। जिसका वर्णन इ प्रकार है कि "तानी ने देखा उसे । हड्डियों का ढाँचा था वह । तन पर कोई वस्त्र नहीं था । वे सारे लोग ही नंग-धड़ंग थे । शरीर का हर अंग भोजन को पुकारता था ।" [12]

इस प्रकार कहा जा सकता है कि उनके अस्तित्व और अस्मिता में आर्थिक संदर्भ भी उत्तरदायी हैं। इसकी अवहेलना करना कठिन है ।

तृतीय अध्याय ' पूर्वोत्तर विषयक हिंदी साहित्य' है। जिसके अंतर्गत कथा - साहित्य, उपन्यास एवं कहानी की परिभाषा दी गयी है। साथ ही विवेच्य उपन्यासों एवं कहानियों का कालक्रमानुसार अलग अलग समीक्षा करने के बाद अन्य साहित्य के अंतर्गत पूर्वोत्तर भारत केंद्रित हिंदी कविता, निबंध, आलोचना, नाटक, लोक-साहित्य, जीवनी, इतिहास, गीत, यात्रावृत्त, अनुदित साहित्य की पुस्तकों से संबंधित तथ्य संकलित किया गया है।

प्रस्तुत शोध का चतुर्थ अध्याय 'पूर्वोत्तर विषयक हिन्दी लेखन' है । पूर्वोत्तर को लेकर हिन्दी में लिखी जा रही रचनाओं को इस अध्याय में जानने-समझने की चेष्टा की गयी है। हिन्दी लेखन के अंतर्गत हिन्दी साहित्य में पूर्वोत्तर लगभग अनुपस्थित सा दिखाई देता है। हिन्दी साहित्य के लम्बे इतिहास में पूर्वोत्तर विषयक रचनाएँ अत्यंत कम हैं। आधुनिक काल में पूर्वोत्तर को लेकर कुछ यात्रावृत्तांत, संस्मरण, कहानी, उपन्यास आदि लिखे गए हैं। इनके अतिरिक्त पूर्वोत्तर को लेकर कुछ कविताएँ भी लिखी गई हैं। कुछ ऐसे महत्वपूर्ण उपन्यास लिखे गए हैं, जिनमें अधिकांश लेखक यहाँ के आदिवासी समाज से संबंधित नहीं हैं। लेकिन उनके उपन्यासों में पूर्वोत्तर का समाज अपने वैविध्य

के साथ उपस्थित हुआ है। इन लेखकों में देवेन्द्र सत्यार्थी का 'ब्रह्मपुत्र', कृष्णचन्द्र शर्मा 'भिक्खु' का 'रक्तयात्रा', श्री प्रकाश मिश्र के 'जहाँ बाँस फूलते हैं', 'रूपतिल्ली की कथा' तथा महेद्रनाथ दुबे का 'मुक्ति', लालबहादुर वर्मा का 'उत्तर-पूर्व', श्रीधर पाण्डेय का 'आहुति', तथा जोराम यालाम नाबाम का 'जंगली फूल' आदि है । इसी प्रकार यात्रावृत्तांत की श्रेणी में कुछ महत्वपूर्ण रचनाएँ हैं, जिनमें अज्ञेय का 'अरे यायावर रहेगा याद', मृदुला गर्ग का कुछ अटके कुछ भटके', असगर वजाहत का 'रास्ते की तलाश में, अनिल यादव का 'वह भी कोई देश है महाराज', सावरमल सांगानेरिया का 'अरुणोदय की धरती पर ' तथा 'ब्रह्मपुत्र के किनारे-किनारे ' है । कुछ जोराम यालाम महत्वपूर्ण लेखकों ने कहानी की भी रचना की है, जिसमें से अज्ञेय का 'जयदोल', नाबाम का 'साक्षी है पीपल' है । अन्य विधाओं में भी पूर्वोत्तर से संबंधित रचनाएँ लिखी गई हैं। श्रीप्रकाश मिश्र का मौन पर शब्द, शब्द के बारीक तारों से', 'शब्द संभावनाएँ हैं' तथा 'मिअमाड' कविता संग्रह हैं।

पंचम अध्याय 'हिंदी कथा-साहित्य में चित्रित पूर्वोत्तर भारत का सामाजिक जीवन' को 'उपन्यासों में चित्रित पूर्वोत्तर भारत का सामाजिक जीवन' और 'कहानियों में चित्रित पूर्वोत्तर भारत का सामाजिक जीवन' इन दो भागों में विभाजित किया गया है । फिर इन दोनों भागों में पूर्वोत्तर भारत की समाज व्यवस्था, सामाजिक समस्या आदि को कुछ बिंदुओं में बाँटकर विश्लेषित किया गया है।

इस अध्ययन का षष्टम अध्याय का शीर्षक 'उपसंहार' है। इस अध्याय के अंतर्गत आदिवासी समाज के सन्दर्भ में पूर्वोत्तर विषयक हिन्दी कथा साहित्य को जाँच-परखकर एक सकारात्मक निष्कर्ष पर पहुँचने की कोशिश की गई है। किसी के लिए भी इन निष्कर्षों से सहमति - असहमति का प्रश्न सदैव बना रहेगा । यह संबाद की एक प्रक्रिया है और इस प्रक्रिया का मूल्यांकन बार-बार किया जाना चाहिए । यह हिन्दी साहित्य के रचनात्मक विकास के लिए जितना सुखद होगा। उतना ही आदिवासी समाज के नये-नये क्षेत्रों के लिए भी । इस शोध कार्य ने हिन्दी साहित्य के विपुल भंडार में थोड़ा भी योगदान दिया तो इसकी सार्थकता स्वतः सिद्ध होगी ।

अंत में ग्रंथसूची के अंतर्गत आधार ग्रंथ, सहायक ग्रंथ, कोश, शोध-प्रबंध और वेबसाइट की सूची प्रस्तुत की गयी है। इस अध्याय में जो उद्धरण रखे गये हैं उनमें स्थान आदि के नाम की वर्तनी एवं जगह-जगह प्रयुक्त लेखकों के नाम की वर्तनी मूल पुस्तक के अनुसार रखी गयी है।

अनुक्रमणिका

क्रम संख्या	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
1.	शीर्षक पेज	(i)
2.	प्रतिज्ञा-पत्र	(ii)
3.	प्रमाण-पत्र	(iii)
4.	आभार	(iv)
5.	सारांश	(v)
6.	प्रस्तावना	(vi-x)
7.	अनुक्रमणिका	(xi)
अध्याय 1	पूर्वोत्तर का आदिवासी समाज	1-15
1.1	परिचय	1
1.2	सामाजिक स्थिति	1
	1.2.1 विवाह	2
	1.2.2 पूर्वोत्तर की जनजातियों की पारिवारिक संरचना	3
	1.2.2.1 गारो जनजाति	3
	1.2.2.2 खासी जनजाति	3
	1.2.2.3 गोत्र जनजाति	4
	1.2.2.4 नागा जनजाति	4
1.3	सांस्कृतिक परिवेश	5
	1.3.1 असम	6
	1.3.2 नागालैंड	7
	1.3.3 मणिपुर	7
	1.3.4 मेघालय	8

	1.3.5 त्रिपुरा	8
	1.3.6 अरुणाचल प्रदेश	9
	1.3.7 मिजोरम	10
	1.3.8 सिक्किम	10
1.4	ऐतिहासिक अनुशीलन	11
	1.4.1 असम	11
	1.4.2 नागालैंड	13
	1.4.3 मणिपुर	13
	1.4.4 मेघालय	14
	1.4.5 त्रिपुरा	14
	1.4.6 अरुणाचल प्रदेश	14
	1.4.7 मिजोरम	15
अध्याय 2	पूर्वोत्तर विषयक हिन्दी कथा साहित्य: राजनीतिक एवं आर्थिक संदर्भ	16-30
2.1	परिचय	16
2.2	राजनीतिक संदर्भ	17
2.3	आर्थिक संदर्भ	23
अध्याय तृतीय	पूर्वोत्तर विषयक हिंदी साहित्य	31-52
3.1	परिचय	31
3.2	उपन्यास साहित्य	32
	3.2.1 ब्रह्मपुत्र (1956)	32
	3.2.2 मुक्तावती (1958): बलभद्र ठाकुर	32
	3.2.3 राह और रोड़े (1960): छगन लाल जैन	33

	3.2.4 जय आइ असम (1983): नवारुण वर्मा	33
	3.2.5 जहाँ बाँस फूलते हैं (1996): श्रीप्रकाश मिश्र	33
	3.2.6 मुक्ति (1999): डॉ. महेंद्र नाथ दुबे	34
	3.2.7 रूपतिल्ली की कथा (2005): श्रीप्रकाश मिश्र	34
	3.2.8 आहुति (2008): श्रीधर पान्डेय	34
	3.2.9 उफ़्फ़ (2010): प्रमोद कुमार तिवारी	35
	3.2.10 देश भीतर देश (2012): प्रदीप सौरभ	35
	3.2.11 लोहित (2016): अनिता सभरवाल	35
	3.2.12 सियांग के उस पार (2018) दयाराम वर्मा	36
	3.2.13 जंगली फूल (2019): जोराम यालाम	36
	3.2.14 मिनाम (2020): मोर्जुम लोयी	36
3.3	कहानी साहित्य	37
	3.3.1 अज्ञेय की कहानियाँ	37
	3.3.1.1 हीली- बोन् की बत्तखें	37
	3.3.1.2 मेजर चौधरी की वापसी	37
	3.3.1.3 जयदोल	37
	3.3.1.4 नगा पर्वत की एक घटना	38
	3.3.1.5 नीली हँसी	38
	3.3.2 छगन लाल जैन की कहानियाँ	38
	3.3.2.1 गरीब हूँ तो क्या?	38
	3.3.2.2 हँसते-हँसते जीना	38
	3.3.3 उदयभानु पाण्डेय की कहानियाँ	39
	3.3.3.1 हर्ता कुँवर का वसीयतनामा	39
	3.3.3.2 माछखोवा में महामास्टर	39

		3.3.3.3 नगीना	39
		3.3.3.4 भौंरा रे, हम परदेसी लोग	39
		3.3.3.5 श्मशान में श्वपच	40
		3.3.3.6 स्थितप्रज्ञ	40
		3.3.3.7 मित्रावरुणौ	40
		3.3.3.8 और जहाज डूब गया	40
	3.3.4	रीतामणि वैश्य की कहानियाँ	41
		3.3.4.1 व्यूह	41
		3.3.4.2 पतंगा	41
		3.3.4.3 मृगतृष्णा	41
		3.3.4.4 बंधन	41
		3.3.4.5 एक दिन की डायरी	42
		3.3.4.6 सुकून	42
		3.3.4.7 हरकांत की पत्नी	42
		3.3.4.8 लोकटाक कब तक!	42
		3.3.4.9 बंजारन	43
		3.3.4.10 आस्था	43
		3.3.4.11 गुरु दक्षिणा	43
		3.3.4.12 गरति	43
	3.3.5	जोराम यालाम की कहानियाँ	44
		3.3.5.1 साक्षी है पीपल	44
		3.3.5.2 उसका नाम यापी था	44
		3.3.5.3 यासो	44
		3.3.5.4 चुनौती	44

	3.3.5.5 क्या सच में वे कभी मिले भी थे	44
	3.3.5.6 नदी	45
	3.3.5.7 कामेश्वर बरुआ हालुवा बन गया	45
	3.3.5.8 वह बरसात की एक रात	45
	3.3.5.9 मै यामी हूँ	45
	3.3.5.10 क्या कहेंगे लोग	45
	3.3.6 अन्य कहानियाँ	45
3.4	अन्य साहित्य	46
	3.4.1 कविता	46
	3.4.2 निबंध	46
	3.4.3 आलोचना	47
	3.4.4 नाटक	47
	3.4.5 लोक साहित्य	47
	3.4.6 जीवनी	48
	3.4.7 इतिहास	48
	3.4.8 गीत	48
	3.4.9 यात्रावृत्त	49
	3.4.10 संस्मरणात्मक ग्रंथ	49
	3.4.11 डायरी साहित्य	49
	3.4.12 अनूदित साहित्य	49
	3.4.13 पूर्वोत्तर की हिंदी पत्र-पत्रिकाएँ	51

अध्याय चतुर्थ	पूर्वोत्तर विषयक हिन्दी लेखन	53-61
4.1	परिचय	53
4.2	यात्रा वृत्तांत	53
4.3	संस्मरण	55
4.4	कहानियाँ	55
4.5	कविता	57
4.6	उपन्यास	58
4.7	अन्य गद्य विधाएँ	59
अध्याय पंचम	हिंदी कथा-साहित्य में चित्रित पूर्वोत्तर भारत का सामाजिक जीवन	62-102
5.1	परिचय	62
5.2	हिंदी उपन्यासों में चित्रित पूर्वोत्तर भारत का सामजिक जीवन	62
	5.2.1 सामासिक समाज	62
	5.2.2 स्त्री की स्वतंत्रता एवं शोषण	65
	5.2.3 बलात्कार और वैश्यावृत्ति	71
	5.2.4 प्रेम एवं विवाह	74
	5.2.5 शिक्षा	86
	5.2.6 दास प्रथा	90
	5.2.7 नशाखोरी	92
5.3	कहानियों में चित्रित पूर्वोत्तर भारत का सामाजिक जीवन	93
	5.3.1 स्त्री की स्वतंत्रता	94
	5.3.2 बलात्कार और वैश्यावृत्ति	96

	5.3.3 विवाह	97
	5.3.4 शिक्षा का प्रचार-प्रसार	99
	5.3.5 मातृसत्तात्मक समाज	101
अध्याय षष्टम	उपसंहार	103-106
	संदर्भ सूची	107-111

प्रथम अध्याय

पूर्वोत्तर का आदिवासी समाज

1.1 परिचय

पूर्वोत्तर के जनजातीय समाज अन्य भारत के जनजातीय समाज से काफ़ी भिन्न हैं । दरअसल पूर्वोत्तर का जनजातीय समाज भारत के अन्य समाज से अलग-थलग रहा है। इनके आपस में जुड़ाव में काफ़ी अंतराल रहा है । अत: भारत के अन्य समाजों के साथ ये जनजातियाँ सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक रूप से नहीं जुड़ पायीं । अंग्रेजों ने भी इनको भारत के अन्य समाजों से अलग रखा । जिस कारण ये भारत के अन्य समाजों के साथ जुड़ने में झिझक एवं संकोच करते रहे हैं । परंतु आज स्थिति थोड़ी बदलती दीख रही है। इसके पीछे कई कारण उत्तरदायी हैं। मसलन कि रोजगार, शिक्षा, व्यापर, शादी-ब्याह आदि के कारण पूर्वोत्तर के लोग अन्य समाजों से जुड़ रहे हैं ।

पूर्वोत्तर भारत जनजातीय जनसंख्या की दृष्टि से समृद्ध रहा है। यहाँ प्रमुख रूप से जनजातीय समुदाय अपना जीवन यापन करते हैं। परंतु असम और त्रिपुरा के संदर्भ में यह बात पूर्णतः सत्य नहीं है । दरअसल असम और त्रिपुरा में स्थिति मिली-जुली दिखाई देती है। यहाँ लगभग पूर्वोत्तर में सौ से अधिक जनजातियाँ एवं उप-जनजातियाँ निवास करती हैं। सभी जनजातियों का समाज एक-दूसरे से भिन्न है । इसलिए उनकी संस्कृति में विविधता लक्षित की जा सकती है । बहुत सारी विविधताओं के बावजूद इनमें कहीं न कहीं एकरूपता भी दिखाई देती है। यह एकरूपता किस रूप में मौजूद है यह विचारणीय प्रश्न है । अगर ऐतिहासिक दृष्टि से विचार करें तो सभी जनजातियों का अपना इतिहास है। इतिहास का अवलोकन करने पर कहना आसान है कि ये सभी एक-दूसरे से संघर्ष करते हुए एवं आपस में एक-दूसरे से सीखते हुए आगे बढ़ रही हैं।

पूर्वोत्तर में अनेक रंग की संस्कृतियों की भरमार है। बहुत सी संस्कृतियाँ यहाँ बिखरी पड़ी हैं। चूँकि यहाँ की सामाजिक संरचना में अनेक समुदायों का योगदान है । यहाँ के सभी समुदाय अपने आप में विशिष्ट स्थान रखते हैं। पूर्वोत्तर के आठ विभिन्न राज्यों में रहने वाले लोग भिन्न प्रजातियों के हैं। उनकी भाषाओं और बोलियों में बहुत अंतर है। इसके साथ ही सभी समुदायों के अपने अलग-अलग सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्य हैं। परंपरा से लेकर रीति-रिवाज, खान-पान, लोक - विश्वास एवं सामाजिक मान्यताएँ इतनी भिन्न है कि ये आपस में एक-दूसरे को समझने में कठिनाई का सामना करते हैं । इनकी इस विविधता और विशेषता को पूर्वोत्तर की शोभा मानना चाहिए। सब के अलग स्वभाव एवं मान्यताएँ हैं, इसलिए सभी को एक ही नियम के अनुसार नहीं चलाया जा सकता । उनकी मान्यताओं के अनुरूप ही उचित नियम-कानून के माध्यम से ही उनकी समस्याओं को सुलझाया जा सकता है।

अतः इस अध्याय के अंतर्गत पूर्वोत्तर के समाज की सामाजिक संरचना एवं स्थिति को स्पष्ट करते हुए उनके इतिहास को समझने का प्रयास किया गया है। इस अध्याय में पूर्वोत्तर संस्कृति को भी विश्लेषित एवं विवेचित करने का प्रयत्न किया गया है।

1.2 सामाजिक स्थिति

भारत के विषय में कहा जाता है कि यह देश विविधताओं का देश है। जहाँ पर भिन्न बोली, भाषा, जाति, धर्म व सम्प्रदाय के लोग रहते हैं। सभी वर्गों की संस्कृति और रहन- सहन अलग हैं | भारत की भूमि इन सभी विविधताओं को समेटे हुए सहअस्तित्व की

जीवन-शैली को लेकर चल रही है। यहाँ का समाज इतना समावेशी है कि भिन्न-भिन्न समय पर आए बाहरी लोगों को इसने अपने भीतर समायोजित कर लिया। आज यह पहचान करना मुश्किल है कि कौन व्यक्ति शक, हूण या कुषाण आदि आक्रमणकारियों का वंशज है। सभी का खून यहाँ की मिट्टी में रच-बस गया है। इन सब से परे जब हम पूर्वोत्तर के समाज पर दृष्टि डालते हैं तो अलग ही परिदृश्य दिखाई देता है। इस परिदृश्य को देखने लिए समाज निर्माण के तत्त्वों पर संक्षिप्त प्रकाश डालना जरूरी है। दरअसल यही तत्त्व किसी भी समाज को नियंत्रित एवं परिचालित करते हैं।

किसी भी समाज का निर्माण उसमें रहने वाले लोगों से होता है। जिसमें लोग अपनी आवश्यकताओं के लिए एक-दूसरे से सम्पर्क स्थापित करते हैं। समाज के अंतर्गत सुरक्षा का भाव भी निहित होता है। "मेकिवर ने समाज की परिभाषा करते हुए इसको संबंधों का ताना-बाना अथवा जाल माना है। समाज में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से व्यक्ति भिन्न-भिन्न संबंधों के आधार पर एक- दूसरे से जुड़े हुए हैं। " [1]

1.2.1 विवाह

परिवार एक ऐसी व्यवस्था है जो लगभग हर समाज में अपना अस्तित्व रखती है। परिवार के लिए आवश्यक है कि स्त्री-पुरुष किसी एक व्यवस्था से आपस में जुड़ें। विवाह एक ऐसी संस्थापक व्यवस्था है जो परिवार की स्थापना या निर्माण करती है। परिवार किसी भी समाज की प्रारंभिक इकाई के रूप में होता है। विवाह प्रत्येक समाज की एक अनिवार्यता है। समाजशास्त्रियों का मानना है कि समाज द्वारा मान्यता प्राप्त तरीके से स्त्री- पुरुष की यौन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए, उसे एक संस्थागत ढंग से नियंत्रित करने एवं परिवार को स्थायी रूप देने के लिए विवाह का प्रारंभ हुआ।

भारत एवं पश्चिम के देशों में विवाह के अंतर्गत एक-दूसरे में पर्याप्त भिन्नता है। पश्चिम में प्रायः विवाह को एक ऐसा बंधन माना जाता है जिसका उद्देश्य मुख्यतः यौन संबंधों की पूर्ति करना है। जबकि भारत में विवाह एक धार्मिक बंधन या संस्कार है। लेकिन वहीं जनजातियों में विवाह को लेकर कुछ अलग मान्यताएँ हैं। एम. एम. लवानिया कहते हैं कि "भारतीय संस्कृति के प्रतिमानों के 'अनुसार विवाह से पूर्व लड़के-लड़कियों का यौन संबंध अमान्य है जबकि संसार की अनेक ऐसी जातियाँ एवं जनजातियाँ हैं जिनमें ऐसे प्रतिबंध नहीं हैं। " [2]

निःसंदेह विवाह वह प्राथमिक क्रिया है जिससे परिवार और समाज का निर्माण होता है। विवाह के अभाव में कोई ऐसी विकसित व्यवस्था नहीं है, जिसके बल पर परिवार और समाज को स्वस्थ ढंग से संचालित किया जा सके। विवाह को मुख्यतः दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। पहला 'एक विवाह' व्यवस्था तथा दूसरा 'बहु- हू-विवाह' व्यवस्था। एक विवाह व्यवस्था के अंतर्गत कोई भी व्यक्ति एक समय में एक ही जीवन साथी चुन सकता है। आदिवासी समाज के विषय में यह कहा जाता है कि इनके यहाँ एक विवाह व्यवस्था नहीं है। जबकि कुछ विद्वान मानते हैं कि भारतीय जनजातियों का अधिकांश हिस्सा एक विवाह प्रथा का पालन करता है। इस कथन के समर्थन में नदीम हसनैन के वक्तव्यों को सामने रखा जा सकता है। वे कमार जनजाति का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए लिखते हैं कि 'इस विवाद का खंडन करने के लिए अधिकांश पिछड़ी तथा आदिम जनजातियों में विवाह की कोई निश्चित योजना नहीं पायी जाती, कमार (मध्य प्रदेश) जैसी अनेक अत्यंत पिछड़ी जनजातियों का उदाहरण प्रस्तुत किया जा सकता है। ऐसी अनेक जनजातियाँ एक विवाही हैं।'

जनजातियों में एक विवाह व्यवस्था देखने के लिए आपातानी जनजाति का अध्ययन किया जा सकता है। यह जनजाति अरुणाचल प्रदेश की सुबनसिरी जिले में पायी जाती है। इसमें अभी भी प्रागैतिहासिक कालीन सभ्यता की स्पष्ट झलक देखी जा सकती है। ये जनजाति जिस घाटी में निवास करती है। उसे आपातानी घाटी के रूप में जाना जाता है। इनके साथ विवाह संबंध स्थापित करना अमान्य है। बहुविवाह व्यवस्था एक विवाह व्यवस्था के विपरीत विवाह व्यवस्था है। इसमें एक पुरुष या स्त्री का अधिक स्त्रियों या पुरुषों के साथ विवाह होता है। इस प्रकार के विवाह को भी अनेक प्रकार से बाँटा जा सकता है। पहला बहु पत्नी विवाह व्यवस्था तथा दूसरा बहु पति विवाह व्यवस्था।

बहु पत्नी विवाह का अभिप्राय यह है कि जहाँ एक पुरुष की एक से अधिक स्त्रियाँ होती हैं और उस पुरुष का विवाह सभी स्त्रियों से हुआ होता है। ऐसी व्यवस्था असम की जनजातियों में देखी जा सकती है। इस जनजाति के मुखिया अनेक स्त्रियों से विवाह करते हैं। उनका एक से अधिक स्त्रियों को रखना आर्थिक सम्पन्नता और सम्मान का प्रतीक समझा जाता है। भारत में नागागोंड, बैगा आदि जनजातियों में बहु- पत्नी विवाह व्यवस्था प्रचलित है। ठीक ऐसे ही बहु पति विवाह वह विवाह व्यवस्था है जिसमें एक स्त्री का दो या अधिक पुरुषों से विवाह होता है। टोडा, खाशा, नेयर, तिआन आदि जनजातियों में विवाह की यह प्रथा प्रचलित है।

जैसा कि ऊपर कहा गया है कि परिवार समाज की वह प्रथम इकाई है जिसमें कुछ मनुष्य मिलकर रहते हैं। इस इकाई में पति, पत्नी और उनकी संतानें होती है। परिवार का आकार छोटा और बड़ा दोनों होता है। परिवार का स्वरूप चाहे जैसा भी हो यह निश्चित रूप से एक ऐसी सामाजिक संस्था है जिसके अंतर्गत विशेष रूप से स्त्री-पुरुष के सामाजिक मान्यता प्राप्त यौन संबंध स्थापित रहतेहैं । मैकाइवर एवं पेज का मत है कि "परिवार एक ऐसा समूह है जो निश्चित यौन संबंधों पर आधारित है और इतना छोटा और शक्तिशाली है कि संतान के जन्म और पालन-पोषण की व्यवस्था करने की क्षमता रखता है।" [3]

नीचे पूर्वोत्तर की कुछ जनजातियों की परिवारिक संरचना को देखने का प्रयास किया जा रहा है। जिसके अध्ययन से हमें जनजातियों की सामाजिक व्यवस्था का ठीक-ठीक पता चल सके। जिसके आधार पर कुछ निष्कर्ष निकाले जा सकें । यह किसी भी अध्ययन के लिए एक आवश्यक कार्य है।

1.2.2 पूर्वोत्तर की जनजातियों की पारिवारिक संरचना

1.2.2.1 गारो जनजाति

गारो जनजाति मेघालय की 'गारो' नामक पहाड़ियों में निवास करती है। ये लोग अपनी उत्पत्ति एक स्त्री से मानते हैं । अर्थात वे अपने पूर्वज को स्त्री बताते हैं। इस समुदाय में परिवार की सभी लड़कियों में से किसी एक लड़की को उत्तराधिकारिणी के रूप में चुना जाता है। जिस लड़की को उत्तराधिकरिणी चुना जाता है उसे 'नोकना' कहते हैं। उसके पति को 'लोक्रोम' कहते हैं। नोकना को ही परिवार की भूमि, घर के सारे सामान, खेती के औजार, पशुधन आदि पर अधिकार प्राप्त होता है।

1.2.2.2 खासी जनजाति

खासी जनजाति मेघालय की खासी पहाड़ियों में निवास करती है। यह जनजाति मातृवंशीय है । खासी लोग अपनी उत्पतिस्त्री पूर्वज से मानते हैं। उनका प्रमुख देवता भी स्त्री ही है। एक खासी परिवार में उसका पति एवं उसके अविवाहित बच्चे साथ रहते हैं। विवाह के

बाद पुरुष अपनी पत्नी के घर चला जाता है। स्त्रियाँ धार्मिक एवं आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण पदों को धारण करती हैं। खासी परिवार का केन्द्र बिंदु "माँ होती है वही परिवार की देख-रेख करती है। संपत्ति की स्वामिनी होती है। निवास स्थान मातृस्थानिक है। परिवार में मामा की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। वह एक परामर्शदाता के रूप में माना जाता है। तथा माँ की तरह परिवार की सबसे छोटी पुत्री की स्थिति महत्वपूर्ण मानी जाती है। वह परिवार में धार्मिक कार्यों का संचालन करती है तथा परिवार के पुरोहित का कार्य भी करती है। परिवार की संपत्ति भी उसे उत्तराधिकार में प्राप्त होती है।" गारो जनजाति भी खासी की ही भांति मातृवंशीय हैं एवं इसमें स्त्री को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

पूर्वोत्तर भारत में 'मातुलेय प्रथा' के अनुसार खासी एवं गारो समाज में मामा अपने भांजों एवं भांजियों के जीवन में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। उसकी उनके प्रति विशेष जिम्मेदारियाँ होती हैं। एक अर्थ में यह जिम्मेदारियाँ उनके पिता से भी अधिक होती है। सहप्रसविता प्रथा के अंतर्गत पति के लिए यह अनिवार्य होता है कि गर्भवती पत्नी जैसा कष्ट सहती है उसका पति भी वैसे ही कष्टों का अनुभव करे।

1.2.2.3 गोत्र जनजाति

जनजातीय सामाजिक संरचना में गोत्र महत्वपूर्ण स्थान रखता है। अनेक अध्ययन बताते हैं कि जनजातियाँ अधिकांशतः गोत्र के आधार पर ही संगठित होती हैं। मजुमदार गोत्र को परिभाषित करते हुए कहते हैं कि "बहुधा एक गोत्र कुछ वंशों का योग होता है जिसकी उत्पत्ति एक कल्पित सब्ब, पशु-पेड़-पौधे एवं निर्जीव वस्तु तक हो सकता है। गोत्र जनजातियों के एक पक्षीय सामाजिक संबंधों का प्रतिमान है। वास्तव में इसमें अनेक रक्तमूलक अथवा कृत्रिम अथवा समाज द्वारा मान्यता प्राप्त होते हैं जो अपने को एक ही पूर्वज का वंशज मानते हैं। गोत्र की सदस्यता मनुष्य को जन्म से ही स्वतः प्राप्त हो जाती है। यह अनिवार्य एवं पूर्ण निश्चित है। गोद लेने की प्रथा के फलस्वरूप एक व्यक्ति का गोत्र भी बदल जाता है।"" नागा जनजातियों में भी गोत्र संगठन विद्यमान है। उन लोगों में स्थानीय समूह जो कि खिल नाम से जाना जाता है, एक भौगोलिक क्षेत्र में रहने वालों का संगठन है। गोर्डन ने खासी जनजाति में बहिर्विवाह गोत्रों का उल्लेख किया है। इनके गोत्र मातृवंशीय तथा निवास मातृस्थानीय हैं। इनमें बहिर्विवाह के नियमों का उल्लंघन घोर अपराध माना जाता है।

1.2.2.4 नागा जनजाति

नागा भारत की प्रमुख जनजाति है। यह जनजाति अनेक समूहों में विभाजित है। प्रत्येक समूह की भाषा अलग है। साथ ही सबकी एक स्वतंत्र पहचान है। नागालैंड, अरुणाचल प्रदेश एवं मणिपुर आदि में ये निवास करते हैं। ये लोग स्थायी रूप से अपने गांवों में रहते हैं। इनके गाँव काफ़ी बड़े-बड़े होते हैं। एक शताब्दी पूर्व के ऐतिहासिक प्रमाण बताते हैं कि इनके पाँच सौ परिवारों तक के एक गाँव होते थे। गाँवों की बनावट सुरक्षा की दृष्टि से महत्वपूर्ण मानी जाती है।

नागाओं में युवागृह जिन्हें 'मोरंग' नाम से जाना जाता है, पर्याप्त लोकप्रिय थे। मोरंग आवास काफ़ी महत्वपूर्ण होता है। मोरंग की स्थिति से गाँव की स्थिति का आकलन किया जा सकता है। एक अच्छे सुसज्जित मोरंग का तात्पर्य है कि गाँव स्वस्थ और सम्पन्न है। मोरंग में नवयुवकों को जनजातीय परम्पराओं की सीख दी जाती थी। पुरानी पीढ़ियों के शौर्य एवं परम्पराओं से अवगत कराया जाता है। लड़के जब पाँच-छ: वर्ष के होते थे तो वे मोरंग जाना आरम्भ कर देते थे। मोरंग एक पाठशाला होने के साथ-साथ एक मनोरंजन का केन्द्र स्थल भी होता था। जहाँ नवयुवकों को बड़े समूह के साथ सामंजस्य करने योग्य बनाया जाता था। इसके अतिरिक्त युद्ध, सुरक्षा तथा अनेक प्रकार के प्रशिक्षण भी प्रदान किये जाते थे। अनुशासन हीनता पर उन्हें दण्डित भी किया जाता था।

1.3 सांस्कृतिक परिवेश

पूर्वोत्तर का क्षेत्र भारत में सांस्कृतिक की दृष्टि से एक अलग पहचान रखता है। यह क्षेत्र अपनी प्राकृतिक सुंदरता की दृष्टि से भी समृद्ध है। यहाँ अनेक प्रकार के समाज या समुदाय के लोग रहते हैं। उनकी अपनी अलग-अलग भाषाएँ एवं बोलियाँ हैं। इनकी अपनी अलग-अलग अस्मिता एवं पहचान है। संस्कृति का सामान्यतः अर्थ होता है- संस्कार, शुद्धि, सफाई या सुधार अर्थात् किसी समुदाय के वे अचार-विचार जो उसे अन्य समुदाय से अलग करते हैं। साथ ही जो उसे मनुष्य के रूप में पहचान दिलाते हैं। मनुष्य का समाज कई अर्थों में पशुओं के समाज से भिन्न है। इन दोनों में भिन्नता का कारण संस्कृति ही है। मनुष्य संस्कृति का धारक, निर्माता और संवर्धक होता है जबकि पशुओं में उनका शरीर ही प्रमुख है।

शारीरिक दृष्टि से मनुष्य कोई बहुत बड़ा प्राणी नहीं है बल्कि यह हाथी, घोड़े, घड़ियाल तथा शेर आदि से बहुत छोटा और कम शक्तिशाली है। मनुष्य के पास पर्याप्त रूप से विकसित मस्तिष्क है। जिस कारण वह समस्त विश्व में अपने अस्तित्व को निरन्तर बनाये हुए है। वह मस्तिष्क के कारण शक्तिशाली पशुओं पर भी नियंत्रण कर लेता है। पशुओं में केवल शरीर ही मुख्य होता है। इसके विपरीत मनुष्य में चेतन शक्तिऔर विवेक होता है।जिसके आधार पर वह सही एवं गलत में अंतर करता है। मनुष्य जन्म के बाद से ही विभिन्न प्रकार के संस्कारों को ग्रहण करने लगता है। यही संस्कार उसके अचार-विचार एवं व्यवहार को प्रभावित करते हैं। संस्कृति किसी समाज में गहराई तक व्याप्त गुणों का नाम है। उस समाज के सोचने और विचारने का ढंग है।

दूसरे शब्दों में संस्कृति जीवन का ढंग है, विधि है। हम जो भोजन खाते हैं, जो कपड़े पहनते हैं, जो भाषा बोलते हैं साथ ही जिस भगवान की पूजा करते हैं, ये सभी सभ्यता कहलाती हैं। किंतु ध्यान रखा जाए कि इससे संस्कृति का भी बोध होता है। सस्कृति और सभ्यता दोनों में सूक्ष्म अंतर है। जो दिखाई देता है वह सभ्यता है और जो दिखाई नहीं देता लेकिन सभी में व्याप्त है। व्यवहार में व्यक्त होता है वही संस्कृति है। संस्कृति का संबंध किसी भी समाज में व्याप्त संस्कार से है। यह मनुष्य की चेतना में निहित होती है। विचारों के माध्यम से अभिव्यक्त होती रहती है।

जैसे कि जो भौतिक अवस्था में इमारतें, सड़कें, गाडियाँ आदि दिखती हैं वे सभी सभ्यता के अंग है। किंतु इन सभी को बनाने में जो विचार काम करता है वही संस्कृति है। जीवन जीने से मनुष्य को जो अनुभव प्राप्त होता है वहीउसकी संस्कृति का निर्माण करता है। संस्कृति आंतरिक अनुभूति से संबद्ध होती है। इसमें कला,विज्ञान, संगीत, नृत्य और मानव जीवन की उच्चतर उपलब्धियाँ सम्मिलित होती हैं जिन्हें मनुष्य की 'सांस्कृतिक गतिविधियाँ' कहा जाता है।

किसी भी देश या उस देश में बसने वाली जाति को जानना है तो उसके क्रिया- कलापों, व्यवहारों, भाषा- बोलियों, परम्पराओं एवं मान्यताओं को जानना आवश्यक है। चूँकि यही सब किसी भी संस्कृति की पहचान होते हैं। जैसा कि इस अध्ययन में पूर्वोत्तर के जनजातीय या आदिवासी समाज की संस्कृति का अनुशीलन किया जा रहा है। हम जानते हैं कि पूर्वोत्तर क्षेत्र कई राज्यों को सामूहिक रूप से कहा जाता है। इसलिए यहाँ अध्ययन की सुगमता के लिए पूरे एकसाथ पूर्वोत्तर के स्थान पर राज्यवार अध्ययन किया जा रहा है।

1.3.1 असम

असम में हिंदू, मुस्लिम, बौद्ध, और जैन आदिधर्म के लोग रहते हैं। वे अपने धर्मों के हिसाब से पूजा-पाठ और पर्व उत्सव मनाते हैं। इस राज्य की राजभाषा असमिया है। लेकिन इस प्रदेश में बोडो समूह की भाषाएँ बहुत सी जनजातियों में बोली जाती हैं। इनके अलावा असम में हिंदी, बंगला, भोजपुरी, नेपाली, राजस्थानी और मणिपुरी भी बोली जाती है। राष्ट्र भाषा प्रचार समिति यहाँ हिंदी के प्रचार-प्रसार का कार्य कर रही है। असमिया साहित्य विभिन्न विधाओं में लिखा जा रहा है। असमिया में ज्योतिप्रसाद असमिया साहित्य विभिन्न विधाओं में लिखा जा रहा है। असमिया में ज्योतिप्रसाद अग्रवाल और विष्णु प्रसाद राभा ऐसे रचनाकार हैं जो असमियाभाषा और साहित्य को समृद्ध कर रहे हैं। असमिया में कई चलचित्र बन चुके हैं। जिसकी ख्याति राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हुई है।

डॉ. भूपेनहजारिका, डॉ. भावेनबरुआ, जाहूवरुआ असमिया के साथ हिंदी फिल्मों के निर्माण में चर्चित हैं। नृत्य, संगीत और कला में असम का विशेष स्थान है। आज असमिया का 'बिहू' राष्ट्रीय स्तर पर सम्मान पा रहा है। चित्रकला के क्षेत्र में नील पवन बरुआ, कुमार नाथ, मीनाक्षीबरगोहाई आदि के नाम प्रमुख रूप से लिए जा सकते हैं। प्राचीनकाल से असम में रेशम के कपड़े बनते आए हैं। यहाँ मेखला चादर, एन. डी. सिल्क, मुगा सिल्क और पात सिल्क के कपड़े करघे पर बुने जाते हैं।

श्रीमंत शकरदेव का असमी समाज पर गहरा प्रभाव पड़ा। उनका जन्म नवगांव जिले के बरदोवा के समीप अलिपुरखी नामक स्थान सन् 1449 में हुआ था। शिक्षा प्राप्त करने के बाद भागवत धर्म का उन्होंने प्रचार प्रारंभ किया। आपनेबरदोवा में 'नामघर' बनाकर सत्र की तैयारी की। छोटे-बड़े, ऊँच-नीच के भेद-भाव के बिना सब को साम्य भाव की शिक्षा दी। उनके मंदिर का द्वार सबके लिए खुला था। उनका सिद्धांत एक देव, एक सेव, एक के बिना नहीं केव' था। श्रीशंकर देव की प्रेरणा से असम के गांवों में नामघरों की स्थापना हुई जो आगे चलकर असम संस्कृति के केन्द्र बन गये।

बिहू असमिया जाति की सांस्कृतिक पहचान है। यह प्राचीन मान्यताओं को प्रभावित करने वाला पर्व है। बिहू तीन प्रकार के होते हैं- 1- कार्तिक बिहू, माघ बिहू और रंगाली बिहू। कार्तिक बिहू अक्टूबर के मध्य में, माघ बिहू जनवरी के मध्य में और रंगाली बिहू अप्रैल के मध्य में जोरशोर से मनाया जाता है। तीनों बिहू पर्व संक्रांति के अवसर पर मनाये जाते हैं। इनपर्वों का संबंध फसलों से होता है। असम की संस्कृति का प्रतीक बिहू पर्व है। इसे सभी असमिया मनाते हैं। रंगाली बिहू सबको एकाकार कर देता है। इसलिए यह राष्ट्रीय एकता में सहायक है।

कामाख्या देवी से संबंधित कई पौराणिक कथाएँ और किवदंतियाँ प्रचलित हैं। उसमें से एक अम्बुवाली मेला भी है। जून-जुलाई महीने के दौरान मंदिर के झरने का पानी लाल हो जाता है। उस समय कामाख्या मंदिर को पुजारी एवं दर्शनार्थियों के लिए बंद कर दिया जाता है। जिसे अम्बुवासी के नाम से जाना जाता है। जो समान्यतः अहार महीन (असमिया महीना) के छः से दस दिनों के बीच होता है। यह मान्यता है कि इस काल में देवी के मासिक धर्म का समय होता है। अम्बुवासी एक वार्षिक त्यौहार है। जो एक मेले के रूप में मनाया जाता है। अम्बुवासी मेले का दूसरा रोचक पहलू 'देवधानी' है। देवधानी एक नृत्य का रूप है जिसके द्वारा देवी को प्रसन्न किया जाता है।

जिसमें नर्तक उन्मुक्त होकर नगाड़ा और शंख बजाते हैं। नृत्य जब अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँचता है तब देवी स्वयं नर्तक को अधिकृत करके प्रसन्न हो जाती हैं । कर्म पूजा चाय जनगोष्ठी का एक महत्वपूर्ण पर्व है जो भाद्र महीने के शुक्ल पक्ष एकादशी में बड़े उत्साह

पूर्वक मनाया जाता है। समान्यतः यह कृषि पर आधारित एक पर्व है। जिसमें वे चाय खेती के अलावा भी अन्य अनाजों की खेती करते हैं। जैसे धान, गेहूँ, ज्वार, बाजरा इत्यादि भी।

1.3.2 नागालैंड

यहाँ सभी जनजातियों की अपनी अलग-अलग भाषाएँ हैं। यहाँ की भाषा तिब्बती,बर्मी परिवार की है। यह तीन भागों में विभाजित है। पश्चिमी उपसमूह, मध्यदेशीय उपसमूह और पूर्वी उपसमूह। हिंदी सभी भागों में समझी जाती है। यहाँ अंग्रेजी राजभाषा है। नागा जाति के अधिक पर्व-त्यौहार कृषि संबंधी कार्यों से सम्बन्धित हैं। आओ जनजाति का सबसे बड़ा त्यौहार मोआत्सू है। जो बुआई का कार्य पूरा होने पर छः दिनों तक मनाया जाता है। नागा लोगों में शाल प्रमुख पोशाक है। अलग-अलग जाति और समुदाय में इसका रंग और डिजाइन अलग-अलग होता है। योद्धा और साधारण लोगों की शाल में भी अंतर होता है। मिथुन प्रतीक वाली शाल ओढ़ने वाला संपत्ति का मालिक होता है। यहाँ हाथी, बाघ मारने वाला नर मुंड शिकार का प्रतीक माना जाता है।

यहाँ आभूषण केवल प्रसाधन के साधन नहीं है। वे विजय के सूचक भी होते हैं। क्षत्रिय का आभूषण किसी पुरुष की हत्या का सूचक है। मस्तक हार्न बिल पक्षी के पंख प्रत्येक शत्रु एक-एक कटे सिर के सूचक हैं। स्त्रियों की पोशाक सीधी-साधी होती है। गोदने का रिवाज सबमें है। इनकी मुख्य हस्तकला काठ पर नक्काशी, बाँस का काम, मिट्टी के बर्तन और लोहे की विभिन्न वस्तुएँ बनाना है। काठ की सर्वोत्तम दस्तकारी और गाँव के किसी अमीर या योद्धा के घर पर होती है। मिथुन के सिर, हार्न बिल की चोंच, पक्षी, हाथी, बाघ की आकृतियों पर नक्काशी की जाती है। मिथुन को सम्पत्ति का, हार्न बिल को पराक्रम का, हाथी, बाघ आदि को शक्ति का प्रतीक माना जाता है। नागालैंड में 95% लोग ईसाई धर्म को मानने वाले हैं।

1.3.3 मणिपुर

संस्कृति में मणिपुर घाटी में बसी हुई बहुसंख्य मितैय जाति और पहाड़ों में बसी हुई जनजातियों की मिली-जुली संस्कृतियों का वास है। मितैय लोगों द्वारा वैष्णव धर्म स्वीकार करने का इतिहास चार सौ वर्ष पुराना है। आदिकालीन मणिपुरी प्रकृति पूजक थे। प्राचीन मितैय धर्म ग्रंथों में सूर्य, अग्नि, आकाश तथा सोरारेन (इंद्र) की पूजा का विधान है। मितैय धर्म में जहाँ राधाकृष्ण को सर्वोच्च स्थान दिया गया है वहीं प्राचीन देवी देवताओं की भी पूजा की जाती है। यहाँ पर वैदिक धर्म और स्थानीय धर्म का समन्वय है। इसे हिंदू धर्म नहीं कह सकते लेकिन यह हिंदू धर्म के बहुत निकट है।

यहाँ पर्व और त्यौहारों की अधिकता है। होली, दीवाली, रथयात्रा, जन्माष्टमी, गोवर्धन पूजा, सरस्वती पूजा के साथ स्थानीय पर्व लाई हरा ओबा, सनामाही आदि मनाये जाते हैं। मणिपुरी नृत्य का विशेष स्थान है। लाई हरा ओबा यहाँ का परम्परागत आदिम लोक नृत्य है। जिसमें आदि पुरुष और प्रकृति द्वारा सृष्टि रचना की प्रस्तुति होती है। यहाँ रास लीलाएँ भी विभिन्न प्रकार की होती हैं। जिसमें महारास, वसंतरास और नृत्य रास प्रमुख है। इनमें कृष्ण की बंशी और गोपी कृष्णमिलन के नृत्य होते हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ कई तरह की संकीर्तन मंडलियाँ हैं। ये धार्मिक भावना से जुड़कर जीवन के अभिन्न अंग बन गये हैं। याओसंड में होली के दिन रंग खेलने काप्रचलन है। 'मुकना' कुश्ती प्रतियोगिता भी होती है।

1.3.4 मेघालय

मेघालय की भाषा खासी, गारो तथा जयंतिया है। यहाँ के अधिकांश लोगों ने ईसाई धर्म को स्वीकारा है। यहाँ के लोग ईसाई धर्म के साथ ही अपनी आदिम संस्कृति, भाषा, लोकनृत्य, वेश-भूषा, शादी के रीति-रिवाज, पुरानी पारंपरिक पंचायतों के नियमों का पालन करते हैं। मेघालय की राज भाषा अंग्रेजी है। सौ वर्षों तक यहाँ गारो और खासी भाषा, बंगाली लिपि में लिखी जाती थी। खासी भाषा काफ़ी समृद्ध भाषा है। मेघालय की मूर्ति कला में मनुष्य, जानवर, पक्षी, जंगल, फूल, पत्तियों की आकृतियाँ आसानी से देखी जा सकती हैं। संगीत और नृत्य मेघालय का जीवन है। सुख, हर्ष, जीत, हार, जन्म, मृत्यु, विवाह तथा उत्सवों, त्योहारों पर नृत्य और गीत-संगीत अवश्य होते हैं।

खासी नृत्यों में औरतें एवं पुरुष अलग-अलग घेरा बनाकर नाचते हैं। खेती, फसल एवं पर्वों के अलग-अलग नृत्य होते हैं। यहाँ के लोग नगाड़े, ढोल, बांसुरी, तान, मुरी, बेसली आदि वाद्ययंत्र प्रयोग में लाते हैं। नोंगक्रेम मेघालय का प्रमुख नृत्य है। खासी संस्कृति को जीवित रखने का श्रेय इसको भी जाता है। यह नृत्य बहुत धीमी गति से होता है। सामूहिक नृत्य में सभी लड़के एवं लड़कियाँ भाग लेते हैं। लड़कियाँ घेरा बनाकर नाचती हैं। वे अपना हाथ ऊपर नहीं उठाती धीमी गति से अपना पैर चलाती हैं। इस अवसर पर विशेष भड़कीले कपड़े पहने जाते हैं। पुरुष रुमाल या तलवार घुमाकर नाचते हैं। बांग्ला फेस्टिवल नृत्य गारो जाति का त्यौहार है। इसका शाब्दिक अर्थ है- चावल के पाउडर को फेंकना। यह नवंबर या दिसम्बर महीने में जब धान की फसल गाँव में आ जाती है। तब एक सप्ताह तक यह त्यौहार मनाया जाता है। चावल के पाउडर से बच्चों की ऊँचाई का निशान बना दिया जाता है। एक वर्ष के बाद वे देखते हैं कि बच्चा कितना बढ़ा है। दूसरे वर्ष फिर से निशान लगाते हैं। इससे बच्चों के बढ़ने का अनुमान लगाया जाता है। इस पर्व पर गाँव के मुखिया जिसे नोकमा कहते हैं। वहाँ सब इक्कठे होते हैं । भगवान के प्रति फसल के लिए कृतज्ञता व्यक्त की जाती है। बांग्ला डांस गारो जनजाति का प्रमुख त्यौहार है । यह शरद ऋतु में फसल कट जाने के बाद मनाया जाता है। देवी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिए हर गाँव में अपनी पारम्परिक भेष-भूषा में रात-दिन नृत्यगान किया जाता है । वेदीपंख्लाग वर्षा ऋतु में जयंतिया हील्स के जोवाई और तबुरे में मनाया जाता है। यह धार्मिक नृत्य है । गोला बनाकर नृत्य किया जाता है। शादयुक्तमाईनसीयेम खासी जनजाति का त्यौहार है । यह नृत्य भगवान के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए किया जाता है। इसके अंतर्गत वे अपनी संतति की वृद्धि की प्रार्थना और अच्छे स्वास्थ्य एवं बच्चों की कुशलता की कामना करते हैं।

1.3.5 त्रिपुरा

त्रिपुरा में आदिवासी समुदाय का शौक नृत्य, गीत एवं मदिरा पीना है । इनके घरों में लकड़ी की वस्तुएँ, बुनाई, सुंदर डिजाइन वाले कपड़े बनते हैं। इन्हें 'रिहायारिशा' कहते हैं। सभी लोग आभूषण जो प्रायः चांदी के होते हैं- को पहनना अधिक पसंद करते हैं। यहाँ के आदिवासियों पर हिंदू धर्म का बहुत प्रभाव है। कई स्थानों पर हिंदू और आदिवासी साथ-साथ अपने-अपने ढंग से पूजा करते हैं। जैसे जल देवता, अग्नि देवता, वन देवता, पृथ्वी देवता, शिव आदि । खारची पूजा के अंतर्गत चौदह देवताओं की पूजा की जाती है। इसमें आदिवासी और गैर-आदिवासी दोनों सम्मिलित होते हैं। यह जुलाई महीने में हर वर्ष मनाया जाता है। इसमें बहुत से बकरों और कबूतरों की बलि दी जाती है। मुख्यतः यह आदिवासियों का त्यौहार है। केर पूजा खारची पूजा के पन्द्रह दिनों के बाद मनाया जाने वाला उत्सव है। यह दूसरा बड़ा उत्सव है। यह पूजा आने वाले खतरों से रक्षा के लिए की जाती है।

इसमें पूजा स्थल का चयन करके उसे रेखांकित किया जाता है। पूजा पूर्ण होने तक कोई व्यक्ति न तो उस रेखा के बाहर जाता है और न कोई उस रेखा के भीतर ही आ सकता है। यह पूजा लगातार ढाई दिन तक चलती है। गर्मा पूजा को त्रिपुरा की जनजाति सात दिनों तक अप्रैल के महीने में पूर्ण करती है। इस पूजा को वर्ष भर हँसी-खुशी और समृद्धि से बीतने के उद्देश्य से किया जाता है। इसमें मुर्गों की बलि

दी जाती है। गंगा पूजा आदिवासियों का उल्लेखनीय पर्व है। यह पूजा मार्च-अप्रैल महीने में की जाती है। इसमें लोग नदी के बीच में बाँसों का मंदिर बनाकर गाड़ देते हैं। यह पूजा बिमारियों से उनकी रक्षा करती है । लाम्प्रा उत्सव में अगहन माह के दौरान जब धान की नयी फसल कटकर आती है तो नये चावल की विशेष शराब बनायी जाती है जिसे मानुषी कहते हैं। इसे उत्सव के समय पर्वतीय लोग पीते हैं। इसके साथ बकरे, सूअर आदि को मारकर अतिथियों का स्वागत किया जाता है। यह सब लाम्प्रा देवता की पूजा के बाद करते हैं।

1.3.6 अरुणाचल प्रदेश

अरुणाचल प्रदेश की जनजातीय संस्कृति संरक्षित है। यहाँ के लोगों को अपनी संस्कृति से बड़ा गहरा लगाव है। दूसरे धर्मों को अपनाने पर भी वे अपनी वेश-भूषा और पर्व-त्यौहार जो पहले के हैं उन्हें नहीं छोड़ते हैं। पर्वों में युवक-युवतियाँ मिलकर भाग लेते हैं। अपने गीतों में प्राचीनकाल से चली आ रही लोक गाथाओं को ये रचकर गाते हैं । यहाँ की जनजातियाँ में मुख्यत: तीन तरह की संस्कृतियाँ देखने को मिलती हैं- 1. बौद्ध संस्कृति 2. प्रकृति पूजक 3. अन्य । बौद्ध संस्कृति वाली जनजातियों को भी दो भागों में बाँटा जा सकता है- 1. महायानी बौद्ध, 2. हीनयान बौद्ध । महायानी बौद्ध तवांग और वेस्टकमिंग जिलों में रहते हैं। इन्हें बज्रयानी बौद्ध भी कहते हैं। ये भगवान बुद्ध के साथ ही कई देवी-देवताओं की भी पूजा करते हैं। जिनमें तारा देवी तथा जातक कथाओं में भगवान बुद्ध के पूर्व जन्मों के देवता हैं। इनके पूजा स्थलों को गोंपा और पुजारी को ला कहते हैं।

ये तिब्बत के दलाई लामा की भी पूजा करते हैं। इनके धर्म ग्रंथ तिब्बती भाषा में हैं। सबसे बड़ा गोंपातवांग में है। ये मांस का सेवन करते हैं किंतु स्वयं पशु का वध नहीं करते। इनका दूसरा भाग हीनयानी बौद्धों का है। ये लोहित एवं चांगलांग जिलों में मिलते हैं । ये केवल भगवान बुद्ध की ही पूजा करते हैं। इनके पूजा स्थल को विहार एवं पुजारी को भंते कहते हैं । ये थाईलैंड, बर्मा से आए हुए माने जाते हैं। इनके ऊपर बर्मा संस्कृति का प्रभाव है । ये लोग खेती करते हैं। इनकी आर्थिक स्थिति अच्छी है । यह कालीन निर्माण, बुनाई, पेंटिंग कार्य में कुशल होते हैं। दूसरे भाग में प्रकृति पूजक जातियाँ भी हैं । यह दोंनी- पोलो (सूर्य-चन्द्र) को भगवान मानते हैं। इसके अलावा सी (पृथ्वी) पर्वत, नदी, वन देवता, फसल देवता की भी ये पूजा करते हैं ।

इसके अंतर्गत आदि जनजाति और उसकी उप- जनजातियाँ, निशि बैंगनी, तागिज, हिल, मिरी, आपातानी आदि जातियाँ आती हैं। अपने त्यौहारों पर यह शुभ और अशुभ दोनों प्रकार के देवताओं की पूजा करते हैं। उन्हें संतुष्ट करने के लिए मिथुन, मुर्गे, सूअर आदि की बलि चढ़ाते हैं। तीसरे भाग में वान्यु, नो कटे, तियुसा, तागंसा आदि जातियाँ आती हैं। यह वैष्णव और शैव धर्म मानते हैं । यहाँ के सभी लोग लगभग मांसाहार करते हैं। वान्यु एवं नोकटे जातियों में राजा (सरदार) का आदेश ही चलता है। लोक नृत्य करना और शिकार इनका शौक है। पहले नोकटे जनजातियाँ अपने दुश्मन का सिर काटकर अपने घरों में रखते थे।

यहाँ के लोग मोहक चिन्ताकर्षक लकड़ी की मूर्तियाँ बनाने में सिद्धस्थ हैं। घरों में लड़कियाँ सुंदर गालुक गाले डिजाइनदार बुनती हैं। बेंत बाँस के सुंदर तोप बनाते हैं, नदियों पर बेंत का झूला, पुल बनाने में लोग कुशल हैं। बेंत के फर्नीचर बड़े अच्छे बनाये जाते हैं । कम्बल पशमीने की शाले बनायी जाती है। तरह-तरह के आभूषण कारीगर तैयार करते हैं।

1.3.7 मिजोरम

मिजोरम की लुशाई जनजाति मिजो कबीले की जनजातियों में जनजाति है। अंग्रेजों के सत्ता में आने से पूर्व इसी जनजाति की सत्ता यहाँ पर थी। लुशाई जाति म्यांमार की शान या चीन जनजाति की एक शाखा है। जो वहाँ से आकर यहाँ बस गयी। इसके आने के पूर्व यहाँ पर कुकी जनजाति के लोग रहते थे। इनके आने के बाद वे लोग कछार और मणिपुर की तरफ़ चले गये। लुशाई जाति में लल या चीफ का बड़ा महत्व होता है। वही गाँव का प्रशासक होता है। युद्ध और शांति का संचालन उसके द्वारा ही होता रहा है। चीफ की सलाह के लिए उसके मंत्री और मुख्य पुँजारी होते थे। चीफ के बच्चों के विवाह एवं साधारण लोगों के विवाह में थोड़ा अंतर होता था। दुल्हन का बाप लड़के के बाप से खुद दहेज लेता था। चीफ अपनी स्त्रियों का परित्याग कर सकते थे। किंतु ऐसा बहुत कम होता था। अपनी हैसियत के अनुसार चीफ की एक से अधिक स्त्रियाँ होती थीं। चीफ की पहली स्त्री की समाज में अधिक मान्यता होती थी।

मिजोरम की संस्कृति में लोक नृत्य का अत्यधिक महत्व है। यहाँ चेरिकान बाँस नृत्य बहुत प्रसिद्ध है। इस नृत्य में प्रायः कुँवारे लड़के- लड़कियाँ नृत्य करते हैं। ऋतु बदलने पर जीवन में नया रस भरने के लिए किसी विशिष्ट अतिथि के आने पर इस नृत्य का आयोजन होता है। चेराव नृत्य अकाल मृत्य से भरे व्यक्ति की आत्मा की शांति के लिए किया जाता है। लोगों का विश्वास है कि मृत्यु के मार्ग में आने वाली सारी बाधाएँ दूर हो जाती हैं। खुवाल्लम नृत्य मिजो जाति का विशेष नृत्य है। विशेष अवसरों पर इसका आयोजन होता है। लोगों का विश्वास है कि अगर कोई आदमी अपने जीवनकाल में सात महत्वपूर्ण अवसरों पर भाग लेकर नृत्य कर लेता है तो उसे आजीवन आनंद मिलता है। नृत्य के बाद उसे स्वर्ग में स्थान मिलता है।

खुवंगाछा नृत्य विशेष समारोह के समय जब भोज की व्यवस्था होती है। तब होता है। इस अवसर पर आयोजक के श्वसुर का होना आवश्यक है। इस नृत्य में बहुत-सी युवतियाँ भाग लेती हैं। इस नृत्य का प्रबंध श्वसुर को करना पड़ता है। सोलकिया नृत्य यह लाखेर और पोवी जिलों में प्रचलित है। यह नृत्य तब किया जाता है जब युवक शिकार करने जाते हैं। इसमें पाँच ताल होते हैं। पशुओं पर विजय प्राप्त करने के लिए यह नृत्य किया जाता है। यह नृत्य ढोल बजाकर किया जाता है। इसमें नर्तक एवं नर्तकियाँ एक पंक्ति में खड़े होते हैं। ढोल बजाते हुए सभी नेता के आदेश पर नाचते हैं।

1.3.8 सिक्किम

सिक्किम में हिन्दु धर्म के बाद बौद्ध धर्म को मानने वालों की संख्या अधिक है। सभी धर्मों और जातियों में सद्भाव देखने को मिलता है। यहाँ हिन्दुओं के मंदिर हैं बौद्धों की गोम्पा क्रिश्चनों के चर्च, सिखों के गुरूद्वारे और मुस्लिमों की मस्जिदें भी हैं। यहाँ पर बौद्ध धर्म का प्रभाव सर्वत्र देखने को मिलता है। इनका धार्मिक स्थल गोम्पा सर्वत्र है। यहाँ के जौगायलों के बौद्धधर्मी होने के कारण इस धर्म को प्रोत्साहन मिला। यहाँ जगह-जगह स्तूप और बौद्ध धर्म के चिह्न मिलते हैं। सिक्किम में लगभग सडसठ गुम्फा है जहाँ तिब्बती कलेंडर के महीने और तिथियों पर भगवान बुद्ध एवं दूसरे गुरुओं की पूजा होती है। इन अवसरों पर धार्मिक मुखौटा नृत्य का आयोजन होता है। यहाँ पर बहुत से स्तूप हैं। जहाँ पर इनके गुरुओं की समाधियाँ हैं। गुम्फा में तिब्बती संस्कृति, कला कौशल के नमूने देखने को मिलते हैं। बौद्धों का मुख्य पर्व दावा है जो बुद्ध जयंती मनाने से सम्बन्धित है।

दूसरा लहा बाबधुइचेन है। जो बुद्ध की माता महामाया से सम्बन्धित है। तीसरा पर्व दुक्रपार्तशी है। जो बुद्ध के सारनाथ में पहले पाँच शिष्यों को प्रथम उपदेश देने से है। चौथा पर्व फांगलहाबसोल है। जिसमें सिक्किम के चौकदार नामदलाल द्वारा भुतियाँखबे, बुमसा के

समझौते से संबंधित है। लुशांग तिब्बतन वर्ष के समाप्त होने से और लूसर पर्व तिब्बत नव वर्ष के शुरू होने से संबंधित है। बुद्धिस्ट रीति-रिवाज और परंपरा में आठ प्रतीक चिह्नों का महत्व है। जिसमें जीवन को पहिये के समान माना गया है। यहाँ केचोंग्यालो ने बौद्ध धर्म को अपनाया था। इन्होंने भी कई मानेसहरी और स्तूप महलों को बनवाया है। इन सभी पर तिब्बति संस्कृति और कला का प्रभाव दिखाई पड़ता है।

1.4 ऐतिहासिक अनुशीलन

पूर्वोत्तर भारत में आठ राज्य हैं। जहाँ अधिकांशतः जनजातियाँ निवास करती हैं। इस क्षेत्र ने देश की आर्थिक व सांस्कृतिक समृद्धि में बहुआयामी भूमिका निभाता है । प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर ये यह क्षेत्र कई अर्थों में विशेष महत्व का है । लगभग सभी राज्यों के अपने ऐतिहासिक महत्व हैं जिन्हें जानना अत्यंत आवश्यक है, तभी पूर्वोत्तर के जनजातीय समुदायों का ठीक ढंग से आकलन किया जा सकता है । नीचे ऐतिहासिक-दृष्टि को ध्यान में रखते हुए पूर्वोत्तर की जनजातियों का राज्यवार विवरण एवं विश्लेषण प्रस्तुत किया जा रहा है।

1.4.1 असम

भारत के पूर्वोत्तर का एक प्राचीन राज्य है। असम राज्य के नाम के संबंध में दो मत देखने को मिलते हैं। एक मत वाले यह मानते हैं कि इस राज्य का नाम यहाँ के अहोम राजाओं के नाम पर पड़ा। चूँकि अहोम राजाओं का यहाँ बहुत दिनों तक शासन था। इसलिए यह अहोम राज्य कहलाने लगा। उसी अहोम से बाद में असम नाम पड़ा। दूसरे मत वालों का यह मानना है कि असम एक विस्तृत राज्य था। पहले इसे प्रागज्योतिषपुर एवं मध्यकाल में कामरूप के नाम से जाना जाता था। प्राचीन असम हिंदू एवं बौद्ध कार्यों के लिए प्रसिद्ध था। रामायण और महाभारत में भी प्रागज्योतिषपुर और कामरूप का वर्णन आया है। "कल्कि पुराण के अनुसार कामाख्या मंदिर 'कामरूप राज्य' के केन्द्र में स्थित था। ये राज्य चारों ओर चार सौ पचासमील में फैला था। इसमें वर्तमान असम, पूर्वी बंगाल और भूटान तक के क्षेत्र सम्मिलित थे। जिसमें ब्रह्मपुत्र घाटी, भूटान, रंगपुर, कूच विहार तथा गारो पहाड़ी एवं मेमन सिंह 'बांग्लादेश' के भाग भी थे । [7]

प्राचीनकाल में इस क्षेत्र के अंतर्गत असुर और दानव नामक अनार्य जातियों का राज्य था । प्रागज्योतिषपुर का पहला राजा महिरंग दानव था । उसके बाद हतका सुर, सबासुर, रत्नासुर और घटकासुर राजा बने। नरकासुर ने प्रागज्योतिषपुर को अपनी राजधानी बनायी। जोगिनी तंत्र के अनुसार पहली सदी में कामरूप का राजा देवेश्वर नामक शुद्र था। जिसने बौद्धधर्म को रोकने के लिए कामाख्या देवी की पूजा को प्रोत्साहन दिया। बाद में यहाँ धर्मपाल क्षत्रिय राजा हुआ जिसके उत्तराधिकारी पदम नारायण, चन्द्र नारायण और रामचंद्र आदि हुए। इनकी राजधानी रत्नासुर थी। चौथी सदी में नाशंकर या नाग्यख्या प्राचीन स्वर्णपीठ के शासक थे। इनके वंशजों ने दो सौ वर्षों तक लौहितियाँ पर शासन किया। 335 ई. में यहाँ पूर्ण बर्मन ने अपने बर्मन राज्य की स्थापना की। इनके वंशजों ने 650 ई. तक कामरूप पर शासन किया। इस वंश के अंतिम राजा भाष्कर बर्मन के समय में चीनी यात्री हवेनत्संग यहाँ आया था। चूँकि भाष्कर बर्मन विवाहित नहीं था ।

इसलिए उसकी मृत्यु के बाद 650 ई. में उसके नजदीकी रिश्तेदार अवंती बर्मन ने कामरूप की गद्दी को संभाला। इस वंश के राजाओं ने 990 ई. तक एकछत्र राज किया। आगे चलकर इसी वंश के राजा ब्रह्मपाल ने 990 ई. में यहाँ पालवंश राज्य की स्थापना की ।

पालवंश ने 1138 ई. तक राज किया। इनके पतन के बोडो बाद वैद्य्देव और उदय कारण ने 1145 ई. तक राज्य किया। तत्पश्चात पूर्वी तिब्बत से 'जनसमुदाय इस क्षेत्र में आकर अपने राज्य की स्थापना की। कुछ इतिहासकारों का यह मानना है कि अहोमों के आने के

पहले बोडो का ही असम राज्य था। अहोमों के विषय में ज्ञात है कि ये दक्षिण पूर्व बर्मा के थाई परिवार की शान शाखा के सदस्य रहे हैं। जिन्होंने असम में 13वीं सदी के पूर्व प्रवेश किया।

सुकुपा ने अहोम साम्राज्य की नींव असम में 1228 ई. में रखी। जिसने अपने बल पर दक्षिण पूर्व क्षेत्र जो वर्तमान में शिवसागर जिला है। तब वहाँ मोरांग, बोराही और नागा जनजातियाँ रहती थी। उन्हें अपने अधीन कर, लिया। जिससे उसका साम्राज्य सुतिया, कछारी, भुइयाँ और नागा क्षेत्रों तक बढ़ गया। यह साम्राज्य 13वीं सदी से लेकर 19वीं सदी के मध्य तक लगभग 600 वर्षों तक शासन किया। पुरंदर सिंध इस अहोम साम्राज्य का अंतिम राजा था। जिसने असम में सन् 1833 से 1838 ई.तक ईस्ट इण्डिया कंपनी की देख-रेख में अपना शासन किया। सन् 1857 में पूरे भारत की बागडोर ईस्टइण्डिया कंपनी से ब्रिटेन की महारानी के हाथों में चली गयी थी।

ईस्ट इण्डिया कंपनी के शासन काल में बंगाल गवर्नर जनरल ने असम में शासन व्यवस्था केलिए एक कमिश्नर नियुक्त किया। पहला कमिश्नर डेविडस्काट था जो गुवाहाटी में रहता था। आरम्भ में न्यायालय की भाषा असमिया थी। बाद में बांग्ला भाषा कर दी गयी। जिसका विरोध हुआ। सन् 1871 में फिर सेअसमीया भाषा को लागू कर दिया गया। जिसका श्रेय हेमचन्द्र बरुआ और गुनामी राम को जाता है। अंग्रेजी सरकार में असम के विलय के बाद प्रशासन के कार्य में परिवर्तन किया गया। मैदानी एवं पहाड़ी भागों के बीच मतभेद पैदाकर शासन नेपहाड़ी क्षेत्रों के लिए 'इनर लाइन रेगुलेशनएक्ट'सन् 1873 ई. में बनाया।

जिसके आधार पर पहाड़ी क्षेत्रों में मैदानी या अन्य भारतीयों के जाने पर प्रतिबंध लग गया। सन् 1874 में लेफ्टिनेटकर्नल आर. एच. किटीगे असम के पहले चीफ कमिश्नर नियुक्त हुए। इसी साल असम की राजधानी शिलांग कर दी गयी, साथ हीसिलहट को भी असम में मिला दिया गया। सन् 1905 ई. में असम के प्रशासन को फिर से गठित किया गया और बंगाल को तोड़कर 'पूर्वी बंगाल और असम बनाया गया'। इसके पीछे की रजनीति यह थी कि देश में हो रहे स्वतंत्रता आंदोलनों को कमजोर कर दिया जाए। जिसका पुरजोर विरोध हुआ। सन् 1912 में असम को फिर से चीफ कमिश्नर के अधीन कर दिया गया।

मांटेग्यु चेम्सफोर्ड सुधार को ध्यान में रखकर असम कोगवर्नर के अधीन कर दिया गया। सन् 1920 में गांधी के नेतृत्व में हो रहे असहयोग आंदोलन में असम के लोगों ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। जिसमें प्रमुख नेता के रूप में तरूण राम फूकन और नवीन चन्द्र बरदोलोई थे। सन् 1921 में गांधी के द्वारा गुवाहाटी में विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार किया गया। साथ ही विदेशी कपड़ों को भी जलाया गया। चार हजार सत्याग्रहियों को कैद कर लिया गया। उस समय अम्बिका गिरि राय चौधरी असम के लोगों के अधिकार के लिए लड़ते रहे। असम की जनता ने 1928 ई. में साइमन कमीशन के शिलांग आने पर उसका बहिष्कार किया। वहीं सविनय अवज्ञा आंदोलन में 1930 ई. में बहुत लोगों ने भाग लिया। जिसमें प्रमुख नेता विष्णु राममेधी, ओमेया कुमार दास और हेमचन्द्र बरुआ थे।

सन् 1942 के 'भारत छोड़ो आन्दोलन' में भी लोगों ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। इस आंदोलन में भोगेस्वरी फुकनानी, कुणाल कुँवर, तिलक डेका इत्यादि प्रमुख थे। लंबे संघर्ष के बाद सन् 1947 में जब भारत स्वतन्त्र हुआ तो सर अकबर हैदरी असम के पहले राज्यपाल बने। आम चुनाव होने के उपरांत गोपीनाथ बरदोलाई के नेतृत्व में मंत्री परिषद् गठन हुआ। सन् 1948 में गुवाहाटी उच्च न्यायलय और आकाशवाणी आदि की स्थाप की गयी। 1947 ई. में स्वतंत्रता प्राप्ति के समय अरुणाचल प्रदेश, मेघालय, मिजोरम और नागालैंड असम के भाग थे। इसके अलावा सिलहट जो उस समय असम का सबसे बड़ा जिला था, बांग्लादेश (पूर्वी पाकिस्तान) को हस्तान्तरित कर

दिया गया। देश के बँटवारे के कुछ ही समय बाद लगभग एक हजार कि.मी. का एक भाग जिसमें भूटिया लोग अधिक थे, भारत ने भूटान को हस्तांतरित कर दिया । वर्तमान में असम भारत का अभिन्न हिस्सा है असामाजिक तत्त्वों एवं संगठनों को छोड़ दिया जाए तो यहाँ के लोग अपने को भारतीय मानने में गर्व महसूस करते हैं।

1.4.2 नागालैंड

महाभारत के अनुसार नागा जाति के विषय में कुछ जानकारी मिलती है। अज्ञातवास में अर्जुन ने नागराज कुमारी उलूपी से विवाह किया था। जिससे अरवन पैदा हुआ। इसी तरह भीम ने भी हिडिम्बा से विवाह किया था। जिससे घटोत्कच पैदा हुआ था। कुछ लोगों का विचार है कि दीमापुर हिडिम्बा के नाम पर ही पड़ा है। नागा जनजाति का कोई विधिवत इतिहास नहीं देखने को मिलता है। असम के अहोम राजाओं की बुरंजियो (इतिवृत्तो) में वर्णित है कि नागा जनजाति और अहोमों के मध्य प्रायः संघर्ष होता रहता था। इस संघर्ष में अहोमों ने नागाओं पर अपना नियंत्रण प्राप्तकर लिया। अहोम जब अपनी सत्ता से दुर्बल होने लगे तो उनपर अंग्रेजों ने अपना प्रभाव जमा लिया। अंग्रेजों ने नागा लोगों को अपने अधीन करने की कोशिश की। वे लगभग सौ मणिपुरी सैनिकों को लेकर नागा पहाड़ियों पर पहुँचे। नागाओं ने उनका प्रतिरोध करना शुरू किया। विरोध में पर्वतों पर से पत्थरों को लुढ़काना आरम्भ किया। इसमें अंग्रेजों को सफलता नहीं मिली तथा वे खाली हाथ लौट गये।

कुछ समय बाद लेफ्टिनेट विंग ने नागा पहाड़ियों में सेना का नेतृत्व कर कुछ गाँवों के मुखियों से मित्रता स्थापित कर ली। परंतु कुछ समयांतराल पर नागाओं ने कुछ लोगों की हत्या कर दी। नागा जनजातियों के इस प्रकार के हिंसक कार्य से अंग्रेज काफ़ी परेशान हुए। उन्होंने अहस्तक्षेप की नीति अपनायी और नागा पहाड़ियों को छोड़ दिया गया। सन् 1881 में नागा हिल्स नामक एक नया जिला बनाया गया। इसके बाद नागा हिल्स के भीतर अंग्रेजों का प्रवेश होता गया । प्रथम विश्व के समय युद्ध नागा पहाड़ियों की एक फ़ौज बनायी गयी। जिसमें अंगामी जनजाति को छोड़कर सेमा, लोथा, रेंग्मा, आओ, चांग तथा अन्य जनजातियों को सम्मिलित किया गया। प्रथम विश्वयुद्ध में नागा लोगों ने अंग्रेजों की सहायता की। अंग्रेज फील्डमार्शलविलीयस्लिम ने नागाओंकी बड़ी प्रशंसा की । आजाद भारत में 1 दिसंबर, 1963 ई. को भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णन ने पृथक नागालैंड राज्य की स्थापना का उद्धाटन किया।

1.4.3 मणिपुर

महाभारत में दर्ज है कि पांडवों के अज्ञातवास के दौरान अर्जुन कलिंग देश की यात्रा करते हुए मदलुरपुर पहुँचे। वहीं पर उन्होंने चित्रवाहू की पुत्रीचित्रागंदा के साथ विवाह किया। कुछ विचारकों एवं विद्वानों का विचार है कि वही मदलुरपुर ही मणिपुर है । एक कथा और है कि अश्वमेध यज्ञ का घोड़ा लेकर अर्जुन जब मणिपुर पहुँचे तो परंपरा के अनुसार बभ्रुवाहन ने अपने पिता अर्जुन से युद्ध किया । इस युद्ध में जब अर्जुन मूर्छित हो गये तो अपनी विमाता उलूपी के कहने पर उसने नागरम से मणि लाकर अर्जुन के शरीर पर रखा । इससे वे जीवित हो गये, इसलिए इस राज्य को मणिपुर कहा जाने लगा |

अनंतनाग यहाँ के प्रथम राजा बताये जाते हैं। अपने राजा की याद में आज भी मणिपुर में नाग की पूजा की जाती है। स्थानीय पुराणों के अनुसार इस वंश के राजा पाखंडवा ने 33 ई. से 154 ई. तक मणिपुर में राज्य किया 1428 ई. में नेदथौजानामक राजा ने सत्ता की बागडोर संभाली । इसी नेनिथौला राजवंश की स्थापना की। इनके ही वंश का सन् 1851 ई. तक यहाँ राज्य चलता रहा। 15 अक्टूबर, 1949 ई. को महाराजा बोधचंद्र ने मणिपुर को भारत संघ राज्य में विलय के प्रस्ताव पर हस्ताक्षर किया।

1.4.4 मेघालय

इस राज्य का नाम रामायण, महाभारत, पुराणों तथा तांत्रिक ग्रन्थों में कई जगह आया है । इस राज्य का क्रमबद्ध इतिहास 16वीं शताब्दी से प्राप्त होता है । जब असम में अहोम राजाओं का राज्य था । उस समय लिखी बुरंजियों में खासी, गारो एवं जयंतिया के निवासियों का वर्णन है । अंग्रेजों के आने के पूर्व मेघालय प्रदेश के पुराने शासकों की अपनी गणतंत्र प्रणाली थी । खासी भाषा में सीयेम का अर्थ राजा होता है। जनता की सुविधा के लिए जनता द्वारा बनाये गये नियमों के अनुसार शासन और व्यवस्था की जिम्मेदारी सीयेम की थी । सीयेम राज्य सम्पूर्ण खासी और जयंतिया क्षेत्रों में फैला हुआ था । शिलांग का सैरंम या सीयेम राज्य सबसे पहले बना । इसका निर्माण काल 1400 ई. के लगभग माना जा सकता है। अंग्रेजी राज्य के आरंभ में यहाँ के राजा उतिरोत सिंह ने अंग्रेजों के विरुद्ध जमकर संघर्ष किया। 13 जनवरी, सन् 1833 को उ तिरोत सिंह ने लुममंदियाम में खासी पद्धति के अनुसार एक राजा जैसा समर्पण दिखाया। 17 जुलाई, 1835 ई. में ढाका की जेल में इस स्वतंत्र वीर की मृत्यु हो गयी । खासियों के बाद जयंतिया राजा ने अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ाई छेड़ दी ।

सन् 1863 में अंग्रेज उस पर विजय प्राप्त कर सके । इसको खासी प्रान्त में मिला दिया गया। 21 जनवरी, 1972 ई. में मेघालय को एक पूर्ण राज्य का दर्जा मिला।

1.4.5 त्रिपुरा

त्रिपुरा के विषय में महाभारत और पुराणों में वर्णन मिलता है। इसकेअलावा इसका उल्लेख अशोक के शिलालेखों से भी प्राप्त हुई है। इसका कोई प्रामाणि इतिहास उपलब्ध नहीं है। त्रिपुरा के नाम के संबंध में विद्वानों के अलग-अलग विचार हैं।

कुछ लोग त्रिपुर सुंदरी देवी के नाम पर इसका नामकरण हुआ बताते हैं। अगरतला से कुछ दूर राधाकिशोरपुर में अभी त्रिपुर सुन्दरी का मंदिर है। जहाँ लोग पूजा करने जाते हैं। कुछ लोगों का विश्वास है कि यहाँ की जनजातियों में त्रिपुर नामक राजा हुए हैं। कुछ विद्वान कहते हैं ट्राइबल भाषा के दो शब्दों दुई-आ को मिलाकर त्रिपुरा बना है। जिसका अर्थ है जो जल से घिरा हुआ हो। त्रिपुरा राजवंश के संबंध में राजमाला नामक एक ग्रंथ प्राप्त हु है जिसमें त्रिपुर राजवंश का सम्बंध चन्द्रवंशीय राजाओं से बताया गया है। राजमाला में दिये गये विवरण को बहुत से इतिहासकार प्रामाणिक नहीं मानते हैं। इतिहासकार हर्टर के अनुसार "त्रिपुरा के शासक तिब्बतबर्मी मूल के हैं। मेजर फिशर का कहना है कि तिपेरह (त्रिपुरी) कछारी नस्ल के हैं। कछारियों की तरह ही उनका धर्म और संस्कृति भी है ।"

डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी भाषा की दृष्टि से त्रिपुरा जनजाति को इंडोमंगोलाइडया किरात नस्ल का मानते हैं। इनकी नस्लबोडोसे सम्बन्धित है । जो पूरे ब्रह्मपुत्र घाटी के उत्तरी बंगाल और कुछ दक्षिणी बंगाल में फैली है। त्रिपुरा की सीमा 19वीं शताब्दी में महाराजा वीर किशोर चन्द्र माणिक्य के समय में निर्धारित हुई। उन्होंने ब्रिटिश शासन की तरह अपने राज्य में भी प्रशासनिक सुधार किये। त्रिपुर राजवंश ने लगभग 1300 वर्षों तक शासन किया। राजमाला के अनुसार इस काल में 179 राजाओं ने पन्द्रह अक्टूबर, 1949 ई. तक भारत में विलय पूर्व तक शासन किया।

1.4.6 अरुणांचल प्रदेश

यह राज्य पहले असम का पर्वतीय भाग था। अरुणाचल प्रदे को अंग्रेज सन् 1919 तक 'नार्थईस्टफ्रंटियरटैक्ट' कहते थे। प्रशासनिक दृष्टि से 1919 ई. में नार्थ ईस्ट फ्रंटियर टैक्ट को तीन भागों में बाँटा गया। पहले वाले को पारा फ्रंटियर टैक्ट, दूसरे को सादिया

फंटियर टैक्ट और तीसरे को लखीमपुर फ्रंटियर टैक्ट कहा गया। सन् 1933 में शासन को सुचारू रूप से चलाने के लिए गवर्नर के परामर्शदाता के पद का सृजन किया गया। जो असमगवर्नर के अधीन आता था। स्वतंत्रता के पश्चात 20 जनवरी 1972 ई. को तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी ने सुबानसिरी जिले के मुख्यालय जीरो में एक समारोह के 'नेफा' दौरान इसका का नाम बदलकर अरुणाचल प्रदेश रखा गया।

1.4.7 मिजोरम

शब्द के तीन भाग हैं। अर्थात् मिजोरम तीन शब्दों से मिलकर बना है। मिजोरम में मि का अर्थ आदमी, जो का अर्थ पहाड़ी और रम का अर्थ भूमि माना जाता है। पूरे शब्द मिजोरम का अर्थ हुआ- पर्वतीय लोगों की रहने वाली भूमि। कुछ लोग इसेमिजो+उरम अर्थात् मिजो लोगों का हृदय स्थल भी कहते हैं। सन् 1972 के पूर्व यह असम प्रदेश का एक जिला था। जो उस समय भारत का सबसे बड़ा जिला था। मिजो जनजाति एक लड़ाकू एवं संघर्षशील जाति के रूप में मानी जाती है। डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी इनको तिब्बती बर्मी, मंगोलियन मूल का मानते हैं। इनका विधिवत इतिहास 18वीं शताब्दी से मिलता है। 20 फरवरी 1987 ई. को मिजोरम को पूर्ण राज्य का दर्जा प्राप्त हुआ।

द्वितीय अध्याय

पूर्वोत्तर विषयक हिन्दी कथा साहित्य: राजनीतिक एवं आर्थिक संदर्भ

2.1 परिचय

सर्वविदित है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज में रहकर ही अपना सर्वांगीण विकास करता है। अपने सर्वांगीण विकास के लिए उसे समाज की आवश्यकता पड़ती है। समाज के इतर उसका कोई भविष्य नहीं है। वह समाज में अपने जीवन के सभी अनुभवों को व्यक्त करता है । समाज के द्वारा बनाये गये कई नियमों और कानूनों से अपनी जिंदगी को चलाता है । समय-समय पर उन नियमों और कानूनों में बदलाव भी करता है ।

समाज में राज्य और सरकार भी महत्त्वपूर्ण घटक के रूप में मौजूद रहती है। तब जाहिर है कि किसी भी समाज को चलाने के लिए एक शासन व्यवस्था की आवश्यकता होती है। शासन-व्यवस्था के अंतर्गत राजनीति निहित होती है । राजनीति का संबंध राज्य से जुड़ा होता है। किसी भी राज्य की शासन व्यवस्था में राजनीति का हस्तक्षेप पाया जाता है। इस दृष्टि से देखा जाए तो राजनीति का क्षेत्र अत्यंत व्यापक हो जाता है । राजनीति के आधार पर ही किसी देश या राज्य का शासन कार्य करता है। बिना राजनीति के किसी देश या राज्य की कल्पना करना मुश्किल है। इसीलिए विद्वानों द्वारा यह कहना सत्य है कि देश अगर साध्य है तो राजनीति उसका साधन है।

राजनीति ही वह माध्यम है जिसके द्वारा कोई देश न सिर्फ अपनी इच्छा एवं आकांक्षाओं को अभिव्यक्त करता है बल्कि वह अपने देश अथवा राज्य में मौजूद प्रत्येक मनुष्य का सामना राजनीति से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से होता ही है । समाज का कोई भी क्षेत्र आज राजनीति से अछूता नहीं रह गया है। राजनीति की जड़ें आज समाज पर इतनी गहरी हो गयी हैं कि उसे हिलाना नामुमकिन सा हो गया है । राजनीति का हस्तक्षेप आजकल समाज में इस कदर बढ़ गया है कि वह पूरी मानवजाति को संचालित एवं शासित करने वाली एक ताकत के रूप में प्रतिष्ठित होने की कगार पर है।

समाज और राजनीति मानव जीवन के साथ इस तरह घुलमिल गयी है । जिसको अलग कर पाना असंभव सा हो गया है। इस संदर्भ में डॉ. डी. डी. तिवारी का कहना है कि "समाज और राजनीति के उचित सामंजस्य से बने मानव जीवन के विविध रूपों-धर्म, दर्शन, विज्ञान, कला, साहित्य, राजनीति आदि परस्पर इतने संगुफित हैं कि अलग-अलग नहीं किया जा सकता ।" [1]

इस संबंध में अरस्तु का कहना है कि "मानव एक सामाजिक प्राणी होने के साथ- साथ एक राजनीतिक प्राणी भी है । " [2]

इन उपरोक्त कथनों को पढ़ने के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक परिस्थितियों के साथ-साथ राजनीति भी मानव-जीवन को प्रभावित, संचालित एवं शासित करने में बड़ी भूमिका निभाती है। इसी प्रकार आर्थिक स्रोत भी किसी भी समाज के लिए आवश्यक चीज होती है। यह भी अनेक तरह से व्यक्ति के जीवन को प्रभावित करते हैं । उनके रहन-सहन को नियंत्रित करते हैं । उसके मूल्यबोध को निर्मित भी करते हैं। जिसकी चर्चा इस अध्याय में नीचे किया जा रहा है ।

2.2 राजनीतिक संदर्भ

इस वर्ष आजादी के पचहत्तर साल पूर्ण हो गये हैं। अर्थात् देश को अंग्रेजों से आजाद हुए पचहत्तर साल हो गये हैं। देश आजादी का अमृतमहोत्सव बहुत शिद्दत से मना रहा है। आजाद भारत अपने क्रांतिकारी चरित्रों का स्मरण कर रहा है। इस बीच हुए देश में प्रगति कार्यों का देशवासियों के सामने रखा जा रहा है। सुनहरे भविष्य के लिए नये-नये योजनाओं को लागू किया जा रहा है। समाज में हाशिये पर खड़े वर्गों को मुख्यधारा में लाने की अथक कोशिश की जा रही है। इस प्रक्रिया में अनेकों अनेक सरकारी योजनाएँ बनायी जा रही है।

इतना सब होने के बावजूद भी पूर्वोत्तर भारत के आदिवासियों की स्थिति में ज्यादा बदलाव नहीं दिखाई पड़ रहा है। उनकी स्थिति ज्यों-की-त्यों बनी हुई है। यहाँ तक की दिनोदिन बदत्तर होती जा रही है। उनको हमेशा उपेक्षित दृष्टि से देखा गया है। । वर्तमान में भी उपेक्षित देखा जा रहा है। इसके साथ ही उनका शोषण कम होने के बजाय प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। सभी सरकारें और राजनीतिक पार्टियाँ आदिवासियों के उत्थान, उनको न्याय तथा देश के मुख्यधारा से जोड़ने की बात करती हैं। उनको लेकर चलने की वादा भी करती हैं। परंतु अपने कहे पर अमल नहीं करती हैं।

चुनाव के समय राजनीतिक पार्टियों द्वारा किये गये | यह वादे या आश्वासन चुनाव के पश्चात ही खत्म हो जाते हैं। आज पूर्वोत्तर भारत का आदिवासी समाज ऐसा जीवन जीने पर विवश है। जहाँ उनको रहने के लिए न एक मकान है। न कबीले तक पहुँचने के लिए सड़क है। वह अपने जीवन के बुनियादी जरूरतों से कोसों दूर है। जिस कारण उसका जीवन-स्तर काफी निम्न दर्जे का हो कर रह गया है। जिस प्रकार समाज के तथाकथित निचले व वंचित समाज के साथ राजनीति छलावा देखने को मिल रहा है। कई अर्थों में उससे कहीं अधिक कुचक्र छलावा आदिवासियों के साथ हो रहा है। आदिवासी समाज राजनीति के छलावे का लगातार शिकार हो रहा है।

इसके साथ ही वह भ्रष्टाचार, और बेईमानी, आलोकतांत्रिक शासन-प्रणाली, पुलिस शासन व्यवस्था के अत्याचारों को सहने के लिए भी अभिशप्त है। आदिवासी समाज आदिम युग से ही आर्यो-अनार्यों, हूण शक, ब्राह्मणों, सामंतों, अंग्रेजों और आजाद भारत में नेताओं की विवेकहीन नीति और अन्यायपूर्ण निर्णयों और आदेशों का शिकार होता रहा है। डॉ. महेन्द्रनाथ दुबे भारत की भौगोलिक स्थिति को राजनेताओं की अनीतिकारी बँटवारे को लक्ष्य करके जो असम राज्य के विषय में जो लिखा है वह जानने योग्य है। वे लिखते हैं कि "राजनीतिज्ञों ने देश के भूगोल के साथ जो खिलवाड़ किया है उससे साधारण जनता के कष्टों का बोझ निरंतर बढ़ता रहा है। बँटवारे ने हालात ऐसे कर दिये कि एक छोटे से गलियारे के अलावा शेष भारत की अपेक्षा असम के इन सप्त प्रदेशों की सीमाएँ चारों ओर से भूटान, तिब्बत, चीन, म्यांमार और बांग्लादेश से ही मिलती है। चारों ओर से अन्यान्य देशों से घिरे इन प्रदेशों से शेष देश ऐसा अलग-अलग रहता है कि देश की स्वतन्त्रता की लड़ाई से लेकर अब तक की उसकी गतिविधियों के बारे में कोई कुछ जानना ही नहीं चाहता, जबकि जितनी जीवंतता से ये प्रदेश स्वयं समूचे देश से जुड़े रहकर स्वतन्त्रता के लिए लड़े और अब भी जीवन संघर्ष कर रहे हैं।" [3]

उक्त कथन से यह प्रतीत होता है कि पूर्वोत्तर का समाज खासकर आदिवासी समाज किस तरह से राजनीतिक नजरिये से किये गये भौगोलिक बँटवारे के चलते काफी कठिनाइयों का सामना कर रहा है। आदिवासी समाज जिसने अपनी सारी परेशानियों को झेलते हुए देश को आजाद कराने में उतनी ही तन्मयता से आजादी की लड़ाई लड़ी जितनी की दूसरे राज्य।

फिर भी आजादी के बाद उनकी स्थिति ज्यों की त्यों बनी हुई है। ये सवाल न सिर्फ आदिवासी समाज के लिए है बल्कि यह सवाल पूरे उस राजनीतिक तंत्र से है जिसके चलते उनकी यह स्थिति बनी हुई है। आजादी के बाद भी आदिवासी समाज की यथास्थिति में बने रहने पर आखिरकार 'मुक्ति' उपन्यास का एक पात्र खीझकर कहता है कि "15 अगस्त, 1947 को तुम भारत के स्वतंत्र होने की बात कैसे लिख सकते हो जबकि उसके पचास वर्ष बाद तक भी एक पीड़ित - प्रताड़ित व्यक्ति, जिसके पास पैसे न हो वह न्याय की गुहार करने न्यायालय में भी नहीं जा सकता ? और ऐसे व्यक्ति एक नहीं करोड़ों में हैं इस भारतवर्ष में, फिर इन करोड़ों को स्वतंत्रता मिली कहाँ ? " [4]

वर्तमान समय में पूंजीवादी वर्ग, वैश्वीकरण, भूमंडलीकरण, बाजारवाद के युग में भारत में संचालित राजनीति चाहे वह पूरे देश की हो अथवा किसी राज्य या क्षेत्र विशेष की सबकी नीयत में बेईमानी, भ्रष्टाचार, लूट-खसोट ही दिखाई देती है। पूर्वोत्तर के राज्यों को लोकतांत्रिक भारत का अंग बनने के लिए इन राज्यों को तथा यहाँ निवास कर रहे करोड़ों आदिवासियों को कितना कुछ सहना पड़ा है। इसका बहुत ही सटीक आख्यान श्रीप्रकाश मिश्र का उपन्यास 'जहाँ बाँस फूलते हैं' में मिलता है। इस उपन्यास की भूमिका में ही लेखक लिखता है कि "यह उपन्यास आम पाठक को पूर्वोत्तर भारत की समस्या समझने की ख़ासी सामग्री देगा।" [5]

पूर्वोत्तर भारत की आखिर क्या समस्याएँ हैं ? और उन्हें दूर करने के क्या-क्या उपाए किये जा सकते हैं। यह इस उपन्यास में देखने को मिलता है। 'जहाँ बाँस फूलते हैं' उपन्यास मिजोरम राज्य पर केंद्रित वहाँ की लूशेइयों जनजाति की समस्याओं को उनके जीवन संघर्ष के बीच से निकालकर वहाँ की जनजाति तथा सरकार दोनों के दृष्टिकोणों को सामने रखने का प्रयत्न करती है। इस उपन्यास में जहाँ एक तरफ हम मिजो लोगों द्वारा मिजोरम को स्वतंत्र रूप से आजाद रहने की लड़ाई के रूप में देखते हैं तो दूसरी ओर सरकार के अडिग फैसलों के चलते आए दिन आम लोगों को हो रही परेशानियाँ तथा उन पर किये जा रहे शोषण और अत्याचार को देखा जा सकता है।

सरकार की आदिवासियों के प्रति या यूँ कहें कि मिजोरम के अलगाववादी संगठनों के प्रति जिस प्रकार की नीति अपनायी गयी, जैसा कि उपन्यास के पात्र जो सरकारी अफसर की हैसियत से वहाँ तैनात है। सरकार चाहती है कि अलगाववादी लोग अपनी जिद्द - जो मिजोरम को स्वतंत्र करने की है, को छोड़कर सरकार के साथ सहयोग करें। विद्रोही संगठन एम. एन.ए बटालियन का एक जवान कहता है कि "केंद्रीय सरकार के गृह मंत्रालय का कोई अधिकारी, जो गाँव-गाँव में प्रभावशाली लोगों से मिलकर आश्वासन दे रहा है कि जंगल से लौट आए लोगों को पकड़ा नहीं जाएगा और जो हथियार के साथ सरकार को सरेंडर करेगा उसे पुनर्वास के लिए सरकार पूरी व्यवस्था करेगी।" [6]

आदिवासियों के लिए सरकारें तरह-तरह की घोषणाएँ करती रही हैं तथा आए दिन नयी योजनाएँ बनायी जाती हैं लेकिन उन घोषणाओं और योजनाओं के बरक्स सरकारें आदिवासियों को उनकी जगहों से बेदखल कर देती हैं। अपनी जमीन से बेदखली तथा पलायन की असह्य पीड़ा के दर्द के चलते मिजोरम के विद्रोहियों ने सरकार के खिलाफ ही हथियार उठा लिये। बाहरी लोगों के प्रवेश ने भी मिजोरम पर काफी नकारात्मक प्रभाव डाला है। बाहरी लोगों द्वारा वहाँ की संस्कृति पर बुरा प्रभाव पड़ता देख वे चाहते हैं कि बाहरी लोग यहाँ से चले जाएँ। बाहरी लोगों के प्रति मिजो लोगों में एक नकारात्मक छवि बनी हुई है। वह सभी अशुभ कामों के लिए बाहरी लोगों को जिम्मेदार ठहराते हैं, "रात हो गई थी। दूर जंगल में गीदड़ हुआँ हुआँ करने लगे थे। डोला ने सोचा जबसे मिजोरम में वाई आए हैं, मिजोरम में सियारिन फेकरने लगी है, यह तभी बंद होगा जब वाई चले जाएँगे। वाई कब जाएँगे - यह कोई नहीं जानता। पर जाएँगे जरूर यह कौन नहीं जनता। जब अंग्रेज़ चले गये तो बाई भी चले जाएँगे एक न एक दिन। उसी दिन की प्रतीक्षा में जीवन बिताना जीवन को लक्ष्य देना है।" [7]

जिस तरह से मिजो लोग बाहरी लोगों से नाखुश रहते हैं ठीक उसी तरह सरकार और उसकी नीतियों से भी। सरकार नीतियाँ या योजनाएँ तो बना देती है। किंतु उसका जमीनी स्तर पर क्या प्रभाव पड़ता है। उसका उदाहरण उपन्यास की ये पंक्तियाँ व्यक्त करती हैं। लेखक ने इस तरह लिखा है कि "सरकार ने ग्रामीण रोजगार योजना को तुरंत स्वीकृति दे दी थी। स्थानीय प्रशासन के माध्यम से ठीके पर काम कराने में तो बहुत समय लगता। योजनाओं का विस्तृत विवरण जब तक लालफीताशाही का घेरा तोड़ता और अधिकारियों की सीढ़ी पार करता तब तक तो उसका उद्देश्य ही समाप्त हो जाता।" [8]

इस तरह से आदिवासियों को लालच देकर उनकी जमीनों से बेदखल करके पलायन के लिए मजबूर किया जाता है। ताकि जंगलों का अधिग्रहण करके उसमें मौजूद बहुमूल्य धातुओं का खनन करके भारी मुनाफा कमाया जा सके। पलायन और जंगलों से बेदखली के उपरांत आदिवासियों का जन-जीवन दिन-ब-दिन नरक के समान बनता जा रहा है। उन्हें आर्थिक अभाव के चलते विद्रोही बनने पर मजबूर किया जा रहा है। इसलिए वह सोचते हैं कि सरकार अपने मतलब से हमारा इस्तेमाल करती है। उपन्यास का पात्र झा सरकार के रवैये को समझते हुए आक्रोश में आकर कहता है कि "जब भी उन्हें जरूरत होती है। वे हमें अपना औजार बना लेते हैं। जरूरत होती है तो हमारे संस्कारी संवेदनाओं को उभार देते हैं । जरूरत होती है तो हमारी संवेदनाओं पर संस्कार का पर्दा डाल देते हैं। अरे भला कहाँ गया था देश, जब यहाँ के लोग भूखों मर रहे थे ? जब अनाज की तलाश में हथियार उठा लिए तो देश कहाँ से आ गया ? अपने भोजन के लिए सब कुछ करने की छूट जानवरों को भी है। पर यह इंसान है जो आदमी तक के मुँह पर चाबी लगा देता है।" [9]

यह बहुत ही वाजिब सवाल है कि सरकार उस समय कहाँ थी जब मिजोरम की जनता भूखों मर रही थी । अपनी आजीविका के लिए कड़ी मेहनत के बावजूद वह भरपेट भोजन इकट्ठा नहीं कर सकती और अपनी ही जमीनों से पलायन करने पर विवश हुई तो उसे अपनी आजीविका के संसाधन कहाँ से प्राप्त होते ? आदिवासियों को अनेक घरों से बेदखल करके वहाँ की सम्पदा का दोहन निरंतर बढ़ता ही जा रहा है। इसके चलते आदिवासियों की स्थिति बदतर होती जा रही है।

आदिवासी समाज के पढ़े-लिखे लोग इन समस्याओं को समझ रहे हैं । वे इसे बदलने की कोशिश में लगे हुए हैं। विदित हो कि दोला 'जहाँ बाँ फूलते हैं' का एक महत्त्वपूर्ण पात्र है । वह मिजोरम को बदलना चाहता है लेकिन सरकार और उसके नेताओं की मिली भगत को रेखांकित करते हुए कहता है कि "मिजोरम पिछड़ा है, गँवार है। दुखी है, दरिद्र है। इसे बदलना चाहिए। इसे बदलना तो वाई भी चाहता है। पर वाई भी दो हैं - एक तो सरकार है, जो नीति बनाती है; उन्हें वैसा ही छोड़ दो, सिर्फ उन्हें लिखाओ-पढ़ाओ और आरक्षण के बदौलत नौकरी दो ।

सुरक्षा के लिए जरूरी हो तो सड़कें बनवा दो । लोग वाकई भूखों मरने लगें तो थोड़ा अन्न पहुँचा दो । ... दूसरी इस नीति को करने वाले वाइयों का दल है, जो विकास के लिए मिले पैसे अपनी जेब में रख लेता है, यहाँ का अदरक, चावल मिट्टी के मोल ले जाकर अपने वतन में सोना बनाता है, यहाँ के सुरा-सुंदरियों का उपभोग इस तरह से करता है कि जैसे मिजोरम उसकी जमींदारी हो, उपनिवेश हो और वह उपनिवेश का एक मात्र मालिक ।" [10]

सरकार और बाहरी लोगों की उपनिवेशवादी नीतियों को कार्यान्वित करने के लिए सरकारी फौज की टुकड़ियाँ कदर अपनी शक्ति का प्रदर्शन प्रायः करती रही हैं यह भी एक विचारणीय बिंदु है। मिजोरम में फौज की ज्यादती की बहुत सी कहानियाँ हैं। श्रीप्रकाश मिश्र भी अपने उपन्यास में सरकार के द्वारा कराये जा रहे विकास के कामों की आड़ में फौज किस कदर बर्बरता दिखाती रही है इसका चित्रण करते हैं। कहीं आदिवासियों को उग्रवादी करार देकर फर्जी मुठभेड़ दिखाकर निर्दोष लोगों को मारना तो कहीं उग्रवादियों को पकड़ने के लिए गाँवों की तलाशी के बहाने पूरे कबीले / गाँव को बर्बाद कर देना। मिजोरम के आदिवासी फौज की तलाशी से वाकिफ हैं। कप्तान हवा सीन जैसे ही पूरे गाँव की तलाशी लो' कहता है आलखुमा दहल जाता है क्योंकि "वह तलाशी का मतलब खूब समझता था; नगदी की लूट, जानवरों की छूट, बेगुनाहों पर बूट और युवतियों की छातियों पर मूठ।" [11]

आदिवासियों का पलायन न सिर्फ आर्थिक आधार पर है बल्कि कुछ हद तक राजनीति भी आदिवासियों के पलायन का कारण रही है। इस पलायन को वह अपनी नियति मानकर चुप-चाप एक जगह से दूसरी जगह जाने पर मजबूर हो रहा है। अपनी जगह को छोड़कर जाने की मजबूरी कैसी होती है। इसका जीवंत चित्रण श्रीप्रकाश मिश्र इस तरह करते हैं कि "अधिकांश लोग हिचकिचाते हुए ही सही, उनके हुक्म की तामील में घरों से बाहर आ-जा रहे थे। कुछ अभी भी अवश्यसंभावी की किसी बहाने टल जाने की सकारात्मक उम्मीद में अपनी दीवार या आँगन को एक बार और एक बार और देख लेने की भावना से उबर नहीं पा रहे थे।" [12]

यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि 'जहाँ बाँस फूलते हैं' उपन्यास भूख, विस्थापन, भ्रष्टाचार, शोषण और अन्याय के विरुद्ध मिजो जनजातियों के विद्रोह की कहानी है। आजादी से पूर्व पूर्वोत्तर भारत के राज्यों में राजनीति, कूटनीति तथा उसका नेतृत्व कम देखने को मिलता है। उस समय किसी जनजाति का एक कबीला होता था। उस कबीले का एक सरदार। सरदार की देख-रेख में ही पूरा कबीला लगा रहता। ऐसा भी नहीं है कि उस समय राजनीतिक कूटनीति का दुश्चक्र नहीं था।

सरदार या कबीले से बगावत के स्वर प्रायः उठा करते थे परंतु आजादी के उपरांत आदिवासी समाज में कोई बड़ा राजनीतिक नेतृत्व करने वाला नहीं हुआ। जिसके चलते उन्हें आम लोगों में जगह मिल सके। इस संदर्भ में गोपीनाथ बरदलोई का जिक्र करना जरूरी हो जाता है। उनके सहयोग से ही पर्वतीय क्षेत्रों में निवास करने वाली जातियों के लिए कुछ अधिकार संविधान में सुरक्षित रखे गये। मुक्ति उपन्यास में इसका जिक्र ऐसे मिलता है। लेखक ने लिखा है कि ""महान नेता बरदलोई द्वारा प्रस्तावित इस छठी अनुसूची में ऐसे महत्त्वपूर्ण तथ्य हैं, जो पर्वतीय क्षेत्रों में निवास करने वाली जनजातियों की इस आशंका को दूर करेंगे जो स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इन सीधे-सादे, सरल चित्त वाले परंतु पिछड़े हुए लोगों के हितों का लोग अधिकाधिक शोषण करेंगे। इस तरह यह छठी अनुसूची पहाड़ी और मैदानी जनता के पारस्परिक स्नेह-सौहार्द को बढ़ाने वाली है। अतः अत्यंत आदरणीय है। " [13]

आदिवासी समाज न सिर्फ आंतरिक बल्कि बाहरी संकटों से हमेशा से घिरा रहा है। आदिवासी समुदाय जो कि सहज और सरल व्यक्तित्व से लबरेज है उसमें छल, कपट जैसी राजनीतिक कूटनीति नहीं पायी जाती। तभी तो वह कभी विकास के नाम पर तो कभी सभ्य बनाने | कभी समान अधिकार देने के नाम पर ठगे जाते हैं। पूर्वोत्तर भारत के राज्यों में संकटों की कमी नहीं है। वहाँ निवास करने वाले अधिकांश समुदायों का सामना अनेक समस्याओं से होता है।

'आहुति' श्रीधर पाण्डेय का पूर्वोत्तर भारत में वर्मा की सीमा पर स्थित 'उग्रपंथी हिंसा तथा राजनीतिक अस्थिरता से ग्रसित मणिपुर पर केन्द्रित है । इस उपन्यास का परिचय देते हुए श्रीधर पाण्डेय वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए लिखते हैं कि "इस खूबसूरत सीमावर्ती छोटे राज्य के लोगों का संकट नजदीक से देखने के बाद सारे देश में व्याप्त – भ्रष्टाचार, राजनीतिक अस्थिरता, नारी उत्पीड़न, बाल-शोषण, क्षेत्रीयता का उन्माद, सांप्रदायिकता की आग हिंसा और घृणा की फैली लपटें मन में देश के भविष्य के प्रति आशंका उत्पन्न करती हैं ।" [14]

लेखक की यह आशंका महज आशंका नहीं है वरन् वहाँ निवास करने वाले हर एक व्यक्ति की वास्तविक स्थिति है । पूर्वोत्तर भारत के आदिवासी समाज में सरकार और उसकी नीतियों के प्रति असंतोष का भाव स्वाधीनता आंदोलन के साथ ही शुरू हो गया था। यहाँ के निवासी किसी की छत्र-छाया में जीवन व्यतीत करने के बरक्स अपना स्वतंत्र जीवन जीने के इच्छुक हैं। वे अपने 'अनुसार अपना जीवन व्यतीत करना चाहते हैं जबकि अखंड भारत का हिस्सा होने के चलते सरकार सभी राज्यों के साथ इन्हें भी समाहित करके एक मजबूत भारत बनाने की जद्दोजहद लगातार करती रही। यहीं से आदिवासी समाज में अपनी सरकार के प्रति असंतोष की भावना देखने को मिलती है। यही असंतोष राजनीतिक संदर्भ का लबादा ओढ़कर विद्रोही का रूप धारण कर लेता है । 'आहुति' में यह देखने को मिलता है कि किस तरह से सरकार के विरुद्ध यह असंतोष एक हिंसा का रूप धारण कर लेता है। मणिपुर जिसका सांस्कृतिक इतिहास सैकड़ों वर्ष पुराना है। हिमालय की पर्वत श्रृंखलाओं में उत्तर-पूरब के इस क्षेत्र में दुर्गम पहाड़ों को पार कर लोग पहुँचे होंगे ।" [15]

यहाँ की संस्कृति में बाहरी राज्यों से आए लोगों के लिए भी उतनी ही जगह है। जितनी वहाँ के निवासियों की लेकिन कुछ दो-तीन पीढ़ियों के नौजवानों में बाहरी लोगों के प्रति ईर्ष्या और घृणा की भावना निरंतर बढ़ती रही है । यह घृणा इतनी बढ़ गयी कि भारत के अन्य राज्यों के लोगों को मणिपुर से निकालने के लिए माँगेगे उठने लगीं। "गोहाटी में भारत के अन्य प्रदेशों के नागरिकों को निकालने की माँग धीरे-धीरे उग्र होती जा रही है।

मारपीट और हिंसा की खबरें आ रही थीं। नवयुवक तथा छात्र इस आंदोलन में प्रमुख रूप से सक्रिय थे। उनके विरोध के प्रदर्शन ने पूरे शासन को अस्त-व्यस्त कर दिया। जुलूस, धरना, हड़ताल से बढ़कर यह आंदोलन आसाम में तेलशोध कारखाना को भी बंद कराने में सफल हो गया है। धीरे-धीरे यह आंदोलन हिंसात्मक रूप लेने लगा है । ... इस आंदोलन की अनुगूँज उत्तर-पूर्व के अन्य राज्यों में भी पहुँचने लगी। आसाम के आंदोलन के नेताओं ने अन्य राज्यों के युवक संगठनों से भी संपर्क करना शुरू किया ।"[16]

यह माँग इतनी हिंसात्मक हो गयी कि बाहरी लोगों के मन में असुरक्षा की भावना ने जन्म लेना शुरू कर दिया। आहुति के लेखक ने इस प्रकार बताता है कि "बाहर वालों में दो तरह के लोग हैं, बहुत बड़ी संख्या में जो अस्थायी रूप में रह रहे हैं। जो नौकरी कर रहे हैं, व्यापार में हैं या मजदूरी कर रहे हैं, वे यहाँ से कभी भी जा सकते हैं। पर जो डेढ़-दो सौ वर्ष पूर्व आकर यहाँ बस गए थे वे तो अपने मूल स्थान से उखड़ चुके हैं। उनका ठौर-ठिकाना कहीं नहीं, उन्हें भी अब सुरक्षा की भावना सताने लगी है ।" [17]

मणिपुर का आदिवासी समाज जो वहाँ का मूल निवासी है। उसे पता है कि स्थिति सामान्य होने पर हालात फिर से काबू में आ जाएँगे और अविश्वास का ये जो तूफान है। वह धीरे-धीरे बीत जाएगा। हालात चाहे जो हों ऐसे मामलों में सिर्फ चंद लोगों का ही हित होता है।

चाहे वह राजनीतिक हित हो या फिर धार्मिक और सांस्कृतिक राजनीतिक झांसे में फँसकर पूर्वोत्तर भारत के आदिवासी अपनी अस्मिता और पहचान को बचाए रखने के लिए दूसरों के प्रति असंतोष का भाव रखता है। हालांकि समय के साथ समाज भी बहुत तेजी से बदल रहा है।

ऐसे में कुछ शिक्षित आदिवासी इन अंदरूनी मसलों को समझते हैं। पूर्वोत्तर भारत के राज्यों में राजनेता अपना प्रभुत्व कायम करने के लिए समय-समय पर शांत घाटियों में भी अशांति फैलाने का काम करते हैं। वे अपने स्वार्थ के लिए दंगे-फसाद जैसे हथकंडे अपनाते हैं। इस हथकंडे को लोग समझने लगे हैं। उपन्यास का नायक मनोज ने भी इस बात को अच्छे से महसूस कर लिया था। वह सोचता है कि "कुछ पुराने लोगों का पहले का अनुभव था। वे जानते थे यह सब यहाँ की राजनीति है। उनकी धारणा थी कि हर पाँच-दस वर्ष बाद इस तरह की स्थिति उत्पन्न की जाती है, लेकिन इसमें यहाँ की जनता का पूरा हाथ नहीं है। निहित स्वार्थ वाले तथा अलगाववादी तत्वों के द्वारा बवाल घृणा मचाकर अपना प्रभाव बढ़ाने की कोशिश होती है।" [18]

राजनेताओं और अलगाववादियों के दुश्चक्रों में फंसकर निर्दोष लोगों को काफी अत्याचार का सामना करना पड़ता है। अलगाववादियों के किसी आक्रमण के जवाब में सेना के जवानों के द्वारा निर्दोष लोगों पर अत्याचार ने पूरे राज्य में अशांति और असुरक्षा के वातावरण बनाने का काम किया मनोज को स्वयं भी कभी-कभी ऐसे वातावरण का समाना करना पड़ता है। "स्थानीय लोगों के मन में पीड़ा से अधिक घृणा और क्रोध का उबाल देख वह चौंक जाता है। यह क्रोध और उसे अपने प्रति भी लगता है।" [19]

और अंत तक जाते-जाते मनोज का यह संशय सच साबित होता है। जब चानू से सबके विरोध के बावजूद विवाह करता है तो उसकी कीमत चानू अपनी जान देकर चुकाने की कोशिश करती है। राजनीतिक रूप से खड़ी की गयी घृणा और हिंसा के दीवार को ढहाने के लिए चानू अपनी जान दे देती है। उसका जान दे देना न सिर्फ अलगाववादी संगठन के लोगों को सच से रूबरू कराना था बल्कि नस्ल भेद और स्त्री अस्मिता के साथ आदिवासी जीवन संदर्भ को व्याख्यायित करने का प्रयास करती है। चानू की मृत्यु को शिक्षित समाज जिसमें उसकी सहेली अनुराधा भी आती है। ऐसे जाया नहीं होने दे सकते थे बल्कि उसकी मृत्यु को एक घृणा और नस्ल भेद के बरक्स खड़ा करके एक नये समाज की परिकल्पना प्रस्तुत करने की कोशिश की गयी है। अनुराधा मनोज को समझाते हुए कहती है कि "चानू का बलिदान घृणा और हिंसा को मिटाकर रहेगा, हमें उसका संदेश कोने-कोने में ले जाना है। " [20]

चानू का संदेश ही एक समतामूलक समाज की स्थापना कर सकता है। जहाँ किसी भी प्रकार के राजनैतिक षणयंत्र, अलगाववादियों के फरमान और पारिवारिक सम्बन्धों में सबकी अपनी स्वतन्त्रता हो। पूर्वोत्तर भारत के आदिवासी समाज में नस्ल भेद की राजनीति भी काफी गहरी है। इसके चलते भी पूर्वोत्तर भारत के राज्य और इनके इतर के राज्य के लोगों में एकता का सूत्र कमजोर पड़ता है। जिसे कभी भी कोई राजनीतिक गतिविधि तोड़ देती है। हालांकि इस सूत्र को बनाये रखने में शिक्षित वर्ग अपनी सूझ-बूझ की बदौलत राजनीतिक पार्टियों के स्वार्थ हित और अलगाववादी रवैये को समझकर उनसे निपटने के उपायों की खोज कर रहा है।

पूर्वोत्तर भारत का आदिवासी समाज अपनी माली हालत में सुधार और उसके नेतृत्व के लिए इसी शिक्षित वर्ग की ओर आशा भरी नजरों से देख रहा है। उन्हें पता है कि अब ये राजनेता सिर्फ हमें एक वोट बैंक की हैसियत से ही देखते हैं। उनकी नजर में हम सिर्फ और सिर्फ एक वोट हैं और कुछ नहीं इसलिए राजनेता उन्हें फूटी आँख भी नहीं सुहाते। लेकिन विडंबना यह है कि आदिवासी समाज के शिक्षित वर्ग का अधिकांश तबका अपनी परंपरा और संस्कृति को भूलते हुए आधुनिकता की हवा के रुख की तरफ अपनी पीठ किये हुए उसकी

तरफ अपने आप को बहाकर ले जा रहा है। जिस प्रकार आधुनिकता ने मनुष्य को व्यक्तिनिष्ठ कर दिया है। उसी प्रकार आदिवासी समाज को भी अपने समाज से अलग कर व्यक्तिनिष्ठ बना दिया है।

जो अपने लिए सुख सुविधा के लिए तमाम साधन जुटाने में लगा है। वह अपने समाज के नाम पर मिल रही सरकारी या गैर-सरकारी सुविधाओं का उपभोग तो बगैर झिझक के किये जा रहा है परंतु जब समाज को वापस कुछ लौटाने की नौबत आ रही है तो समाज से कट जाने में भी गुरेज नहीं कर रहा। आदिवासी समाज के कुछेक लोग सरकारी शासन प्रणाली का हिस्सा बनकर सरकार द्वारा की जा रही लूट का हिस्सा बनते जा रहे हैं। उस वर्ग से इतनी तो अपेक्षा होनी चाहिए कि कम से कम आदिवासी समाज के खिलाफ हो रहे अत्याचार, जुल्म और शोषण को चाहे वह राजनीतिक हो चाहे, सामाजिक या चाहे आर्थिक अगर उसको रोक नहीं सकते तो उसमें लिप्त भी न हों।

पूर्वोत्तर भारत के आदिवासी उपन्यासों में भारतीय राजनीतिक व्यवस्था का बहुत ही सजीव चित्रण देखने को मिलता है। जिस प्रकार आज भारत में दलगत राजनीति और वंशवाद एवं भाई-भतीजावाद की राजनीति हावी हो गयी है। उससे आदिवासी समाज भी अछूता नहीं रह गया है। दलगत राजनीति के चलते आदिवासी वोटों के भ्रम का शिकार हो रहे हैं।

इसका एक ही कारण है- आदिवासियों की राजनीतिक नेतृत्व में कमी। राजनीति में आदिवासी समाज की कमी के चलते उन्हें सरकारी तंत्र के द्वारा आए दिन शोषण का शिकार होना पड़ रहा है। अगर वाकई सरकार देश की तरक्की और सबको साथ लेकर चलने के लिए प्रतिबद्ध होती तो आदिवासी समाज से पिछड़े एवं निम्न वर्ग के नेताओं को चुनना चाहिए जिन्हें आदिवासियों की समस्या एवं उसके जीवन संघर्ष का पता हो। लेकिन इन बातों को दरकिनार करते हुए सरकार दलगत राजनीतिक पार्टियों में बंटकर उसमें वंशवाद एवं भाई-भतीजावाद को स्वीकृत कर आम पिछड़े एवं आदिवासी लोगों के अधिकारों का हनन कर रही है।

आदिवासी समाज जो अपने अस्तित्व और अस्मिता को बचाये रखने के लिए सदियों से लड़ता आ रहा है। आज राजनीति के जाल में फँसता जा रहा है। आदिवासियों की अस्मिता एवं अस्तित्व को ठेस पहुँचाए बिना सरकार को ऐसे नियम या नीति का गठन करना चाहिए जहाँ यह पता लगाया जा सके कि आदिवासियों की समस्याएँ क्या-क्या हैं? बगैर उनकी समस्याओं को हल किये उनकी स्थिति में सुधार नहीं किया जा सकता। सरकार का यह भी दायित्व होना चाहिए कि आदिवासियों के सुधार की यह स्थिति स्वाभाविक रूप से हो। विकास के नाम पर उनका शोषण न होने पाये।

2.3 आर्थिक संदर्भ

आर्थिक संदर्भ के आधार पर पूर्वोत्तर के आदिवासी समुदाय का अध्ययन किया जाए तो यह पता चलता है। इनके जीवन का मूल आधार प्रकृति है। वर्षों से प्रकृति से संबंधित जंगल, पहाड़, नदियाँ उनकी आय का स्रोत रहे हैं। प्रकृति के इन्हीं नाना रूपों से वह अपने लिए खाद्य सामग्री अर्जित करते रहे हैं। वह आय की पूर्ति के लिए पहाड़ों, जंगलों से वह खाद्य सामग्री का संकलन करते हैं। जिसमें शिकार करना, मछली मारना, पशुपालन, झूमखेती मुख्य है। जो श्रम पर आधारित है। जैसा कि हमें ज्ञात है कि आदिवासियों का जीवन प्रकृति पर टिका हुआ है। भूमंडलीकरण तथा पूंजीवादी व्यवस्था के आने के बाद जब पूरा विश्व एक बाजार के रूप में विकसित हो गया है।

लाजिमी है कि इन व्यवस्थाओं ने आदिवासी समाज को भी काफी हद तक प्रभावित किया है। भूमंडलीकरण की बाजारवादी संस्कृति ने आदिवासियों के आर्थिक जीवन को भी काफी प्रभावित किया है। वर्षों से जिस प्रकृति को अपनी आजीविका का साधन इन्होंने बनाया है। उसका दोहन बहुत ही तीव्र गति से सरकार विकास के नाम पर कर रही है। जिसको लक्षित करते हुए रमणिका गुप्ता लिखती हैं कि "भारत में आदिवासी जनसमूहों का विस्थापन व पलायन सदियों से ही जारी है। परंतु इधर विकास के नाम पर बनायी गयी नीतियों के कारण वे केवल अपनी जमीनों, जंगलों, संसाधनों व गाँवों से ही बेदखल नहीं हुए, बल्कि उनके नैतिक मूल्यों, नैतिक अवधारणाओं, जीवन शैलियों, भाषाओं एवं संस्कृति से भी इनके विस्थापन की प्रक्रिया तेज हो गयी है। ''[21]

विस्थापन की प्रक्रिया केवल उनकी सामाजिक, सांस्कृतिक पद्धतियों को प्रभावित किया है बल्कि जीवन यापन के लिए मुख्य आर्थिक स्रोत दूर जंगल से भी कर दिया है।

ऐसा देखा गया है कि आदिवासी समाज के लोग अधिक संतोषी होते हैं। उनके अंदर गैर- आदिवासियों की तरह भविष्य के लिए सामग्री संग्रह करने की प्रवृत्ति नहीं होती। वह केवल आज में जीवन व्यतीत करते हैं। प्रकृति से उतनी ही सामग्री का संचयन करते हैं। जीतने की उन्हें आवश्यकता होती है। 'जहाँ बाँस फूलते हैं में लेखक मिजोरम की जनजाति के विषय में लिखते हैं कि "तुम लोग बहुत जल्दी धैर्य खो देते हो। कमाई के लिए निकले हो तो कमाई ही ध्यान में रखनी चाहिए। देखते नहीं वाई वर्षों हमारे बीच अपने वतन से दूर पड़ा रहता है। भिखारी की तरह आता है किन्तु नवाब की तरह जाता है। और हम हैं कि अपनी स्थिति से एक कदम भी ऊपर नहीं उठ पाते।" [22]

इसके एवज में मिजो लोग इस बात पर संतोष करते हैं कि वाई तो कल का सपना देखता है। 'हमें कैरियर से नहीं आज से मतलब है'। इस तरह की कूपमंडूकता भी आदिवासी समाज के आर्थिक जीवन की समस्याओं को बनाये रखे हुए है। हालांकि कुछ नये विचार और शिक्षित वर्ग इन समस्याओं से निजात पाने के लिए उपाय सोचता रहता है। उपन्यास में लकड़ी काटने वाले समूह का सरदार जो बाकियों से समझदार और तजुर्बेदार लग रहा था। कहता है कि, "कैरियर नहीं सोचते हो तो तुम्हारा ही नुकसान है। कब तक अपनी आलसी जीवन-पद्धति की सराहना करते रहोगे, जबकि भारत की जीवन-धारा बड़ी तेजी से स्थानीय संस्कृतियों को आत्मसात करती बेरोक-टोक बढ़ रही है।" [23]

आदिवासी समाज का भविष्य के प्रति आश्वस्त रहना तथा संघर्षमय जीवन-यापन करना ही जैसे इनके जीवन का लक्ष्य बन गया है।

उपन्यास के शीर्षक की गाथा ही मिजो आदिवासियों के आर्थिक संदर्भ की ओर इंगित करती है। हालांकि इस उपन्यास का शीर्षक एक मिथक कथा को ध्यान में रखकर लिया गया है परंतु फिर भी यह मिथक उनकी आर्थिक संदर्भ की ओर इशारा करता है। लेखक लिखता है कि मिजोरम में जनश्रुति है कि "हर पचास साल की आवृत्ति पर यहाँ बाँस फूलते हैं। उनके बीजों को खाकर चूहे बहुत बच्चे पैदा करते हैं, जो फसल खा जाते हैं और मिजोरम में आकाल पड़ जाता है। ऐसा ही अकाल 1958 में पड़ा था, जिसके परिणामस्वरूप 1966 का विद्रोह हुआ।" [24]

वास्तव में उपन्यास का यह शीर्षक सिर्फ मिथक कथा नहीं है बल्कि यह अपनी व्यंजनात्मक रूप में प्रभाव छोड़ती है । मिजो आदिवासियों की आर्थिक तंगहाली इस कदर थी कि उनके पास भर पेट खाने के लिए भोजन भी मयस्सर नहीं हो पाता था। हालात यह है कि "घड़े में पानी भी रखा था । पर खाने के नाम पर कुछ भी न मिला। अगल-बगल साल भर पहले यहाँ मिर्च और अदरक की खेती हुई थी और उनके लमर दिखाई पड़ रहे थे । पर क्या अदरक और मिर्चा भूख मिटाने के लिए काफी होता है। " [25]

आदिवासियों की इस हालत के पीछे उनका सहज और सरल होना भी माना जा सकता है। आदिवासी लोग व्यवहार में सहज और सरल होते हैं। उनके यहाँ किसी प्रकार का छल-कपट, विश्वासघात या किसी का बुरा करने की आदतें नहीं पायी जाती । वे तो अपना जीवन कठिनाइयों में व्यतीत करते हुए बिता रहे हैं। लेकिन उनकी यह शराफत एवं व्यवहार कुशलता तथकथित शिष्ट लोगों को हजम नहीं होती। पूंजीपति वर्ग के कुछ लोग आदिवासियों के श्रम का फायदा उठाकर अपनी वस्तुओं की पूर्ति करने में लगे हुए हैं। आदिवासी जो दिन-रात मेहनत करके पहाड़ों के पत्थरों को काटकर खेती लायक भूमि तैयार करते हैं। उसके तैयार होते हुए कोई एक पूंजीपति वर्ग उस पर अपना कब्जा जमा लेता है।

'जहाँ बाँस फूलते हैं' के समाज में "भूख का मारा मिजो कुछेक वर्षों तक इंतजार करता था, फिर जंगल को साफ कर धान लगा जाता था। फसल जब तैयार होने को होती थी, तब आपना झोपड़ा बना जाता था । फिर एक दिन रात को इलाके के पुराने जमींदार रामनाथ लश्कर और मुश्ताक खांड़कर अपने हाथियों के साथ आ धमकते, इनके घरों को उजाड़ फसल काट ले जाते और खेती लायक जमीन दो-चार साल के लिए कब्जा कर लेते” [26]

ऐसी परिस्थिति में आदिवासी समाज में सरकार और शासन के प्रति असंतोष और विद्रोह की भावना का जागृत होना स्वाभाविक जान पड़ता है। आदिवासियों के शोषण को जब तक सरकार की शासन व्यवस्था दूर नहीं करती तब तक उनके आर्थिक सहयोग में सहायता करना सरकार का ध्येय होना चाहिए।

पूर्वोत्तर भारत के राज्यों में निवास करने वाले आदिवासी या यूँ कहें कि समस्त भारत में रहने वाले आदिवासी समुदाय अपनी प्रकृति के जल, जंगल और जमीन के माध्यम से ही वह अपने जीवन व्यतीत करने के साधनों एवं मूलभूत चीजों को जल, जंगल, जमीन से ही ग्रहण करता है । स्वतंत्रता से पूर्व आदिवासी समाज अपने आय के स्रोत के लिए इन्हीं माध्यमों पर निर्भर रहे हैं लेकिन भूमंडलीकरण, बाजारवाद और फिर स्वतंत्रता ने देश को बहुत हद तक बदल दिया है। इसने न सिर्फ देश बल्कि आदिवासी समाज के आर्थिक संदर्भ को भी बदल कर रख दिया है।

आदिवासी समाज के इन आर्थिक पक्षों में इन परिवर्तनों को लक्ष्य करके आदिवासी जनजीवन के आर्थिक संदर्भ को रेखांकित करते हुए विमल शंकर नागर ने लिखा है कि "अधिकांशतः भारतीय जनजातियाँ ग्रामों व नगरों से दूर वनों, पहाड़ों एवं पठारी प्रदेशों में रहती हैं । जहाँ उनके ये साधन फल- फूल एकत्रित करना, लकड़ी काटना, पशु-पक्षियों एवं मछली पकड़ना और शिकार आदि करना रहता है । यह सब प्रायः भौगोलिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है । सभ्यता के विकास के साथ-साथ नगरों एवं ग्रामों के प्रभावों से जनजातियों की अर्थव्यवस्था में भी परिवर्तन आ रहा है । आजकल बहुत सी जनजातियाँ सुनिश्चित स्थानों में रहकर खेती करने लगी हैं।” [27]

पूर्वोत्तर भारत के आदिवासियों का आर्थिक जीवन भूमंडलीकरण के आने के बाद काफी प्रभावित हुआ है। सदियों से यह जल, जंगल, जमीन को ही अपनी आजीविका का साधन मानते हुए चल रहे थे लेकिन जैसे-जैसे देश प्रगति करता गया वैसे-वैसे विकास के नारे बुलंद किये जाते रहे हैं। विकास की इस प्रक्रिया में आदिवासी समाज आज भी अपनी आजीविका के लिए संसाधनों पर निर्भर है लेकिन अब वह भी उपलब्ध नहीं है। आदिवासी समाज एवं उनके आर्थिक संदर्भ का जंगलों से गहरा संबंध रहा है। जंगल आदिवासियों के लिए रहने के साथ जीविका के साधन भी मुहैया कराता रहा है। जंगल से वे भोजन, लकड़ी, जड़ी-बूटियाँ, औषधि आदि सदियों से प्राप्त करते आ रहे हैं। तथा जंगल के इन संसाधनों को पूरी स्वतंत्रता के साथ इस्तेमाल करते रहे हैं। इसके साथ वे जंगल से प्राप्त सामग्री को हाट या बाजार में बेचकर कुछ आवश्यक वस्तुओं को खरीद पाते हैं।

भूमंडलीकरण की प्रक्रिया ने न सिर्फ आदिवासी समाज से उसकी आजीविका का एक मात्र साधन जंगलों से जो उनकी पुस्तैनी था उससे बेदखल कर दिया बल्कि उन्हें मजदूर बनने पर विवश भी कर दिया। मजदूर बनाने के साथ ही बाजारवादी संस्कृति ने शहरी चकाचौंध की एक नयी दुनिया से आदिवासी समाज का साक्षात्कार भी कराया जिससे युवा पीढ़ी पर इसका रंग चढ़ना स्वाभाविक था। 'आहुति' में श्रीधर पाण्डेय लिखते हैं कि "पश्चिमी सभ्यता की हवा घाटी के युवकों को भी अपने प्रभाव में ले चुकी है। अंग्रेजी सिनेमा, संगीत और नृत्य की लोकप्रियता बहुत अधिक बढ़ी है। इम्फाल के सबसे पुराने सिनेमाघर में अंग्रेजी फिल्मों में युवक-युवतियों की भीड़ जुटी रहती है।" [28]

नयी सभ्यता के संपर्क में आने के उपरांत आदिवासी समाज बहुत तेजी बदलता रहा है फिर भी आदिवासी समाज का आर्थिक पक्ष जंगल ही ठहरता है। आदिवासी समाज की आर्थिक स्थिति कितनी दयनीय है इसका खुलासा 'जंगली फूल' में पता चलता है "तानी ने देखा उसे। हड्डियों का ढाँचा था वह तन पर कोई वस्त्र नहीं था। वे सारे लोग ही नंग-धड़ंग थे। शरीर का हर अंग भोजन को पुकारता था।" [29]

इसको पढ़कर लगता है कि सरकार द्वारा किये गये वादे या उसके द्वारा लागू की गयी तमाम सरकारी योजनाएँ कहाँ गयी ? आदिवासियों से उनकी जमीनें, उनके घर को छीनकर विकास के नाम पर उन पर शोषण का चक्र चलाया जा रहा है। जिससे त्रस्त होकर आदिवासी समाज सिर्फ जी मात्र रहा है। अपने अस्तित्व और अस्मिता से लड़ते-लड़ते वह थक गया है। अब उसके पास इतनी भी ताकत नहीं बची है कि वह सामने वाले का सामना कर सके। तभी पूरा आदिवासी समुदाय कहता है "हमें छोड़ दीजिए। हमारे सारे रिश्तेदारों को उन लोगों ने बंदी बना लिया। वे अब उनके दास हैं। इन बच्चों पर दया कीजिए ! हम पर रहम कीजिए ! हमें जाने दीजिए। हमारे शरीरों में तुमसे लड़ने की ताकत नहीं है। [30]

यह वाक्य क्या महज एक वाक्य है ? नहीं यह तमाम उन आदिवासी समाज की जीवनगाथा है जो आए दिन उनके साथ विकास के नाम पर किया जा रहा शोषण है। आदिवासियों को जंगल में जाने से रोकना ही सबसे बड़ी आर्थिक क्षति है। सरकारी फरमान के अनुसार बिना अनुमति जंगल से कोई कुछ भी नहीं ले सकता। ऐसे फरमान को आदिवासी समाज अगर मान भी लेता है तो अपनी आजीविका के संसाधन कहाँ से और कैसे प्राप्त करेगा। पूर्वोत्तर के आदिवासी समाज की आर्थिक समस्याओं का सबसे बड़ा कारण गरीबी है। यह गरीबी और अभावग्रस्तता ही उनके भीतर सरकार और गैर-पूर्वोत्तर निवासियों के लिए आक्रोश और असंतोष का भाव प्रकट करता है। इसी संदर्भ

में माधवेंद्र जी ने अपनी पुस्तक 'पूर्वोत्तर की सांस्कृतिक पहचान' में लिखा है कि "पूर्वोत्तर की समस्याओं का एक बड़ा कारण यहाँ की गरीबी भी है। बेरोजगारी एक बड़ी समस्या है।

कृषि योग्य पर्याप्त भूमि नहीं है। केवल झूम खेती के सहारे कुछ धान, मक्का और सब्जियाँ उपजायी जाती हैं। औद्योगीकरण यहाँ अभी प्रारम्भिक अवस्था में भी नहीं है। युवा बेरोजगार अपनी जमीन छोड़ना नहीं चाहते और पर्याप्त काम मिलता नहीं। आक्रोश, असंतोष यहीं से प्रारम्भ होता है। सरकार अनुदान देकर अपने कर्तव्यों की इतिश्री मान लेती है। कोई व्यवस्थित औद्योगिक विकास का जनजातीय मॉडल अभी तक विकसित ही नहीं हुआ है। [31]

आदिवासियों के आर्थिक अभावग्रस्त होने के लगभग यही कारण हैं और इन्हीं कारणों और बेकारी का जीवन जीने पर विवश होने पर तथाकथित हिंसा का मार्ग बनता है। जहाँ नक्सलवाद के नाम पर भी उनका शोषण होता है। आदिवासियों की इन समस्याओं का पुख्ता समाधान न तो सरकार के पास है और न ही पढ़ा-लिखा युवा वर्ग ही इन समस्याओं को सुलझाने में योग्य नजर आ रहा है। पूर्वोत्तर को हम सभी अपना कहते और मानते हैं लेकिन पूर्वोत्तर को समझने की जमीनी समझ किसी के पास नहीं है।

आज अगर बुद्धिजीवी या युवा वर्ग जो कुछ भी थोड़ा अपना संबंध इस क्षेत्र से जोड़ रहा है वह केवल नौकरी तक ही सीमित है। सिर्फ नौकरी के लिए ही यह युवा वर्ग पूर्वोत्तर की तरफ जाना चाहता है और इसे भी वह एक सजा के रूप में देखता है | ऐसा नहीं है कि कुछ लोग पूर्वोत्तर को समझना चाहते, नहीं चाहते हैं भले ही वह नौकरी के सिलसिले में गये हों। 'आहुति' मणिपुर के समाज पर लिखा गया उपन्यास है। स्वतंत्रता के बाद किस तरह से समाज में बढ़ती आर्थिक असमानता के चलते उपन्यास का पात्र मनोज बिहार से हजारों कोस दूर मणिपुर में शिक्षक की नौकरी करता है। आर्थिक अभाव के चलते ही इतनी दूर नौकरी करने की नौबत आती है। उस पर भी नस्ल-भेद एवं असुरक्षा का भाव बना रहता है "इनका जीवन कठिनाइयों से भरा हुआ है। घर से हजारों मील दूर रोजी-रोटी की खोज में आकर ये यहाँ काम करते हैं। इन्हें यहाँ मजदूरी अधिक मिलती है। पर इनके सिर पर असुरक्षा की तलवार हमेशा लटकी रहती है।" [32]

इस असंतोष की भावना के चलते ही आए दिन स्थानीय और तथाकथित गैर स्थानीय लोगों में छोटी-मोटी झड़प भी हो जाया करती है "नवयुवकों में असंतोष दिखाई पड़ता, उनकी आम शिकायत रहती है कि उनकी अधिक योग्यता थी, जिसकी अवहेलना कर स्थानीय लड़के को नौकरी दे दी गयी। बहुतों ने छोटे-छोटे धंधे शुरू किये थे, उनके भी कटु अनुभव थे। स्थानीय लड़कों ने उनकी दुकान से सामान ले लिया और दाम माँगने पर धमकी दी।" [33]

आदिवासी आर्थिक संदर्भ की कई बाधाओं से घिरे हुए हैं और उन्हें अपनी आजीविका के लिए जंगल से एकत्र सामग्री के साथ ही खेती पर भी ध्यान देना पड़ता है।

खेती भी आदिवासी समाज के आर्थिक पक्ष का एक साधन है। जैसा कि विदित है आदिवासी जंगलों में ही निवास करते हैं तो उनके लिए खेती कर पाना भी एक आसान काम नहीं रह जाता। आदिवासी समाज में झूम खेती का चलन अधिक है। ऐसा इसलिए है कि आदिवासी कबीलों में निवास करते हैं। वे घुमंतू प्रवृत्ति के होते हैं। जंगलों को साफ कर या पहाड़ों पर थोड़ी बहुत जगह को काटकर खेती लायक बनाकर आदिवासी अपने आर्थिक अभाव को दूर करने का छोटा सा प्रयास करते हैं। पहाड़ों को काट-छाँटकर थोड़ी बहुत खेती

लायक बनाने के लिए आदिवासियों की मेहनत और श्रम का कोई मोल नहीं मिल पाता। अपनी आजीविका चलाने के लिए कितनी कष्टप्रद श्रम की जरूरत होती होगी यह एक आदिवासी समुदाय ही समझ सकता है।

सामान्य जीवन गुजर-बसर करने तथा आजीविका के निर्वाह के लिए सभ्य कहे जाने वाले समाज की तरह ही आदिवासी समाज भी खेती करता है। खेती भारत और विश्व के साथ-साथ आदिवासी समाज के लिए आर्थिक संबल देने वाला है। पूर्वोत्तर के आदिवासी समाज में खेती के महत्व को प्रस्तावित उपन्यासों के माध्यम से भी समझा जा सकता है | श्रीधर पाण्डेय के उपन्यास 'आहुति' में मणिपुर की राजधानी इम्फाल की सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, आर्थिक तत्व आदि देखने को मिलते हैं। उपन्यास का पात्र मनोज जब पहली बार मणिपुर पहुँचता है तो "कुछ ही देर बाद नंगे पहाड़ों का सिलसिला शुरू हो गया | पहाड़ों पर न पेड़ थे और न हरियाली और न फूल | पहाड़ों पर सीढ़ियों की तरह पतले-पतले खेतों की कतार दिखाई दे रही थी। मनोज को बाद में पता चला कि यही झूम खेती कहलाती है।" [34]

पूर्वोत्तर के आदिवासी समाज के लिए खेती ही एक मात्र ऐसा सहारा है। जिससे वह अपना जीवन गुजर-बसर कर सके। जंगलों, पहाड़ों पर निवास करने वाली जातियों के लिए यह इतना आसान काम भी नहीं है। खेती के लिए जंगलों को जलाना जिसमें यह भी खतरा होता है। आग पूरे जंगल में न फैल जाए। फिर उसकी सफाई, जुताई, कड़ी मेहनत के बाद जाकर खेती करने लायक खेत तैयार हो पता है। श्रीप्रकाश मिश्र 'जहाँ बाँस फूलते हैं' उपन्यास में पूर्वोत्तर के आदिवासी समाज के लिए खेती करना कितना मुश्किलों से भरा है, उसका जिक्र करते हुए लिखते हैं कि "जोवा की माँ को विश्वास तब हुआ जब उसने दोपहर में देखा कि जोवा अकेले ही सारी भरी लकड़ियों को किनारे ठेलकर खेत की बाड़ बना काफी दूर तक कड़ी जमीन की गुड़ाई कर चुका है। बेटे पर अचानक ही उसकी ममता बढ़ गयी और साथ ही बढ़ गया गरीबी का एहसास भरपेट चावल कौन कहे, बाँस का मुर्का, जंगली अंटम, करमोया का साग या जंगली फल-मूल तक तो दे नहीं पाती। पर दोष किसका है ?" [35]

इतनी जी तोड़ मेहनत करने के उपरांत कभी-कभी ऐसा होता है कि जो जमीन खेती के लिए चुनी गयी है। उसपर खेती कर पाना मुमकिन नहीं है। उपन्यास का पात्र दोला ऐसी ही एक जमीन का चुनाव गलती से कर लेता है "बूढ़े ने गलत जमीन की तजबीज की थी। वह इतनी ढालू थी कि दिनभर जितनी मिट्टी वह तोड़ता सुबह तक वह धीरे-धीरे नीचे सरक जाती थी। भय यह था कि बुवाई के बाद जब पानी बरसेगा तो रही सही मिट्टी भी पौधों के साथ नीचे लगेगी" [36]

ऐसी कठिन परिस्थितियों के बावजूद पूर्वोत्तर का आदिवासी समाज अपनी आजीविका के लिए हाड़-तोड़ मेहनत कर जीवन निर्वाह कर रहा है। 'जंगली फूल' अरुणाचल प्रदेश की जनजाति पर आधारित इस उपन्यास में तानी अपने कबीले और जनजाति के सुखमय जीवन गुजर-बसर कराने के लिए बहुत सी कठिनाइयों का सामना करने के उपरांत धान का बीज पाता है। यह धान का बीज न सिर्फ तानी के कबीले बल्कि आने वाली नस्लों के लिए भी वरदान समान होती है। तानी धान के बीज जब एक अभावग्रस्त कबीले को सौंपता है तब कबीले के लोग कहते हैं, "इन बीजों को हम अवश्य लहराते हुए देखेंगे ! जब यह फसल पक कर हमारी रगों में दौड़ने को तैयार हो जाएगी तब हम आपके पास इसका सबूत लेकर आएँगे।" [37]

इस तरह हम देखते हैं कि पूर्वोत्तर का आदिवासी समाज अपने जीविकोपार्जन के लिए खेती पर निर्भर है। जल, जंगल और जमीन से सामग्री इकट्ठी करने के साथ ही खेती भी एक आय का सोत बन जाता है। यह आर्थिक स्रोत आदिवासी समाज के लिए जीविकोपार्जन का मुख्य स्रोत है।

पूर्वोत्तर के आदिवासी समाज को भूमंडलीकरण की संस्कृति ने काफी हद तक बदल कर रख दिया है । जिस जंगल के आदिवासी निवासी थे उन्हें भूमंडलीकरण के चलते औद्योगिक कारखानों को लगाने की आड़ में आदिवासियों को जंगलों से खदेड़ दिया गया । इस पलायन की वजह से आदिवासी स्वामी से किसान और किसान से मजदूर बनने को विवश हो गये हैं । बहुत से आदिवासी मजबूरी वश खदानों में मजदूरी करने को विवश हैं। कुछ लोगों की हालत ठीक है तो वे चित्रकारी, बुनाई-कढ़ाई के जरिये भी अपने लिए आय के साधन को बनाए हुए हैं।

'आहुति' में मणिपुर की आदिवासी महिलाओं ने किस प्रकार से अपनी मेहनत से आय के साधनों का निर्माण किया है इसका सबसे सुंदर उदाहरण है- स्त्रियों का बाजार 'इमा बाजार' और 'लक्ष्मी बाजार', "मुख्य सड़क के दोनों ओर पसारे इन दोनों बाजारों में स्त्रियों का एकक्षत्र साम्राज्य है । इमा बाजार यहाँ का मुख्य सब्जी बाजार है जिसमें सारी दुकानें महिलाओं की हैं, इसमें अधिकतर प्रौढ़ महिलाएँ तरह-तरह की सब्जियों के साथ मछली बेचती हैं। सड़क के दूसरी ओर लक्ष्मी बाजार है। स्थानीय कपड़ों का यह मीना बाजार है। करघों से तरह-तरह के खूबसूरत शाल, चादर, साड़ियाँ बनाकर महिलाओं ने इस बाजार को सजा रखा है। " [38] इसी तरह आदिवासी समाज द्वारा तैयार की गई रंग-बिरंगे कपड़ों और बुनाई की बातें अरुणाचल प्रदेश की महिलाएँ भी करती हैं | 'जंगली फूल' में तानी जब सीमांग के कबीले पहुँचता है तो देखता है कि "बरामदे में धागों का ताना-बाना लिए, आधे बुने कपड़े, बुनाई की लकड़ियों में करीने से रखे हुए थे। किसी की चतुर कारीगरी का पता इन रंग-बिरंगे फूलों, पत्तों से लग रहा था। जब बुनकर तैयार हो जाएगा, तब कितना सुंदर लगेगा। [39]

इस तरह की हस्तकला आदिवासी समाज के लोगों में देखने को मिलती है। हस्तकला से तैयार सामग्री को आसपास के हाट-बाजार में बेचकर अपनी जरूरत की चीजें वे खरीद पाते हैं।

पूर्वोत्तर के आदिवासी समाज में महिलाओं को सम्मान का दर्जा दिया जाता है | कुछ जनजातियों में तो लड़कों से बढ़कर लड़कियों को तरजीह दी जाती है । ये स्वतन्त्रता उन्हें हर क्षेत्र के लिए मिली हुई है। अपनी पसंद से अपना जीवन साथी चुनने के साथ पढ़ने और व्यवसाय करने की आजादी पूर्वोत्तर के आदिवासी समुदाय में देखने को मिलती है ।

चूंकि आदिवासी समाज इतना सम्पन्न नहीं है। इसलिए इस समाज की स्त्रियाँ आर्थिक अभाव के चलते कारखानों एवं खदानों में काम करने के साथ ही कुछेक जगहों पर वेश्यावृत्ति जैसे गलत काम करके अपनी आर्थिक जरूरतें पूरी करने के लिए विवश हैं। ऐसा नहीं है कि यहाँ की स्त्रियाँ स्वेच्छा से वेश्यावृत्ति की तरफ बढ़ती हैं बल्कि इसके पीछे आर्थिक विपन्नता ही है। आर्थिक दृष्टि से कमजोर होने पर ही कारखाने तथा खदान में काम करने वाले सेठ, मैनेजर जबरदस्ती करते हैं। उनका मुंह बंद रखने के लिए चंद पैसे दे देते हैं। ये चंद पैसे ही उन्हें ऐसे कुकर्म की तरफ धकेल कर ले जाता है। भूख से बेहाल होने से अच्छा वे अपना शरीर बेचकर पेट की भूख को शांत करने का रास्ता अपनाती हैं। "केन्द्रीय सरकार ने पानी की तरह पैसा फेंका है आइजाल में। और आइजाल में विकास हो रहा है। चोरी यहाँ हो रही है। जिस्म

यहाँ बेचे जा रहे हैं। ठेकेदारी के नाम पर पैसे की यहाँ लूट हो रही है। नौकरियों में धांधली यहाँ हो रही है। कोई खाते-खाते मर रहा है, कोई खाये बिना मर रहा है। कोई पंद्रह घंटे खट रहा है तो कोई बिना काम किए परजीवी बना बैठा है।" [40]

यह स्थिति आदिवासी समाज के साथ-साथ पूरे देश की है। जहाँ कुछ लोग खाने के लिए इतने लाचार हैं कि उन्हें अपना शरीर तक बेचना पड़ रहा है। वहीं कुछ ऐसे लोग भी हैं जो आर्थिक रूप से सम्पन्न हैं और हर जरूरी चीजों को हासिल करने के लिए उनके पास पैसा है। दूसरी तरह ऐसे लोग भी हैं जो आर्थिक रूप से इतने कमजोर हैं कि वे अपना जिस्म बेचने के साथ ही अपनी पूरी जिंदगी दूसरों का दास बनकर रहने को विवश हैं। पूर्वोत्तर के आदिवासी समाज में आर्थिक विपन्नता किस हद तक है कि लोग चंद पैसों में दास बनने तक को तैयार हैं, "कई तरह की चीजें लेकर तानी का काफिला चलने लगा। बहुत सारे धान के बीज, बहुत सारे चावल, कई स्वादिष्ट भोजन, कई वस्त्र, कई मिथुन लेकर चले वे। दासियों को मिथुन देकर खरीदना था। कई लोग तो जरा से चावल में ही अपनी बेटी बेच देंगे। कई लोग तो एक माला के बदले दो-दो बेटियाँ दे देंगे। [41]

किसी भी समाज के लिए लड़की बेचने के पीछे आखिर क्या मजबूरी हो सकती है ? किसी भी स्त्री के लिए वेश्यावृत्ति या किसी की दासी बनकर रहना एक अपमानजनक बात है। न सिर्फ यह उस स्त्री बल्कि उसके समाज के साथ पूरे देश के लिए अपमानजनक बात है। आज देश चंद्रमा और मंगलग्रह तक की यात्रा कर चुका है लेकिन विज्ञान के इस आधुनिक युग में स्त्रियों की स्थिति ज्यों की त्यों बनी हुई है। यह सवाल समाज और सरकार से पूछा जाना चाहिए कि आखिर उनके किये इतने वादे और योजनाएँ स्त्रियों की और खासकर आदिवासी स्त्रियों की ऐसी स्थिति तक कब पहुँचेगी। आखिर कब आदिवासी समाज अपने हिसाब से अपने अस्तित्व और अस्मिता पर बिना चोट खाये जीवन गुजर-बसर करेगा।

तृतीय अध्याय

पूर्वोत्तर विषयक हिंदी साहित्य

3.1 परिचय

पूर्वोत्तर भारत भारत का वह हिस्सा है, जो उत्तर पूर्व दिशा में अवस्थित । पूर्वोत्तर भारत को उत्तर-पूर्व भारत भी कहा जाता है। पूर्वोत्तर भारत के अंतर्गत आठ राज्यों को शामिल किया जाता है- अरुणाचल प्रदेश, असम, त्रिपुरा, नागालैण्ड, मेघालय, मिजोरम, मणिपुर और सिक्किम । पूर्वोत्तर भारत के मूल निवासी अधिकतर मंगोलियन नृवंश के हैं। भारत के बाकी हिस्सों के आर्यों से इस कारण यहाँ के निवासियों की शक्ल-सूरत थोड़ी भिन्न है। यहाँ की संस्कृति में स्त्रियों को बहुत ऊँचा दर्जा दिया जाता है । जात-पाँत का भेदभाव यहाँ अपेक्षाकृत तौर पर बहुत कम है। अब बहुत सी जनजातियाँ ईसाई हो गई हैं। हिंदू और मुसलमान लोगों की संख्या भी पर्याप्त है।

बहुत सी जनजातियाँ अपने प्राचीन धर्म को मानती हैं। पूर्वोत्तर में पाश्चात्य सभ्यता-संस्कृति का प्रभाव पड़ने लगा है। बांग्लादेशी घुसपैठियों की समस्या असम, त्रिपुरा आदि कुछ राज्यों में बहुत भयावह हो गयी है। त्रिपुरा की स्थिति तो यह है कि वहाँ के मूल निवासी अब अल्पसंख्य हो गये हैं। बांग्लादेशी घुसपैठियों को देश से बाहर निकालने के लिये असम आंदोलन (1979-1985) जैसा बड़ा आंदोलन भी हुआ। 1985 में तत्कालीन प्रधान मंत्री राजीव गांधी के साथ अखिल असम छात्र संघ का असम समझौता भी हुआ। पर कोई सुफलदायी नतीजा नहीं निकला ।

पूर्वोत्तर के राज्य प्राकृतिक संसाधनों की दृष्टि से समृद्ध हैं। पेट्रोलियम पदार्थों की भरमार हैं। चाय की खेती भी असम आदि राज्यों में बहुत अधिक होती है।

पूर्वोत्तर भारत पर आधारित हिंदी साहित्य बहुत ही कम है। फिर भी कुछ पुस्तकें हैं, जो पूर्वोत्तर भारत से सम्बंधित विभिन्न विषयों को लेकर लिखे गये हैं। इनकी विधाएँ भी अलग-अलग हैं। पर इनका परिमाण बहुत कम है। इन पुस्तकों को लिखने वालों में पूर्वोत्तर के अहिंदीभाषी लेखक भी हैं और पूर्वोत्तर के तथा बाहर के हिंदीभाषी लेखक भी हैं। अब हम 'कथा साहित्य' किसे कहते हैं और इसके अंतर्गत कौन-कौन सी विधाएँ आती हैं इस पर विचार करेंगे। हिंदी साहित्य कोश (भाग-1) के अनुसार- कल्पनाप्रसूत या प्रधान रूप से कल्पनाप्रसूत कथाएँ ही कथा साहित्य का आधार बनती है। यों तो साहित्य और काव्य समानार्थी शब्द हैं और काव्य का पद्यबद्ध होना अनिवार्य नहीं है, परंतु साधारणातया पद्यबद्ध कथाओं को कथाकाव्य और गद्य में रचित कथाओं को कथा साहित्य- उपन्यास, उपन्यासिका, कहानी आदि कहते हैं। आधुनिक साहित्य में कथा – साहित्य शब्द का प्रयोग अंग्रेजी के फिक्शन के अर्थ में होता है। (वर्मा 2021:158)

हम कह सकते हैं कि उपन्यास और कहानी ये दो विधाएँ कथा-साहित्य के अंतर्गत आती हैं। हमारा शोध प्रबंध पूर्वोत्तर भारत पर केंद्रित कथा - साहित्य तक सीमित है । अर्थात् पूर्वोत्तर भारत को लेकर लिखे गये उपन्यास और कहानियों को हमने अध्ययन में शामिल किया है।

3.2 उपन्यास साहित्य

पूर्वोत्तर भारत पर आधारित कई हिंदी उपन्यास मिलते हैं। इनकी भावभूमि में विविधता पायी जाती है। इन उपन्यासों में पूर्वोत्तर भारत का कमोबेश चित्रण मिलता है। ये उपन्यास हैं- देवेंद्र सत्यार्थी का 'ब्रह्मपुत्र' (1956 ई.), बलभद्र ठाकुर का 'मुक्तावती' (1958 ई.), छगन लाल जैन का 'राह और रोड़े' (रचनाकाल 1960 ई. के आसपास), नवारुण वर्मा का 'जय आइ असम' (1983 ई.), कृष्ण चंद्र शर्मा 'भिक्खु' का 'रक्तयात्रा' (1978 ई.), श्रीप्रकाश मिश्र का 'जहाँ बाँस फूलते हैं' (1996 ई.), डॉ. महेंद्र नाथ दुबे का 'मुक्ति' (1999 ई.), लाल बहादुर वर्मा का 'उत्तरपूर्व' (2002 ई.), रमेंद्र पाल का 'देवी माँ', श्रीप्रकाश मिश्र का 'रूपतिल्ली की कथा (2005 ई.), श्रीधर पान्डेय का 'आहुति' (2008 ई.), प्रमोद कुमार तिवारी का 'उफ़्फ़' (2010 ई.), प्रदीप सौरभ का देश भीतर देश' (2012 ई.), अनिता सभरवाल का 'लोहित' (2016 ई.), दयाराम वर्मा का 'सियांग के उस पार' (2018 ई.), जोराम यालाम का 'जंगली फूल' (2019 ई.), तुम्बम रीवा जोमो लिली का 'उस रात की सुबह' (2020 ई.) और मोर्जुम लोयी का मिनाम' (2020 ई.) । 'रक्तयात्रा', 'उत्तरपूर्व', 'देवी माँ' और 'उस रात की सुबह को छोड़कर शेष 14 उपन्यासों को अध्ययन में सम्मिलित किया गया है। आगे इन 14 उपन्यासों की समीक्षा की गयी है।

3.2.1 ब्रह्मपुत्र (1956)

'ब्रह्मपुत्र' उपन्यास में देवेंद्र सत्यार्थी ने असम के शिवसागर के समीप ब्रह्मपुत्र नद के किनारे बसे दिसाँगमुख नामक स्थान का वर्णन किया है। दिसॉंगमुख में बसे लोगों की कहानी के माध्यम से पूरे असम के जनजीवन की कहानी कहने का प्रयास उपन्यासकार द्वारा हुआ है। दिसाँगमुख में बसी अलग-अलग जातियों के लोग मेल-मिलाप के साथ रहते हैं पर कुछ बातों में, जिनमें शादी-ब्याह प्रमुख है उनमें भेद-भाव भी देखने को मिलता है। उपन्यास में पराधीन भारत का चित्रण किया गया है। उपन्यास का पात्र अतुल अपनी बात सामने रखने का गाँधीवादी रास्ता अपनाता है, वही देवकांत क्रांतिकारी रास्ते से भारत को स्वतंत्र करना चाहता है।

उपन्यास में पुलिस द्वारा लोगों से रिश्वत लेने, बेगार करवाने, अत्याचार करने के कई प्रसंग हैं। साधन मीरी के चरित्र के माध्यम से साम्प्रदायिक चरित्र की सृष्टि की गई है, जो जात-पाँत के भेदभाव के माध्यम से लोगों में विष फैलाने का प्रयास करता है। उपन्यास में अंग्रेज पात्र भी है जिनमें से कुछ भारतवासियों से सहानुभूति रखते हैं और भारतवासियों की सेवा भी करते हैं। व्यवसायियों द्वारा लोगों को ठगने के प्रसंग भी यहाँ आये हैं। उपन्यास में 1950 ई. के भूकंप के बाद बाढ़ आ जाने से संपूर्ण दिसॉंगमुख के जलमग्न हो जाने का दृश्य भी दिखाया गया है। अंत में सभी प्रकृति के इस आघात से उबरकर नये सिरे से दिसॉंगमुख को पुनः बसाते हैं।

3.2.2 मुक्तावती (1958): बलभद्र ठाकुर

इस उपन्यास में नायक-नायिका और उनके साथी मणिपुर की एक धार्मिक संस्था ब्रह्मसभा द्वारा लगाये गये अन्यायपूर्ण श्राद्ध कर के विरुद्ध संघर्ष करते हैं और अंत में उनकी जीत होती है। इस उपन्यास में धार्मिक संस्थाओं के अन्यायपूर्ण नियमों के विरुद्ध आवाज उठायी गयी है। इसमें मनुष्य के मानवीय अधिकारों की वकालत की गई है। अंग्रेजों की कूटनीति और राजाओं के दमन करने की मनोवृत्ति का भी सुंदर चित्रण हुआ है। सारी शक्ति, अधिकार विरोधी पक्ष में होने के बावजूद सत पक्ष की विजय से संघर्ष करने वाले लोगों को लड़ाई जारी रखने की प्रेरणा भी इस उपन्यास से मिलती है। इस उपन्यास में मणिपुर की राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक वातावरण का सुंदर चित्रण किया गया है। व्यापारियों के मुनाफा कमाने की मनोवृत्ति और उस मनोवृत्ति की वजह से कृत्रिम अकाल की सृष्टि करके आम गरीब जनता को त्रस्त करने के प्रसंग भी इस उपन्यास में आये हैं। स्त्री की संघर्ष सामर्थ्य के चित्रण द्वारा सामाजिक, राजनीतिक जीवन में उनके महत्त्व को प्रतिष्ठित किया गया है।

3.2.3 राह और रोड़े (1960): छगन लाल जैन

यह उपन्यास एक राष्ट्रभाषा प्रचारक जीवन चंद्र हाजरिका की निष्ठा, ईमानदारी, सच्चाई और अध्यावसाय की कहानी है। यह उपन्यास एक आदर्श व्यक्ति के प्रेम की पवित्रता संबंधी विचारों को भी प्रकट करता है। खल चरित्र किस हद तक नीच हो सकते हैं कि बदला लेने के लिये किसी के घर में आग लगा सकते हैं, इस उपन्यास में यह भी हम देख सकते हैं। उपन्यास का आकार छोटा है पर लेखक जो व्यक्त करना चाहते थे, उसे बड़े भी सहजता के साथ पेश किया है। कलापक्ष की दृष्टि से यह उपन्यास औसत से ऊपर है। नायक की आदर्शवादिता और सतता का प्रमाण यह भी है कि उस पर आक्रमण करवाने वाले खलनायक को बिना सजा दिये छोड़ देने की गुहार वह अदालत से करता है।

3.2.4 जय आइ असम (1983): नवारुण वर्मा

'जय आइ असम' उपन्यास में नवारुण वर्मा ने असम आंदोलन के दौरान अपने द्वारा देखी अनुभव की गई घटनाओं को अपनी रचनात्मकता का स्पर्श देकर चित्रित किया है। असम आंदोलन के समय की परिस्थितियों के चित्रण और परिवेश की सृष्टि में नवारुण वर्मा ने बड़े कौशल का परिचय दिया है। यह उपन्यास असम आंदोलन के खत्म होने के दो वर्ष पहले ही प्रकाशित हो गया था। इसी कारण नवारुण वर्मा ने इस आंदोलन के पीछे का सच और इस आंदोलन के पक्ष-विपक्ष को जिस प्रकार उभारा है वह काफी प्रभावित करता है। इस उपन्यास के मुख्य पात्रों में अमृत फुकन, उनके पुत्र और पुत्री नरेन और नमिता, नमिता का प्रेमी संदीप, संदीप के पिता ठेकेदार राजेन बरुवा शामिल हैं। असम आंदोलन बांग्लादेशी घुसपैठियों को असम से बाहर निकालने के लिये किया गया आंदोलन था। चुनाव आयोग ने भी माना था कि मतदाता सूची में बांग्लादेशी घुसपैठियों के भी नाम हैं। बांग्लादेशी घुसपैठियों को बाहर निकालना आसान नहीं था। बांग्लादेशी सरकार यह बात नहीं मानती थी कि उनका कोई नागरिक अवैध तौर पर भारत में रहता है। फिर जिन लोगों को बाहर निकाला जायेगा उन्हें कहाँ भेजा जायेगा। बांग्लादेशी घुसपैठियों को राजनीतिक नेता भी अपने राजनीतिक स्वार्थ के लिये पनाह देते आये हैं। कुल मिलाकर इस उपन्यास में कथा को बड़े सजीव ढंग से चित्रित किया गया है।

3.2.5 जहाँ बाँस फूलते हैं (1996): श्रीप्रकाश मिश्र

इस उपन्यास में 1966 ई. में मिजोरम में हुए विद्रोह की वजह से मिजोरम में विद्रोही संगठनों की बढ़ती गतिविधियों को बड़े ही प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया गया है। उपन्यास के केंद्र में मिजोरम का डोपा नामक गाँव है। उपन्यास में मिजो पात्रों के साथ-साथ हिंदी भाषी और दक्षिण भारतीय पात्र भी हैं जो सरकारी नौकरियों या व्यवसाय के सिलसिले में मिजोरम आते हैं। बाहरी सरकारी अधिकारियों के मिजो युवतियों का यौन शोषण करने का भी चित्रण इस उपन्यास में हुआ है। विद्रोही संगठनों की गतिविधियों को जिस सजीवता के साथ प्रस्तुत किया गया है उससे लेखक की ऐसे जीवन के अनुभव की परिपक्वता और उपन्यास कला पर पकड़ का प्रमाण मिलता है। इस उपन्यास में विद्रोहियों को मुख्यधारा में लाने के प्रयास भी हुए हैं। पर जो विद्रोही मुख्यधारा में लौट आते हैं, उनके प्रति उनके संघर्षरत विद्रोही साथियों के मन में वैर भाव पनपते हुए भी दिखाया गया है। मिजोरम की राजनीति, संस्कृति, समाज का बड़ा सटीक चित्रण इस उपन्यास में देखने को मिलता है। रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार के भी कई प्रसंग इस उपन्यास में हैं। ईसाई पादरियों द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में किये गये प्रयासों का भी चित्रण मिलता है।

3.2.6 मुक्ति (1999): डॉ. महेंद्र नाथ दुबे

इस उपन्यास की कथा का आरंभ 14 अगस्त 1947 ई. की आधी रात से होता है। इसमें भारत विभाजन के कारण हुए अमानवीय गतिविधियों- जिनमें हत्या, बलात्कार, संपत्ति पर कब्जा, मानव तस्करी सभी कुछ शामिल हैं- का बड़े ही प्रभावोत्पादक ढंग से चित्रण किया गया है। कथा असम के कछार क्षेत्र में ही अधिकतर घटित होती है। धर्म के आधार पर हुए विभाजन के कारण लाखों लोगों के विस्थापित होने और हिंसा का शिकार होने की सच्चाई इस उपन्यास में व्यक्त है। इसमें कुछ भारत प्रेमी अंग्रेज पात्र भी हैं। यह उपन्यास एक कहारिन के अपनी मालकिन की नवजात शिशु की प्राण रक्षा करने, फिर असीम कष्ट झेलकर उसे बड़ा करने की त्यागपूर्ण कहानी भी कहता है। इस उपन्यास में ऐसे भी पात्र हैं, जो धर्म के आधार पर लोगों को बाँटते हैं और ऐसे पात्र भी है जो मानव मात्र को समान मानकर धार्मिक सहिष्णुता का प्रमाण देते हैं। इस उपन्यास के द्वारा उपन्यासकार मानव मात्र से प्रेम करने और मिलजुलकर साथ-साथ रहने का संदेश देता प्रतीत होता है। पर यह उपन्यास कई स्थलों पर अविश्वसनीय कल्पनाओं का समावेश करके कथा को आगे बढ़ाता सा लगता है। साहित्य में भोगे गये यथार्थ को चित्रित करने की जो बात की जाती है, इस उपन्यास में उसकी कमी खटकती है, अर्थात् यह उपन्यास गढ़ा गया लगता है, जिसमें लेखक के भोगे गए यथार्थ से अधिक सुनी-सुनाई बातों के आधार पर कल्पना द्वारा एक कहानी कहने का प्रयास लक्षित होता है।

3.2.7 रूपतिल्ली की कथा (2005): श्रीप्रकाश मिश्र

इस उपन्यास की कथा दो मानव बलियों के इर्द-गिर्द घूमती है। इसमें अंग्रेजों से खासी राजाओं के संघर्ष का भी चित्रण है, जो इतिहास सम्मत है । खासी प्रदेश में हिंदू और ईसाई धर्म प्रचारकों के अपना धर्म प्रचारित करने की होड़ इस उपन्यास में लक्षित होती है। यह एक सांस्कृतिक उपन्यास है । खासी प्रदेश की संस्कृति को बड़े कलात्मक ढंग से इस उपन्यास में चित्रित किया गया है। इस उपन्यास में प्रकृति को आलंबन के तौर पर चित्रित किया गया है। कई प्रेम प्रसंग भी इस उपन्यास में आये हैं। बलि चढ़ाना धर्म का मामला है। कानून का नहीं- उपन्यास में आये इस बात से खासियों में धर्म की महत्ता और उनकी अनोखी समाज व्यवस्था के स्वरूप का भी पता चलता है।

19 वीं सदी के प्रारंभ की खासी प्रदेश के वातावरण को चित्रित करने में उपन्यासकार को बहुत दूर तक सफलता मिली है। इस उपन्यास में कई स्थानों पर एक जादूई परिवेश की सृष्टि का प्रयास लक्षित होता है। मानव बलि चढ़ाने की मानसिकता के साथ ऐसे परिवेश का सामंजस्य बैठाने का प्रयास भी इसके पीछे का कारण हो सकता है। अंग्रेजों के साथ राजनीतिक संघर्ष की कथा उपन्यास के अंत की तरफ आती है। रूपतिल्ली की चोटी पर स्थित डिडेई पेड़ के काट दिये जाने की घटना द्वारा खासी राजाओं के संघर्ष के अंत को सांकेतिक रूप में प्रस्तुत किया गया है। इस उपन्यास में खासी युवतियों द्वारा भोजपुरी में देवी-गीत गाते हुए चित्रित किया गया है। अगर हिंदी में भी यह गीत दिया जाता तो नहीं खटकता । पर खासी युवतियाँ भोजपुरी में अपने लोकगीत गाये, यह पूर्णत: अस्वाभाविक है।

3.2.8 आहुति (2008): श्रीधर पान्डेय

यह उपन्यास बिहार के एक शिक्षित बेरोजगार युवक के मणिपुर आकर रोजगार प्राप्त करने और इस दौरान एक मणिपुरी युवती से प्रेम, फिर विवाह और फिर विद्रोही संगठनों के सदस्यों द्वारा विवाह के विरोध में उसकी पत्नी की गोली मारकर हत्या कर देने की कहानी कहता है। इस उपन्यास में प्रसंगों की रचना में परिपक्वता और कलात्मकता की कमी झलकती है। मणिपुर की राजनीतिक गतिविधि, समाज व्यवस्था, धर्म और संस्कृति के बारे में सूचनात्मक ढंग से कहा गया है। उपन्यास का आकार छोटा है, पर छोटे उपन्यासों में जो कसाव अपेक्षित है उसकी कमी यहाँ खटकती है। पर एक बेरोजगार युवक की मनोव्यथा और संघर्ष के चित्रण में यह उपन्यास काफी दूर तक सफल हुआ है।

3.2.9 उफ़्फ़ (2010): प्रमोद कुमार तिवारी

यह उपन्यास असम की समकालीन राजनीति के विश्वसनीय चित्रण की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। इसमें कलात्मक निखार, कथा का सुंदर प्रस्तुतीकरण, मानवीय मनोभावों की बारीकियों की पकड़ देखने को मिलती है। भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, अपहरण, हत्या जैसे आपराधिक गतिविधियों के चित्रण में यह उपन्यास पूर्ण सफल हुआ है। इस उपन्यास में छोटे-बड़े दृश्यों की भरमार है। कहा जा सकता है कि इन दृश्यों के द्वारा निर्मित नाटक सदृश्य उपन्यास है। इसे बड़ी आसानी से नाटक में तब्दील किया जा सकता है। इस उपन्यास में ईमानदार पुलिस अफसर हैं, तो भ्रष्ट नेता, मंत्री, अफसर, डी.सी. भी हैं। असम की बाढ़ की समस्या को भी कथा का अंग बनाकर पेश किया गया है। उपन्यास में उच्चवर्गीय पात्र ही अधिक हैं। पर निम्नवर्गीय और मध्यवर्गीय पात्रों की दुःख - दुर्दशा को भी इस उपन्यास में स्थान मिला है। ईमानदार लोगों के पग-पग पर पेश आने वाली मुसीबतों, बाधाओं के चित्रण द्वारा ऐसे लोगों के जीवन की संघर्ष गाथा को सामने रखा गया है। असम के विद्रोही संगठन उल्फा की गतिविधियों का चित्रण भी इस उपन्यास में मिलता है।

3.2.10 देश भीतर देश (2012): प्रदीप सौरभ

यह उपन्यास एक हिंदी भाषी युवक विनय और एक असमीया युवती मिल्की की प्रेम कहानी है। पर मूल कथा के साथ अवांतर प्रसंगों का समावेश करने के कारण उपन्यास के कसाव को हानि पहुँची है। विनय एक देश के भीतर अनेक देश देखने की मानसिक बीमारी का शिकार हो जाता है। पूर्वोत्तर के राज्यों के साथ केंद्र का जो पक्षपातपूर्ण व्यवहार है, उससे विनय पूर्वोत्तर के राज्यों को भारत के भीतर ही अलग देश की तरह देखने लगता है। मिल्की से विवाह के बाद जब वह मिल्की को दिल्ली ले जाना चाहता है तब वह मना कर देती है। इसके पीछे का कारण विनय को अंत में मिल्की की मृत्यु के बाद उसको लिखे गये मिल्की के पत्रों से चलता है। मिल्की के बहन को भी दिल्ली का ही एक युवक प्रेम के जाल में फँसाकर दिल्ली ले जाता है और वहाँ कोठे में बेच देता है। अपनी शील रक्षा के लिये मिल्की की बहन आत्महत्या कर लेती है। इस उपन्यास में भी उल्फा की गतिविधियों को चित्रित किया गया है, पर वह अधिकतर सूचनात्मक ढंग से ही आया है। असम के अलग-अलग विद्रोही संगठनों का उल्लेख भर आता है, कथा का हिस्सा बनकर प्रस्तुत नहीं किया गया है।

भारतीय फौज के एकांश की पूर्वोत्तर की महिलाओं के साथ अभद्र व्यवहार का भी चित्रण पूर्वोत्तर केंद्रित कई उपन्यासों में मिलता है। 'देश भीतर देश' में भी ऐसा एक प्रसंग आता है। इस उपन्यास में एक प्रसंग के अंतर्गत असमीया गृहस्थ के नायक विनय को अपनी जवान बेटी के साथ सोने का प्रस्ताव करते हुए दिखाया गया है। उपन्यासकार ने हालाँकि गृहस्थ के ऐसा प्रस्ताव देने के पीछे कोई गलत मंशा रहने की बात से इनकार किया है। पर एक बाप के अपनी जवान बेटी के साथ किसी पुरुष से रात को सोने का प्रस्ताव रखना अस्वभाविक है। असमीया संस्कृति में ऐसा बिल्कुल संभव नहीं है। ऐसे प्रसंग उपन्यास को अविश्वसनीय बनाते हैं।

3.2.11 लोहित (2016): अनिता सभरवाल

'लोहित' में अनिता सभरवाल ने उल्फा समस्या और असम आंदोलन का काफी हद तक विश्वसनीय चित्रण किया है। असम आंदोलन के समय की राजनीतिक गतिविधियों के चित्रण में अनिता सभरवाल बहुत दूर तक सफल हुई हैं। इसमें एकतरफा असफल प्रेम कहानी का चित्रण भी मिलता है। नायिका जोयमती के एक गैर- असमीया युवक से विवाह करने के कारण लोगों द्वारा उसका विरोध किया जाना उसे मानसिक यंत्रणा देता है। क्या इंसान अपना जीवन साथी गैर जाति से चुन नहीं सकता यह प्रश्न भी यहाँ ध्वनित होता है। गैर जाति में विवाह करने वाली हर युवती की मनोव्यथा को यहाँ बड़े ही कलात्मक ढंग से व्यक्त किया गया है।

इस उपन्यास में असम के बाहर से आये लोगों के प्रति यहाँ के एक वर्ग के क्षोभ को भी चित्रित किया गया है। बांग्लादेशी घुसपैठियों की समस्या को भी यहाँ रेखांकित किया गया है। बाहरी लोगों के असम में आ जाने से स्थानीय निवासियों के अधिकार छीन जाने, आय के साधनों पर बाहरी लोगों का कब्जा हो जाने जैसी बातें हमें सोचने पर मजबूर कर देती है। असम की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक सभी समस्याओं को सामने रखने की दृष्टि से यह एक उल्लेखनीय उपन्यास है। इसमें ब्रह्मपुत्र नद को भी एक पात्र की तरह शामिल किया गया है। पूर्वोत्तर केंद्रित कई उपन्यासों से जो यह शिकायत है कि पूर्वोत्तर संबंधित बातों को सूचनात्मक ढंग से रख दिया जाता है, यह उपन्यास ऐसे आक्षेप से मुक्त है।

3.2.12 सियांग के उस पार (2018) दयाराम वर्मा

यह उपन्यास व्यवसायिक दृषिकोण से लिखा गया है। व्यवसायिक उपन्यासों की तरह सस्ते कौतूहल की सृष्टि, संयोग से काम लेना, फिल्मी ढंग से कथा को आगे बढ़ाना जैसी विशेषताएँ इस उपन्यास में भी हैं। इस उपन्यास में कसाव की कमी है। 261 पन्ने के बड़े आकार वाले इस उपन्यास में कसावट होती तो यह बड़ी आसानी से 100-120 में पन्नों समीट जाता । कलात्मकता की दृष्टि से यह कृति आश्वस्त नहीं करती। प्रेमी के अचानक गायब हो जाने पर प्रेमिका का पागल हो जाना, प्रेमी जैसे दिखने वाले व्यक्ति के सामने आने पर उसके ठीक होने की संभावना, नायक का उस प्रेमी जैसा दिखना, नायक-नायिका का अंधविश्वास के चलते जुदा होना, दोनों का अपना नाम बदल लेने का फैसला लेना, जैसी कई ऐसी बातें हैं, जो फिल्मी तरीके ही कहे जायेंगे। इसमें अरुणाचल की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक कोई भी पक्ष सामने नहीं आता।

3.2.13 जंगली फूल (2019): जोराम यालाम

जोराम यालाम ने अपने इस उपन्यास में अरुणाचली लोगों के पूर्व पुरुष तानी के साहसिक कर्मों को चित्रित किया है। तानी साहसी, उदार, बुद्धिमान, भावुक प्रकृति का व्यक्ति है। तानी के जीवन को चित्रित करने में यालाम कुछ हद तक सफल हुई हैं। पर उन्होंने कई स्थलों पर बड़े अपरिपक्क एवं अतिरंजित कल्पनाओं से काम लिया है। पात्रों के भाव और अनुभूतियों की चित्रण की दृष्टि से यह उपन्यास अच्छा है। काव्यात्मकता लाने का प्रयास भी कई स्थलों पर लक्षित होता है। पर प्रागैतिहासिक काल को चित्रित करने के प्रयास में आधुनिक समाज का प्रक्षेपण करने की प्रवृत्ति खटकती है। प्रागैतिहासिक परिवेश को मूर्त करने में उपन्यास सफल नहीं हुआ है। तानी धान की खेती करने के लिये धान लाने अपने गाँव से बहुत दूर जाता है और वहाँ कैद कर लिया जाता है, पर वह अपनी बुद्धिमत्ता के सहारे निकल आता है। अरुणाचल की वर्तमान युग की संस्कृति को प्रतिफलित करने में उपन्यासकार सफल हुई है। पर प्रागैतिहासिक अरुणाचल कैसा था इसका कोई चित्र हमारे सामने नहीं उभरता ।

3.2.14 मिनाम (2020): मोर्जुम लोयी

मोर्जुम लोयी इस उपन्यास में अरुणाचल के समाज और संस्कृति को प्रभावशाली ढंग से चित्रित करने में सफल हुई हैं। कलात्मकता की कमी तो खटकती है, पर विषय वस्तु की दृष्टि से यह एक बेहतर उपन्यास है। इसमें किसी एक काल पर दूसरे काल का प्रक्षेपण नहीं है। अपने क्षेत्र की वर्तमान युग की परंपराओं और समस्याओं के चित्रण में मोर्जुम लोयी आश्वस्त करती है । पर इस उपन्यास की कुछ कमजोरियाँ भी हैं। इस उपन्यास में किसी एक पात्र को प्रमुखता नहीं मिली है। आधा उपन्यास यामी की संघर्ष गाथा और आधा उपन्यास मिनाम की संघर्ष गाथा है। पर स्त्रियों की संघर्ष गाथा के तौर पर यह एक सराहनीय प्रयास है। यामी अपने पति के प्रहार से मर जाती

है। उसकी बेटियाँ यापी और याजुम क्रमशः डी.सी. और डॉक्टर बनकर अपनी माँ का सपना पूरा करती हैं। पर इस उपन्यास में मिनाम नामक युवती की संघर्ष कथा कहीं गई है, जबकि यापी और याजुम की कही जानी चाहिए थी। घरेलू हिंसा का दिल दहला देने वाला चित्रण भी इस उपन्यास में मिलता है। डायरी शैली का प्रयोग किया गया है, पर स्थान और काल का उल्लेख डायरी में नहीं है। यह शैलीगत कमजोरी कही जा सकती है।

3.3 कहानी साहित्य

3.3.1 अज्ञेय की कहानियाँ

अज्ञेय की पूर्वोत्तर भारत केंद्रित पाँच कहानियाँ हैं-

3.3.1.1 हीली- बोन् की बत्तखें

हीली- बोनू की बत्तखें एक मनोवैज्ञानिक कहानी है। यह एक अविवाहित खासी जनजाति की युवती की ममता के आहत होने की कहानी है। हीली- बोन् की सहमती पर कैप्टन दयाल हीली की बत्तखों को खाने वाली लोमड़ी को गोली मार देते हैं। मरते हुए नर लोमड़ी के पास मादा लोमड़ी और छोटे-छोटे बच्चों को कुनमुनाते हुए देखकर होली का हृदय करुणा से उमड़ पड़ता है और वह अपनी बत्तखों को ही इस करुणाजनक स्थिति का जिम्मेदार मानकर सभी बत्तखों का गला काट-काटकर मार डालती है। कई विद्वानों के अनुसार यह अज्ञेय की श्रेष्ठतम मनोवैज्ञानिक कहानियों में से एक हैं। हर स्त्री में एक मातृ हृदय होता है, चाहे वह माँ हो या न हो यह बात इस कहानी से स्थापित होती है।

3.3.1.2 मेजर चौधरी की वापसी

इस कहानी का संदेश है- जब आदमी जंतु बन जाता है, तब हमें भी जंतु तर्क से ही फैसला करना होता है, नहीं तो आदमी पाशविकता तक उतर आता है। यहाँ पाशविकता से तात्पर्य है- विवेकशून्य जंतु का आचरण । इसमें अंग्रेजकालीन फौजी जीवन का चित्रण है। वेश्यावृत्ति का भी प्रसंग आया है। मेजर चौधरी कथावाचक को एक गोरे फौजी को वैश्या की तलाश में जाते हुए पकड़कर भी छोड़ देने का किस्सा बताते हैं । मेजर चौधरी उस गोरे फौजी को इसलिये छोड़ देते हैं क्योंकि वह जंतु बन चुका है और उसके साथ जंतु तर्क से ही काम लेना सही है । उस फौजी के जंतु बन जाने का प्रमाण उसका अपने वेश्यागमन के समर्थन में दिया गया यह तर्क है कि उसके साथी एक सप्ताह पहले से वेश्यागमन कर रहे हैं और वह उनके बराबर होना चाहता है।

3.3.1.3 जयदोल

यह कहानी आहोम राजकुमारी जयमती और आहोम राजा चुलिक- फा के ऐतिहासिक वृतांत पर बड़े ही कलात्मक ढंग से लिखी गई है। इसमें जयमती पर किये गये चुलिक- फा के अमानुषिक अत्याचारों को इस सजीवता से चित्रित किया गया है कि कहानी पढ़ते ही दिल दहल जाता है। चुलिक-फा संभावित प्रतिद्वंदी आहोम राजकुमारों की एक छिगुनी या कान काट देने का आदेश देता है। इसके पीछे का कारण है कि आहोमों में अक्षत राजकुमार ही राजा बन सकते थे । इस प्रकार चुलिक फा निष्कंटक राज करना चाहता था । राजकुमार गदाधर भाग जाने में सफल होता है। पति का पता बताने के लिये राजकुमार की पत्नी जयमती पर चुलिक- फा अमानवीय अत्याचार करता है । जयमती की कहानी को इतने कम कलेवर में बाँध पाना अज्ञेय जैसे कलाकार के वंश की ही बात हो सकती थी।

3.3.1.4 नगा पर्वत की एक घटना

यह कहानी बताती है कि फौजी अनुशासन आदमी को पशु जरूर बना देता है, पर युद्ध फौजी को पशु से भी बदतर बना देता है। फौजी अपने विवेक और न्यायबुद्धि को ताक पर रखकर हुक्म का पालन करते हैं। युद्ध ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न करता है कि फौजी अनुशासन को भी भंग कर देता है और हुक्म के खिलाफ काम करके पशु से भी बदतर बन जाता है। इस कहानी में द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान जापानी फौज के पूर्वोत्तर भारत पर आक्रमण करने का वर्णन है। अज्ञेय बड़े सुंदर ढंग से भोगे गये यथार्थ के माध्यम से कथ्य को संप्रेषित करने में सफल हुए हैं।

3.3.1.5 नीली हँसी

यह ब्रह्मपुत्र नदी के बाढ़ से प्रभावित होने वाले असम के एक नदी द्वीप की कहानी है जो संभवत माजुली हो सकती है। इसमें देवकांत और नीलिमा की प्रेम कहानी है, जो बड़ी सांकेतिक है। इसमें प्रेम कहानी के उपयुक्त भाषा का प्रयोग हुआ है। इसमें देवकांत अपनी प्रेमिका की सौगात एक मृग छौने को बाढ़ से बचा नहीं पाता। उसने नीलिमा से जो वादा किया था कि वह मृग छौने का खयाल रखेगा वह वादा निभा नहीं पाता। पर मृग छौने को सुरक्षित करने में वह अपनी जान की बाजी लगा देता है।

3.3.2 छगन लाल जैन की कहानियाँ

जैन जी की एक ही कहानी संग्रह 'हँसते-हँसते जीना उपलब्ध हो सकी। इसमें सिर्फ दो ही कहानी पूर्वोत्तर भारत पर केंद्रित हैं।

3.3.2.1 गरीब हूँ तो क्या?

इस कहानी में एक प्रगतिशील कहानीकार कहानी का मसाला खोजते खोजते ब्रह्मपुत्र नदी के तट पर बसे भिखमंगों की झोपड़ियों के पास पहुँच जाता है। वहाँ एक भिखमंगी युवती उसके साथ छेड़खानी करते व्यक्ति का सिर फोड़ देती है। सुविधापूर्ण जीवन जीने के लिये भिखमंगी युवती अपना देह बेचने लगती है। फिर इस जीवन से बाहर निकलने को अकुलाने लगती है। छगन लाल जैन ने इस कहानी में प्रश्न खड़ा किया है कि सुविधाएँ किस कीमत पर स्वीकार्य होनी चाहिए? भिक्षुक जीवन की दयनीयता और विवशता को बड़े ही सुंदर ढंग से यहाँ चित्रित किया गया है।

3.3.2.2 हँसते-हँसते जीना

जिसके पास धन नहीं, उसकी कोई हैसियत नहीं यह कहानी हमें यही संदेश देती है। एक भिखमंगे बूढ़े को कोई कार वाला कुचल कर मार देता है, पर क्योंकि मरने वाला एक निर्धन भिखारी है, इसलिये उसकी हत्या पर हत्यारे को कोई सजा नहीं होती। यहाँ तक कि उस कार वाले से जवाब तलब भी नहीं किया जाता। भिखमंगे बूढ़े की सिनेमा देखने और ताड़ी पीने की इच्छा को जिस प्रकार चित्रित किया गया है वह बड़ा ही मार्मिक है। भिखमंगों की दीन हीन दशा और चाय मजदूरों के शोषण पर लिखी गई यह एक बहुत सुंदर और उतनी ही सफल कहानी है।

3.3.3 उदयभानु पाण्डेय की कहानियाँ

पाण्डेय जी की 'हर्ता कुँवर का वसीयतनामा' कहानी संग्रह को ही हमने अपने अध्ययन में शामिल किया है । इस कहानी संग्रह में कुल 15 कहानियाँ हैं जिनमें से 8 कहानियाँ पूर्वोत्तर भारत पर केंद्रित हैं। इनकी ज्यादातर कहानियों में हिंदीभाषी ही नायक के रूप में चित्रित हैं। साथ ही इनकी कहानियों में हिंदीभाषिओं के साथ अन्याय होते हुए भी दिखाया गया है। ये कहानियाँ हैं-

3.3.3.1 हर्ता कुँवर का वसीयतनामा

हर्ता कुँवर डेरा नामक कार्बी युवक वसीयत के तौर पर अपनी कहानी लिखता है। वह कार्वी जाति के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक जीवन में आये परिवर्तन और अपने बागी बनने की कहानी कहता है । उदयभानु पाण्डेय कार्बी आंगलांग में कार्यरत थे। उन्होंने कार्बी समुदाय पर कई कहानियाँ लिखी हैं। इस कहानी में आतंकवाद की समस्या उठाई गई है। साथ ही जनजातीय लोगों के नाम कंट्रेक्ट लेकर धनवान होने वाले ठेकेदारों के फरेब और शोषण को भी उजागर किया गया है। इस कहानी में उदयभानु पाण्डेय ने अपनी राजनीतिक चेतना व्यक्त की है। वे इस कहानी में हर्ता कुँवर के माध्यम से कहलाते हैं कि अगर दिल्ली की गद्दी पर किसी आदिवासी को बैठा दिया जाये तो पूर्वोत्तर के लोगों की दिल्ली के प्रति सभी शिकायतें और नाराजगी समाप्त हो जायेंगी।

3.3.3.2 माछखोवा में महामास्टर

यह एक आदर्शवादी मास्टर की कहानी है जो ज्ञान का धंधा करने को तैयार नहीं होता । उसके सामने ही कितने मास्टर ट्यूशन पढ़ा- पढ़ा कर धनवान हो जाते हैं। कितने लोग अवैध व्यवसाय करके लखपति हो जाते हैं। पर वह अपने परिचितों की सलाह पर भी ऐसा कुछ नहीं करता। और अंत में उसे ट्यूशन पढ़ाना पड़ता है। पर उसके रूखे स्वभाव की वजह से ज्यादा छात्र उससे पढ़ने नहीं आते और वह तंगी में जीता है । आज जिसे व्यवहारकुशलता कहा जाता है वह महामास्टर में बिल्कुल नहीं है। एक ईमानदार और फक्कड़ व्यक्ति के संघर्ष कथा को बड़े ही प्रभावशाली ढंग में इस कहानी में चित्रित किया गया है। और फक्कड़ व्यक्ति के संघर्ष कथा को बड़े ही प्रभावशाली ढंग में इस कहानी में चित्रित किया गया है।

3.3.3.3 नगीना

बिहार का रहने वाला नगीना असम के एक शहर में मजदूरी करता है। यह कहानी उसके और उसके परिवार की घात-प्रतिघातों से भरे जीवन की कथा कहता है। इसमें जातिगत ऊँच-नीच और पैसे की ताकत तथा गरीब का शोषण, उस पर किये गये अत्याचार चित्रित हैं। नगीना के बेटे रामजियावन को असम में इसलिये नौकरी नहीं मिलती कि वह बिहार में पला-बढ़ा और पढ़ा-लिखा है। निम्नवर्ग के हिंदू व्यक्ति के पास समाज में इज्जत पाने का एकमात्र उपाय धर्म परिवर्तन है यह कहानी ऐसा ही संदेश देता है क्योंकि रामजियावन अंत में ईसाई बन जाता है।

3.3.3.4 भौंरा रे, हम परदेसी लोग

यह नारी द्वारा सताये गये एक पुरुष की कहानी है। हेमंत को उनकी पत्नी शालिनी और बेटी नंदिता इतना परेशान करते हुए दुःख पहुँचाते हैं कि वे 20 साल तक घर से दूर रहते हैं। वे जब वापस लौटकर आते हैं, तो उनका स्वागत नहीं होता। पर उनका दामाद उनका पक्ष लेता है। शहर की मातृ संस्था शालिनी और नंदिता को अपने घर के पुरुषों के प्रति व्यवहार ठीक करने की चेतावनी देती है। हम नारी का पक्ष लेते हैं । पर कुछ मामलों में नारी द्वारा पुरुष भी सताये जाते हैं। यह कहानी इसी बात को व्यक्त करती है। यह एक वास्तविकता है और इसे

नकारा नहीं जा सकता। एक साहित्यकार को हर अन्याय के प्रति आवाज उठाना चाहिए और उदयभानु पाण्डेय ने ऐसा करके सराहनीय काम किया है।

3.3.3.5 श्मशान में श्वपच

यह कहानी एक कार्बी व्यक्ति की मृत्यु के बाद श्मशान में अंत्योष्टि क्रिया के दौरान मृत व्यक्ति के भांजों द्वारा अशिष्ट व्यवहार करने और उस व्यवहार को देखकर मृत व्यक्ति के एकमात्र पुत्र की मनोव्यथा को चित्रित करती है। यह पूरी कहानी श्मशान में अंत्योष्टि क्रिया के दौरान आकार लेती है। पर कहानी में अतीत के भी कई संदर्भ आये हैं। इस दृष्टि से यह एक अलग किस्म की कहानी है, जो काफी आकर्षित करती है।

3.3.3.6 स्थितप्रज्ञ

इस कहानी में एक पिता पुत्र को एक युवती से बलात्कार करने से रोकने के लिए गोली मार देता है। विवाह के सालों बाद हुए बेटे को नैतिक शिक्षा देने में लापरवाही करने के कारण उसका कैसा चारित्रिक पतन होता है, यह कहानी इस कथा को बहुत ही कलात्मक ढंग से चित्रित करती है। बुढ़ापे में मिली संतान के प्रति आमतौर पर माता-पिता को अत्यधिक मोह हो जाता है और यह मोह किसी के लिए भी हितकारी नहीं होता।

3.3.3.7 मित्रावरुणौ

यह दो मित्रों की कहानी है। प्रियंवद एक हिंदी भाषी है और तानसिंग कार्बी। समय किस प्रकार लोगों की आत्मीयता का भी क्षय कर देता है, इस कहानी में हम भलीभाँति इस बात को महसूस कर सकते हैं। जब स्वार्थ आगे आ जाता है तब कोई रिश्तेदारी, मित्रता कुछ भी मायने नहीं रखती। प्राचार्य पद के लिए प्रियंवद और तानसिंग का नाम प्रस्तावित होता है। पर प्रियंवद के शराब पीने और उन पर बैंक का लोन होने के कारण उन्हें प्राचार्य पद नहीं दिया जाता। कहानीकार की सहानुभूति प्रियंवद के साथ है।

3.3.3.8 और जहाज डूब गया

इस कहानी की पृष्ठभूमि कार्बी आंगलांग है। एक बंगाली युवती मीता और विवाहित डॉक्टर राज की प्रेम कहानी इसमें चित्रित है। मीता डॉक्टर राज को चाहती तो है, पर डॉक्टर राज को अपने बच्चे से दूर नहीं करना चाहती, इसलिये संबंध तोड़ लेती है और एक दक्षिण भारतीय से विवाह कर लेती है। राज मीता की याद में घुलघुल कर आखिर मर जाते हैं। डॉक्टर राज के मरते ही उनकी पत्नी किसी दूसरे से शादी कर लेती है। यहाँ परकीया प्रेम का प्रसंग है। कहानीकार इसका समर्थन करते हुए से लगते हैं, इस तर्क पर कि डॉक्टर राज की पत्नी उनसे प्रेम नहीं करती थी। यह कहानी जो मुद्दा उठाती है, वह विचारनीय तो है, पर भारतीय मन इसका समर्थन करने में झिझकता है।

3.3.4 रीतामणि वैश्य की कहानियाँ

तामणि वैश्य की पूर्वोत्तर भारत केंद्रित बारह कहानियाँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं। पूर्वोत्तर पर केंद्रित इनकी सर्वाधिक कहानियाँ हैं। इनकी कहानियों में पात्रों के चरित्र चित्रण में मनोवैज्ञानिकता का सहारा लिया गया है। इनकी कहानियाँ पूर्वोत्तर भारत के जनजीवन के विविध पक्षों का यथार्थ चित्रण करती हैं।

3.3.4.1 व्यूह

यह एक सुंदर मनोवैज्ञानिक कहानी है। ऐसा भी हो सकता है कि आपका साथी आपसे सच में प्यार न करता हो। वह आपको सुविधापूर्ण जीवन की सीढ़ी के तौर पर इस्तेमाल भी कर सकता है। जब किसी के साथ ऐसा होता है, तब वह अंदर से टूट जाता है। प्रेम से उसका विश्वास उठ जाता है। प्रिया के साथ भी ऐसा ही होता है। मोहन उसको ऐशो आराम की जिंदगी की सीढ़ी की तरह इस्तेमाल करता है। प्रिया उससे विमुख तो हो जाती है। पर उसे मोहन से गर्भ रह जाता है। मोहन के व्यूह को तोड़ नहीं पाती। शादी की रात वह मोहन की सच्चाई जानने के बाद भी उसके पास चली जाती है। पिता के लिए छोड़ी गयी चिट्ठी में वह लिखती है कि वह मोहन को कभी प्यार नहीं देगी।

3.3.4.2 पतंगा

यह एक प्रेम कहानी है। इसमें प्रसंगानुसार बडोलैण्ड की आतंकवादी समस्या का भी चित्रिण किया गया है। इसमें बीरलांग अपनी बागदत्ता देखू के बदले सुदेम से विवाह कर लेता है। इस कहानी में पुरुष के कामुक प्रवृत्ति का चित्रण हुआ है। सुदेम कहती है कि बीरलांग ने इसलिए उसे ग्रहण नहीं किया कि वह उससे प्यार करता है, बल्कि इसलिये कि सुदेम देखू से पहले उसे उपलब्ध हो गई। मातृ न बन पाने से स्त्री के लिए पुरुष के दिल में और समाज में भी कोई सम्मानजनक स्थान नहीं होता इसको भी इस कहानी में स्थापित करने का प्रयास लक्षित होता है। पूर्वोत्तर के जनजातीय लोगों के मंगोल चेहरों को देखकर अपमानजनक टिप्पणियाँ करने और यहाँ के लोगों को अपना न मानने की शेष भारत की मनोवृत्ति पर भी कटाक्ष किया गया है।

3.3.4.3 मृगतृष्णा

यह कहानी असम के चर अंचल के शैक्षिक परिवेश पर प्रकाश डालती है। साथ ही यह कहानी होस्टल जीवन की कठिनाइयों और युवामन के अरमानों को भी सुंदर ढंग से चित्रित करती है। चर अंचल का एक मास्टर अपनी बेटी अफरीदा को शहर के एक बड़े कॉलेज में पढ़ने भेजता है। बाप का अपनी बेटी के उज्ज्वल भविष्य को लेकर कई सपने हैं। पर प्रेम करने की युवामन की स्वाभाविक लालसा की वजह से उसके साथ ऐसा कुछ अनपेक्षित घट जाता है कि अफरीदा फिर कॉलेज नहीं लौटती बड़े ही स्वाभाविक गति से चलने वाली इस कहानी की कथा अंत में अफरीदा के वापस कॉलेज न लौटने का भेद खोल देती है।

3.3.4.4 बंधन

यह कहानी इंसान और बेजुबान जानवर के बीच के लगाव को दर्शाती है। कैसे एक छोटी बच्ची किसी बिल्ली के साथ इस प्रकार बंध जाती है कि उसके बिना अपना जीवन सूना मेहसूस करने लगती है इस कहानी में इसे बड़े ही स्वाभाविक और मार्मिक तरीके से

चित्रित किया गया है। पिता के जानवरों से अपनी बच्ची को हो सकने वाले नुकसान के खयाल से चिंतित होना स्वाभाविक है । पर आत्मीयता कोई नफा-नुकसान नहीं देखती। घरेलु परिवेश को बड़े ही स्वाभाविक रीती से यहाँ पेश किया गया है।

3.3.4.5 एक दिन की डायरी

यह कहानी एक स्त्री की पुरुष से समता चाहने की कहानी है। कहानी एक दिन में घटित घटनाओं तक सीमित है, जैसा कि कहानी का शीर्षक संकेत करता है। स्त्री घर-बाहर हर जगह काम करती है, पर उसे पुरुषों की तरह समान अधिकार और सम्मान नहीं मिलता है। पति को घर के काम में हाथ बँटाने को कहने पर पति कहता है कि क्या पत्नी ने उसे बाइ समझ लिया है, पर जब पत्नी घर का सारा काम करती है, तो क्या वह बाइ नहीं हो गई। ऐसा भेद-भाव क्यों? श्रद्धा अपनी डायरी निकाल कर लिखने लगती है कि नारी का सारा जीवन पुरुष की सेवा करने में जाता है। नारी कितनी भी काबिल और कामियाब क्यों न हो उसे हमेशा पुरुष के नीचे रहना पड़ता है।

3.3.4.6 सुकून

यह दफ्तरी जीवन की कहानी है । यह कहानी एक आदर्शवादी अफसर के सामने पेश हुई एक मानवीय समस्या और फिर अकस्मात उस समस्या के समाधान हो जाने से अफसर को मिले सुकून की कथा कहता है । परीक्षा विभाग के सुपरिंटेंडेंट साहब किसी भी कीमत पर गलत बात का समर्थन नहीं करते । रुकसाना का घर टूट जाने की स्थिति आने पर भी वे अपनी ईमानदारी को दरकिनार करके उसे पास नहीं करा सकते। पर रुकसाना से उनको हमदर्दी है। इस कारण समस्या विकट हो जाती है। अंत में परीक्षा की कॉपियों के जांच के बाद भी रुकसाना फेल ही घोषित होती, पर पोते के जन्म के कारण ससुराल वालों के लिए उसका ग्रेजुएट होना न होना अब कोई मायने नहीं रखता। यह कहानी ईश्वरीय न्याय पेश करता है कि भले के साथ देर-सबेर ही सही भला होता ही है।

3.3.4.7 हरकांत की पत्नी

यह कहानी एक अनमेल विवाह से वधू के मन में उठने वाली विरक्ति और तिक्तता को व्यक्त करती है। रेवा का विवाह हरकांत से करा दिया जाता है जो रूप में, उम्र में किसी भी तरह उससे मेल नहीं खाता। नवविवाहिता पत्नी पति से झगड़ा करके उससे छुटकारा पाना चाहती है, पर अंत में पति के व्यवहार और अपने प्रेमी के धोखेबाजी से वह पति को ही स्वीकार कर प्यार करने लगती है। कई प्रेमी होते है जो प्रेमिका के किसी और के साथ विवाह कर लेने पर उसे बदनाम करने की कोशिश करते हैं। अगर हम किसी से प्रेम करते हैं, तो हमें उसके सम्मान को अपना सम्मान समझना चाहिये । धोखेबाज प्रेमी प्रेम और विश्वास के योग्य नहीं। रेवा यह बात समझ जाती है। इसीलिये पति को सबकुछ मानकर उन्हें स्वीकार कर लेती है। यह कहानी दाम्पत्य प्रेम की कहानी है। दाम्पत्य जीवन की कठिनाइयों को बड़े ही सुलझे हुए ढंग से यहाँ चित्रित किया गया है।

3.3.4.8 लोकटाक कब तक!

यह कहानी मणिपुर पर आधारित है। मणिपुर की आतंकवादी समस्या को बड़े ही प्रभावशाली ढंग से उसकी बारीकियों के साथ उजागर किया गया है। इस कहानी में एक क्रूर आतंकी को भी एक युवती से इतनी ममता हो जाती कि उसके प्राणों को बचाने के लिए खुद अपने प्राण दे देता है। दूसरी तरफ उस युवती का प्रेमी उससे तथाकथित देह की पवित्रता के जाँच की माँग करता हुआ अपनी नीचता का प्रदर्शन कर देता है। लोकटक झील के मछुवारों को वहाँ से बेदखल करने का एक मार्मिक प्रसंग भी इस कहानी में है। कहानी में आतंकवाद

पर जेरू और उस युवा आतंकवादी के बीच जो वाद-विवाद हुआ है, वह बहुत ही आकर्षक है और सारगर्भित भी । जेरू के माध्यम से कहानीकार ने इस समस्या को सुलझाने का एक रास्ता दिखाया है।

3.3.4.9 बंजारन

यह कहानी एक स्त्री का अपने और अपने परिवार का पेट पालने के लिए मजबूरी में अपने जिस्म का सौदा करने की कथा कहता है। स्त्री अगर हारती है, तो अपने बच्चों के लिए कहानीकार का यह मत है। और यह सत्य भी है। एक आम इंसान दूसरे का शत्रु बनता है तो पेट की खातिर लाजो भी बंजारन को इसलिए अपना स्थान छोड़ने पर मजबूर करवा देती है क्योंकि बंजारन की वजह से उसका व्यापार चौपट हो गया था और उसका बच्चा भूख से बिलबिलाता रहता था। इस कहानी में नट जाति के लोगों के प्रति लोगों के अन्यायपूर्ण व्यवहार का भी पर्दाफाश किया गया है।

3.3.4.10 आस्था

यह कहानी 'कामायनी' की प्रेरणा से लिखा गया है और कहानी के अंत में लेखिका ने उसको स्वीकारा भी है। मनु की तरह मानस भी बाढ़ में अपने परिवारजनों को खोकर श्रद्धा की तरह आस्था से मिलता है । आस्था से विवाह, गर्भावस्था के समय अपने ही गर्भस्थ संतान से ईर्ष्या करके घर छोड़कर चला जाता है और इड़ा की तरह मनीषा से अनुचित आचरण करता है। आधुनिक समय के समाज के साथ संबंध स्थापित करने में यह कहानी पूर्ण सफल है। यह कहानी यह बात सामने रखती है कि क्या पैसे से स्त्री को खरीदने की मनोवृत्ति गलत नहीं है । क्या स्त्री को पुरुष के बाद स्थान दिया जाना उचित है । दोनों अर्धनारीश्वर की तरह रहे तभी समाज में समरसता आ सकती है।

3.3.4.11गुरु दक्षिणा

जब कोई क्षमताशाली होता है, तब उसके इर्द-गिर्द सैकड़ों लोग घूमते हैं। पर ज्यों ही क्षमता चली जाती है, उसे सभी भूल जाते क्योंकि अब उससे किसी का काम नहीं बनेगा। यह कहानी भी एक क्षमताशाली प्रोफेसर के पदमुक्त होने के बाद हुई अवहेलना की कहानी है। साथ ही यह कहानी शिक्षा जगत में पद का सही-गलत फायदा उठाने वाले लोगों के चरित्र और गतिविधियों की कथा कहती है। इस कहानी में प्रोफेसर साहब सही-गलत हर तरीके से अपने चहेतों को प्रतिष्ठित करते हैं। इसके बदले में उन्हें उपहार और पदोन्नति भी मिलती है। पर जब वे पदमुक्त हो जाते हैं, तब उनके अपने चहेते ही उन्हें भूल जाते हैं। शिक्ष दिवस के दिन बुलाने आने का वादा करके भी कोई उन्हें विभाग में बुलाने नहीं आता और वे इंतजार करते-करते थक जाते हैं। निराशा और अवहेलना ही उनकी गुरु दक्षिणा बन जाती है।

3.3.4.12 गरति

यह कहानी यह बताती है कि घरेलू नौकरों को बहुत से मालिक कुछ भी नहीं समझते। उनका स्थान घर के कुत्ते से भी नीचे होता है। गरति के माँ-बहन को उसके मालिक घर में घुसने तक नहीं देते। गरति अपनी सहेली मारथा की कही बात पर कि पढ़-लिखकर ही अपनी हालत सुधारी जा सकती है, खाने-पहनने को न मिले फिर भी स्कूल नहीं छोड़ना चाहिए- विचार करती हुई अपने घरवालों के अपमान से दुःखी होकर गाँव वापस लौट जाती है। इस कहानी का अंत बड़ा ही कलात्मक और सांकेतिक है। यह घरेलू नौकरों के जीवन पर लिखी गई बड़ी ही सुंदर कहानी है।

3.3.5 जोराम यालाम की कहानियाँ

जोराम यालाम की अब तक 'साक्षी है पीपल' नामक एक ही कहानी संग्रह प्रकाशित हुई है। इसमें कुल दस कहानियाँ हैं। इनकी कहानियों में मूलत: अरुणाचली जनजीवन की कमजोरियों पर प्रकाश डाला गया है। इनकी कहानियों को अलग- अलग पहचानना मुश्किल हो जाता है क्योंकि इनकी अधिकतर कहानियाँ एक जैसी ही हैं।

3.3.5.1 साक्षी है पीपल

इस कहानी में बेटे-बेटियों में भेदभाव करने, एकाधिक पतियों के होने के कारण गृहकलह होने, चित्रित गाँव के लोगों के पिछड़नेपन को चित्रित किया गया है। इस कहानी में एक ऐसे गाँव का चित्रण किया गया है जो इतना पिछड़ा है कि हवाई जहाज को कोई विशाल पक्षी समझकर डर जाता है। वह क्षेत्र ही इतना पिछड़ा है कि एक गाँव वाले बीमारी से मुर्गियों और इंसानों की मौत का कारण दूसरे गाँव वालों को मानकर उस गाँव पर आक्रमण करके सभी गाँववालों को मार देते हैं। अंधविश्वास, पिछड़ापन इस कहानी में चित्रित हैं।

3.3.5.2 उसका नाम यापी था

इस कहानी में एक युवती के बार-बार बलात्कार का शिकार होने और अंत में आत्महत्या करने की कथा कही गई है। अरुणाचल में कुछ लोगों में बच्चियों के गर्भावस्था में ही विवाह करा देने की प्रथा का भी उल्लेख इस कहानी में हुआ है। यौन अनाचार का एक बड़ा ही घिनौना चित्र इस कहानी में उभरता है। यापी के प्रति जहाँ करुणा और सहानुभूति जगती है, वहीं पुरुष समाज के प्रति घृणा और क्रोध भी।

3.3.5.3 यासो

इस कहानी में बहुविवाह की समस्या को चित्रित किया गया है। साथ ही एक स्त्री को एक निडर और बलिष्ठ पुरुष की चाह होने की बात भी इस कहानी में आई है। यासो इसलिए अपने पहले पति को छोड़ आई थी क्योंकि वह डरपोक और कमजोर था। बहुविवाह का दुष्परिणाम यासो जानती है, इसलिये अपने भावी दामद को एकाधिक शादी न करने की सलाह देती है।

3.3.5.4 चुनौती

इस कहानी में जंगल के बंदरों और टिड्डियों के बीच जंगल का राजा कहलाने के लिए हुए युद्ध का वर्णन है। यह कहानी पंचतंत्र के किस्सों जैसा है। इसमें स्थान-स्थान पर युद्धों में जाने वाले सिपाहियों के मनोभावों को चित्रित किया गया है।

3.3.5.5 क्या सच में वे कभी मिले भी थे

इसमें अनैतिक यौन संबंधों पर प्रश्न खड़े किये गये हैं। आमिन अपने पहले पति को छोड़कर आओ बाबू से विवाह करती है। पर पहले पति से उसका गर्भ रह जाता है। आओ बाबू को बाद में इसका पता चलता है। आमिन ने अपने पति को इसलिये छोड़ा था क्योंकि उसकी सौतेली माँ उसके साथ अनैतिक यौन संबंध बनाती थी। यह कहानी अपना कथ्य संप्रेषित करने में असफल हो जाती है। कहानी के शीर्षक के साथ कहानी की कथा साम्य नहीं रखती है।

3.3.5.6 नदी

इस कहानी में भी अनैतिक यौन संबंध और परकीया प्रेम का चित्रण मिलता है। स्त्री की करुण नियति और संघर्षपूर्ण जीवन को यहाँ चित्रित किया गया है। स्त्री ही स्त्री की सबसे बड़ी शत्रु होती है, यह बात भी इस कहानी से साबित हो जाती है।

3.3.5.7 कामेश्वर बरुआ हालुवा बन गया

इस कहानी में धोखे से एकाधिक विवाह करने की कथा आती है। पति के धोखे का बदला लेने के लिए पत्नी भी शराब पीकर पति को पीटने लगती है। बहुविवाह की समस्या को यहाँ भी उठाया गया है।

3.3.5.8 वह बरसात की एक रात

यह राजीव गांधी विश्वविद्यालय के किसी भवन की छत ठीक कर रहे मजदूरों के छत से गिर कर घायल होने और फिर अस्पताल के लिए ऑटो में सफर करने पर अस्पताल न पहुँचने की कहानी है। कहानीकार क्या कहना चाहती है, यह इस कहानी में स्पष्ट नहीं होता।

3.3.5.9 मै यामी हूँ

यह कहानी भी परकीया प्रेम और बहुविवाह की समस्या पर लिखा गया है। इसमें यामी के संघर्ष के बाद टीचर बनने की कहानी कही गयी है, पर अपेक्षित प्रभावोत्पादकता के साथ नहीं।

3.3.5.10 क्या कहेंगे लोग

जोराम यालाम की यह कहानी बाकी कहानियों से अलग किस्म की है। इसमें एक युवती के अपनी पढ़ाई पूरी करने के लिए वेश्यावृत्ति करने पर मजबूर होने की कथा है। होटल में कॉलगर्ल का इंतजार करते पिता के पास जब उसकी बेटी ही कॉलगर्ल के रूप में पहुँच जाती है, तो जो स्थिति पैदा होती है, वह बड़ी शर्मनाक है, जिसके आघात से ही संभवत: पिता की हृदयगति रुक जाने से बाद में मौत हो जाती है। इसमें विवाह के लिए लड़कियों की मर्जी न पूछे जाने पर प्रश्न किया गया है।

इनकी कहानियों में अरुणाचली जनजीवन की कमियों को ही दिखाया गया है। इनकी कहानियों को अलग-अलग पहचानना मुश्किल हो जाता है क्योंकि इनकी अधिकतर कहानियाँ एक जैसी ही हैं।

3.3.6 अन्य कहानियाँ

ऊपर जिन कहानियों का परिचय दिया गया है उनके अतिरिक्त जमुना बीनी का 'आयाचित अतिथि और अन्य कहानियाँ' 2021 ई. में प्रकाशित कहानी संग्रह है। पूर्वोत्तर भारत पर फुटकल कहानियाँ लिखी जा रही हैं। पत्र-पत्रिकाओं में कुछ लेखकों की दो-एक कहानियाँ छपी हैं। इनमें से डॉ. नारायण चंद्र तालुकदार की 'अर्जुन चरित' (गौहाटी विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग की पत्रिका 'स्नेहिल' के चतुर्थ अंक, 2019 ई. में प्रकाशित), 'प्राप्ति' ('स्नेहिल' के तृतीय अंक, 2018 ई. में प्रकाशित), 'अधिगम', संजीव मण्डल की 'दामो बूढी', 'असम बंद', 'जिंदगी के स्याह पन्नें', 'गम के समंदर में खुशियों के मोती', प्रो. दिलीप कुमार मेधि की 'नाट रिचेबल' ('स्नेहिल' के तृतीय अंक, 2018 ई. में

प्रकाशित) डॉ. चुकी भूटिया की 'मुक्ति', डॉ. जमुना देवनाथ की 'लाइसेंस', डॉ. फिल्मेका मारबनियांग की 'थैइ थैइ' , बिद्या दास की 'लता' आदि प्रमुख हैं।

3.4 अन्य साहित्य

उपन्यास और कहानियों के अलावा भी पूर्वोत्तर भारत को आधार बनाकर कविता, निबंध, आलोचना, नाटक, लोक साहित्य, जीवनी, इतिहास, गीत, यात्रावृत्त, आदि भी हिंदी में रचे जा रहे हैं। आगे हमने उनका उल्लेख किया है।

3.4.1 कविता

पूर्वोत्तर भारत पर आधारित कविता संग्रहों का उल्लेख आगे किया गया है। देवराज का चिनार (1993 ई.), अनुपम कुमार का 'मैं बेचता हूँ दर्द' (2003 ई.), हरकीरत हीर का 'एक दर्द' (2007 ई.), 'दर्द की महक' (2012 ई.), मोहन कोईराला का 'रहना नहिं देस बिराना है' (2006 ई.), 'अवगुंठन की ओट से सात बहनें (2012 ई.), 'माँ की पुकार (2014 ई.), 'दीवारों के पीछे की औरत' (2014 ई.), खामोश चीखें' (2014 ई.), 'चुन्नियों में लिपटा दर्द (2017 ई.), 'बदमाश औरतें' (2018 ई.) और 'आग के अक्षर' (2018 ई.), ललित कुमार झा का 'मैं हूँ बह्मपुत्र' (2010 ई.), 'पर्यावरण के हक में (2011 ई.), 'पूर्वोत्तर भारत दर्शन' (2012 ई.), 'माँ' (2015 ई.) और 'ललित तरंग (2018 ई.), रफिकुल हक का 'तन्हाई' (2012 ई.), सुरेश चंद्र का 'कर्मण्येवाधिकारस्ते' (2013 ई.) और 'भगवान का अनुभव' (2013 ई.) सौमित्रम् का 'संबंधों के निशान' (2013 ई.) और 'संवेदनाओं की बैसाखी' (2015 ई.), चंद्रप्रकाश पोद्दार का 'सच का आईना' (2013 ई.), कुंतला दत्त का 'इंद्रधनुष का लम्हा' (2013 ई.), डॉ. बुद्धि प्रकाश शर्मा का 'अनुभूति' (दोहाकृति) और 'कर्म-बोध' (दोहाकृति), ज्योतिष कुमार देव का 'मुझे तुम आवाज देना' (2011 ई.), 'आवाज देते रहना' (2013 ई.), और 'जिंदगी एक सौगात' (2013 ई.), रण काफ्ले का 'भय' (2015 ई.), 'विशाल के. सी. का 'सहित (2015 ई.) और 'पोस्टर' (2017 ई.), अपराजिता डेका का 'विविधा' (2015 ई.), साधना सान्याल का 'नवीन प्रभात' (2016 ई.), दिलस लक्ष्मीचंद्र सिंह का 'मिट्टी की छाया' (2016 ई.), चित्रा दूधोडिया का ख्यालों की पगडंडी' (2017 ई.), भरत प्रसाद का 'पुकारता हूँ कबीर' (2019 ई.), माधवेंद्र पाण्डेय का 'खुब्लेई शिबुन चीड़वन' (2019 ई.), तारो सिन्दिक का 'अक्षरों की विनती' और 'फिर आना तुम', डॉ. जमुना बीनी का 'जब आदिवासी गाता है' (2018 ई.)।

3.4.2 निबंध

पूर्वोत्तर भारत पर आधारित हिंदी में कुछ निबंध संग्रह भी प्रकाशित हुए हैं। उनका उल्लेख आगे किया गया है।

लोकनाथ भराली का 'आधुनिक भारतीय मानस का संकट' (1972 ई.), चित्र महंत का असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति द्वारा प्रकाशित 'प्रागज्योति' (1989 ई.), नगेन शइकीया (सम्पादन) का 'ज्योति- प्रतिभा' (1995 ई.), विपुल चंद्र कलिता का 'लोहित किनारे की खुशबू' (2003 ई.), डॉ. देवेन चंद्र दास का राष्ट्रीय एकता पर आधारित तथा संस्कृति विषयक निबंधों का संकलन 'असम सुषमा कामरूपा' (2004 ई.), अच्युत शर्मा (सम्पादन) का 'अनुवाद सुधा भाग 1 (2006 ई.) और 'अनुवाद सुधा भाग 2 (2008 ई.), कमल चंद्र बायन का 'मनोहर असम' (2008 ई.), अदिति सैकिया का 'चिंतन: विविध आयाम' (2013 ई.), गोपाल जालान का 'जिंदगी की राह पर एक चिंतन प्रवाह' (2014 ई.), डॉ. भूपेंद्र प्रसाद शर्मा का 'जले हुए जख्म'।

3.4.3 आलोचना

पूर्वोत्तर भारत के साहित्य और साहित्यकारों को लेकर हिंदी में आलोचनात्मक ग्रंथ भी लिखे गये हैं। उनका उल्लेख आगे किया गया है।

कृष्ण नारायण प्रसाद 'मागध' का 'शंकरदेव: साहित्यकार और विचारक' (1976 ई.), ताराकांत झा का 'महापुरुष शंकरदेव तथा असम का सत्र संस्थान' (1978 ई.), धर्मदेव तिवारी का हिंदी और असमी के पौराणिक नाटक' (1979 ई.), चित्र महंत का राष्ट्रभाषा प्रचार एक झाँकी' (1987 ई.), बापचंद्र महंत का 'असम के बरगीत' (1988 ई.), डी. एन. राय का 'ज्योति प्रसाद आगरवालः व्यक्तित्व और कृतित्व' (1993 'असम के बरगीत' (1988 ई.), डी. एन. राय का 'ज्योति प्रसाद आगरवाल: व्यक्तित्व और कृतित्व' (1993 ई.), डॉ. अनिता डगोरे द्वारा संपादित 'पूर्वोत्तर भारतीय साहित्य', डॉ. असमी गगोइ का 'असम की सांस्कृतिक परम्परा', डॉ. भूपेंद्र रायचौधरी का 'शंकरदेव और तुलसीदास की वैचारिक भावभूमि (1997 ई.), नवारुण वर्मा का 'महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव' (2000 ई.), डॉ. भूपेंद्र रायचौधरी का 'श्रीमंत शंकरदेव: व्यक्तित्व और कृतित्व' (2002 ई.), डॉ. श्याम शंकर सिंह का 'अरुणाचल प्रदेश में हिंदी अध्ययन के नये आयाम', डॉ. भूपेंद्र रायचौधरी का 'असमिया लोक साहित्य की भूमिका, राम निरंजन गोयनिका का 'महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव (जीवन, कृतित्व एवं संदेश) (2004 ई.), देवराज का 'मणिपुरी कविता: मेरी दृष्टि में' (2006 ई.), जोराम यालाम का 'निशि समाजभाषिक अध्ययन' (2006 ई.), शेखरज्योति शील का 'विद्यापति विवेचन' (2007 ई.) दिनेश कुमार चौबे का 'रामचरितमानस एवं कंदलि रामायण की भाव- संपदा' (2008 ई.), 'असम में वैष्णव मत एवं साहित्य' (2009 ई.), 'असमीया और हिंदी साहित्य: अंतरंग पड़ताल' (2011 ई.) और हिंदी और असमीया में प्रथम रामायण' (2011 ई.), विजयलक्ष्मी का मणिपुर: हिंदी के विमर्श' (2011 ई.), सुरेश चंद्र का 'मणिपुर में हिंदी की विकास-यात्रा', कमल चंद्र बायन का 'शंकरदेव के बरगीत' (2013 ई.), नवकांत शर्मा का 'आधुनिक असमीया कविता' (2013 ई.), चित्र महंत का 'साहित्य और प्रेम', डॉ. हरेराम पाठक का 'पूर्वांचलीय राज्यों के साहित्यकारों का हिंदी को योगदान' (2009 ई.), डॉ. अमूल्य बर्मण का 'विद्यापति काव्य का सांस्कृतिक अध्ययन' (2009 ई.), सांवरमल सांगानेरिया का 'लोहित के मानसपुत्र: शंकरदेव' (2010 ई.), डॉ. देवेन चंद्र दास 'सुदामा' का 'मानवतावादी और राष्ट्रवादी महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव - माधवदेव' (2014 ई.), डॉ. हरेराम पाठक का 'असमिया लोक साहित्य एवं विश्लेषण' और 'पूर्वोत्तरीय राज्यों में स्वातंत्र्योत्तर हिंदी लेखन' (2019 ई.)।

3.4.4 नाटक

पूर्वोत्तर भारत पर आधारित कई नाटक भी लिखे गये हैं। आगे उनका उल्लेख किया गया है। छगनलाल जैन का 'इंसान की खोज' (1949 ई.) और 'संघर्ष' (1950 ई.), हीरालाल तिवारी का 'भास्कर वर्मण' (1989 ई.), तरुण आजाद डेका का 'कवच' (2013 ई.), डॉ. संजय कुमार सिंह का नागालैण्ड की तत्कालीन सामाजिक परिवेश पर आधारित रेडिओ नाटक 'आरम्भ' (2011 ई.), सुरेश चंद्र का 'महाभिनिष्क्रमना' (2014 ई.), 'दलितों के सूर्य' (2018 ई.) और 'मनुवादी दलित' (2019 ई.), ललित कुमार झा 'प्रेममय श्रीकृष्ण' (2016 ई.)।

3.4.5 लोक साहित्य

पूर्वोत्तर भारत का लोक साहित्य प्रचुर परिणाम में मौजूद है। स्थानीय भाषाओं में ही यह अधिकतर संकलित हैं। पर हिंदी में भी ऐसे ग्रंथों का संकलन होने लगा है। आगे ऐसे ग्रंथों का उल्लेख किया गया है।

भूपेंद्रनाथ रायचौधरी का 'असमिया लोक-साहित्य की भूमिका' (1978 ई.), देवराज का मणिपुरी लोक कथा संसार' (1999 ई.), अनुपम कुमार का 'असम के लोकनृत्य' (2007 ई.), मिलन रानी जमातिया का 'त्रिपुरा की लोककथाएँ (2008 ई.), हेरेराम पाठक का 'असमिया लोकसाहित्य: एक विश्लेषण' (2009 ई.) और 'भोजपुरी एवं असमिया संस्कार गुणों का तुलनात्मक विश्लेषण' (2010 ई.), भूपेंद्रनाथ रायचौधरी का 'उत्तर पूर्वांचल का लोकोत्सव' (2012 ई.), सुवदिनी का 'मणिपुरी लोकसाहित्य' (2012 ई.), समीर झा का 'गोवालपरीया लोक साहित्य : स्वरूप और मूल्यांकन' (2012 ई.), डी. पी. फिलिप का 'नागा लोककथाएँ', जोराम यालाम का 'तानि मोमेन' (2014 ई.), केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा द्वारा प्रकाशित और स्वर्णप्रभा चैनारी द्वारा संपादित 'बोरो लोक कथाएँ (2015 ई.), मिलन रानी जमातिया और नरेंद्र देववर्मा द्वारा संपादित 'कॉकबरक लोकसाहित्य' (2016 ई.), समीर झा का 'असमीया और मैथिली लोकगीतों में समभाव' (2016 ई.), मिलन रानी जमातिया और जय कौशल द्वारा संकलित, अनूदित और संपादित 'त्रिपुरा के गॉरिया लोकगीत' (2019 ई.) जोराम आनिया ताना का 'निशि जनजाति के लोकगीत' नागालैण्ड राष्ट्रभाषा प्रचार समिति द्वारा प्रकाशित 'सियोग के गीत, हिंदी विभाग, शिक्षा निदेशालय नागालैण्ड कोहिमा द्वारा प्रकाशित 'नागा त्योहार''

3.3.6 जीवनी

पूर्वोत्तर भारत के कई विशिष्ट व्यक्तियों और वीरों की हिंदी में जीवनी लिखने का भी प्रयास हुआ है। आगे ऐसे ग्रंथों का उल्लेख किया जा रहा हैं।

देवराज का 'संकल्प और साधना (1998 ई.), सांवरमल सांगानेरिया का 'ज्योति की आलोक यात्रा' (2003 ई.), विचित्र नारायण दत्त बरुवा का 'असम गौरव', डी. एन. राय का 'क्रांतिदूत ज्योतिप्रसाद', जी.एल. अग्रवाला का 'युगद्रष्टा ज्योतिप्रसाद', राष्ट्रपति पुरस्कार प्राप्त फुराइलाप्रम गोकुलानंद शर्मा का 'मणिपुर के वीरों की जीवन-गाथाएँ (2009 ई.), जगमल सिंह का 'पूर्वोत्तर भारत के क्रंतिकारी (2016 ई.), बिता कोमल का 'जमीं से आसमाँ की ओर' (2019 ई.), दिलीप बर्मन का 'सुरभि' और 'जीवन सुरभि' ।

3.4.7 इतिहास

पूर्वोत्तर भारत के अलग-अलग राज्यों का इतिहास भी हिंदी में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। आगे उनका उल्लेख किया गया है।

चिरंजीव जैन का 'असम का इतिहास' (1974 ई.), श्री विचित्र नारायण दत्त बरूवा का 'असम गौरव', देवराज द्वारा संपादित 'मणिपुर: विविध संदर्भ' और डॉ. जगमल सिंह का 'मणिपुर' (1988 ई.), तरुण आजाद डेका 'असम का इतिहास (2003 ई.) चित्र महंत 'असमीया साहित्य का इतिहास' (2005 ई.), सुरेश चंद्र का 'मणिपुर में हिंदी की विकास यात्रा' (2013 ई.), अलख निरंजन सहाय का 'असमीया साहित्य का परिचयात्मक इतिहास' (2014 ई.) इतिहास ग्रंथ हैं।

3.3.8 गीत

असम के मध्यकालीन कवि शंकरदेव और माधव देव के बरगीतों के संकलन भी विभिन्न विद्वानों ने किये हैं। आगे उनका उल्लेख किया गया है।

बापचंद्र महंत का 'सामाजिक पटभूमि सहित असम के बरगीत' (1988 ई.), कमलचंद्र बायन का 'शंकरदेव के बरगीत', प्रो. कृष्ण नारायण प्रसाद 'मागध' और प्रो. दिनेश कुमार चौबे द्वारा संकलित 'श्रीमंत शंकरदेव : बजावली समग्र, डॉ. लक्ष्मीशंकर गुप्त द्वारा संपादित 'महापुरुष शंकरदेव: ब्रजबलि ग्रंथावली' (1975 ई.)।

3.4.9 यात्रावृत्त

पूर्वोत्तर भारत पर आधारित कई यात्रावृत्त भी लिखे गये हैं। उनका उल्लेख आगे किया गया है। अज्ञेय ने 'परशुराम से तूरखम (एक टायर की राम कहानी)', 'माझुली' और 'बहता पानी निर्मला' नामक तीन यात्रावृत्त लिखे हैं जो उनके विभिन्न यात्रावृत्त के ग्रंथों में संकलित हैं। ग्रंथ के आकार में और तीन यात्रावृत्त प्रकाशित हुए हैं। वे हैं- सांवरमल सांगानेरिया का 'ब्रह्मपुत्र के किनारे किनारे (2006 ई.), 'अरुणोदय की धरती पर' (2008 ई.) और 'फेनी के इस पार', रविशंकर रवि का 'लाल नदी नीले पहाड़', अनिल यादव का 'वह भी कोई देस है महराज' और उमेश पंत का 'दूर दुर्गम दुरुस्त' ।

3.4.10 संस्मरणात्मक ग्रंथ

पूर्वोत्तर भारत के कुछ व्यक्तियों को लेकर संस्मरणात्मक ग्रंथों का भी प्रकाशन हुआ है। वे हैं- नवारुण वर्मा द्वारा संपादित 'समन्वय पुरुष छगनलाल जैन' (1996 ई.), अमूल्य बर्मण द्वारा संपादित 'डॉ. हीरालाल तिवारी (2002 ई.), अमूल्य बर्मण और अच्युत शर्मा द्वारा संपादित 'हीर- ज्योति' (2019 ई.) में हीरालाल तिवारी से संबंधित कई संस्मरण भी संकलित हैं, अच्युत शर्मा द्वारा संपादित 'डॉ. नंदकिशोर सिंहः अभिनंदन ग्रंथ' (2019 ई.) ।

3.4.11 डायरी साहित्य

कवि विजेंद्र की डायरी का संपादन 'कवि की अंतर्यात्रा' (2009 ई.) और 'कवि से संवाद' (2013 ई.) नाम से सत्यपाल सिंह चौहान ने किया है।

3.3.12 अनूदित साहित्य

ऊपर उल्लेखित ग्रंथों के अलावा भी कुछ ग्रंथ हैं, जो हिंदी में अनूदित हुए हैं, जिन्हें ऊपर दिये गये किसी वर्ग में नहीं रखे गये। आगे ऐसे ही अनूदित ग्रंथों का उल्लेख किया गया है।

मौलिक उपन्यासों के अलावा हिंदी में कई असमीया उपन्यासों के अनुवाद भी हुए हैं। ये उपन्यास हैं- रजनीकांत बरदलै के 'मिरि जीयरी' (1894 ई.) का जुगजीत नवलपुरी द्वारा किया गया अनुवाद 'मीरी बिटिया' (1959 ई.), प्रेम नारायण के 'पोहरर बाटत का सीता देवी द्वारा किया गया अनुवाद 'रोशनी की राह में' (1962 ई.), बीरेंद्र कुमार भट्टाचार्य के 'आइ' (1960 ई.) का लोकनाथ भराली द्वारा किया गया अनुवाद 'माँ' (1963), बीरेंद्र कुमार भट्टाचार्य के 'शतघ्नी' (1964 ई.) का गोपाल दास द्वारा किया गया अनुवाद 'शतघ्नी' (1964 ई.), रजनीकांत बरदलै के 'मनोमती' (1930 ई.) का लोकनाथ भराली द्वारा किया अनुवाद 'माँ' (1963), बीरेंद्र कुमार भट्टाचार्य के 'शतघ्नी' (1964 ई.) का गोपाल दास द्वारा किया गया अनुवाद 'शतघ्नी' (1964 ई.), रजनीकांत बरदलै के 'मनोमती' (1930 ई.) का लोकनाथ भराली द्वारा किया गया अनुवाद 'मनोमती' (1964 ई.), योगेश दास के 'डावर आरु नाइ' (1955 ई.) का नवारुण वर्मा द्वारा किया गया अनुवाद 'बादल छंट गए' (1976 ई.), बीरेंद्र कुमार भट्टाचार्य के प्रतिपद' (1970 ई.) का शारदा बरुवा द्वारा किया गया अनुवाद 'प्रतिपद'

(1977 ई.), उमा बरुवा के 'चियेन नदीर ढौ' का उन्हीं के द्वारा किया गया अनुवाद "सियेन नदी की लहरें' (1977 ई.), चैयद आब्दुल मालिक के 'सुरुजमुखीर स्वप्न' (1960 ई.) का लोकनाथ भराली द्वारा किया गया अनुवाद 'सूर्यमुखी का सपना' (1977 ई.), नवकांत बरुवा के 'कका देउतार हाड़' (1974 ई.) का नवारुण वर्मा द्वारा किया गया अनुवाद 'बंधन' (1979 ई.), बीरेंद्र कुमार भट्टाचार्य के 'मृत्युंजय' (1970 ई.) का कृष्णनारायण सिंह 'मागध' द्वारा किया गया अनुवाद 'मृत्युंजय' (1982 ई.), इंदिरा गोस्वामी के 'नीलकंठी ब्रज' (1976 ई.) का रामनाथ त्रिपाठी द्वारा किया गया अनुवाद 'नीलकंठ ब्रज' (1985 ई.), अरूप कुमार दत्त के 'चाह संक्रांत एटि कहानी' (1985 ई.) का एल.एल. गुप्ता द्वारा किया गया अनुवाद 'चाय की कहानी' (1986 ई.), नवकांत बरुवा के 'कपिलीपरीया साधु' (1953 ई.) का लोकनाथ भराली द्वारा किया गया अनुवाद 'कपिली के आर पार' (1988 ई.), लक्ष्मीनंदन बरा के 'गङा चिलनीर पाखि' (1963 ई.) का श्रीमती शारदा बरुआ द्वारा किया गया अनुवाद 'गंगा चील के पंख' (1989 ई.), बीरेंद्र कुमार भट्टाचार्य का 'फुलकोंवर पक्खी घोंरा' का महेंद्र नाथ दुबे द्वारा किया गया अनुवाद 'पाखी घोड़ा' (1990 ई.), बीरेंद्र कुमार भट्टाचार्य के 'मुनिचुनि पोहर' (1979 ई.) का नवारुण वर्मा द्वारा किया गया अनुवाद 'अँधेरा-उजाला' (1990 ई.), चैयद आब्दुल मालिक के अघरी आत्मार काहिनी (1969 ई.) का सत्यदेव प्रसाद द्वारा किया गया अनुवाद 'यायावर' (1992 ई.), बीरेंद्र कुमार भट्टाचार्य के 'इयारंगम' (1960 ई.) का डॉ. महेंद्र नाथ दुबे द्वारा किया गया अनुवाद 'प्रजा का राज' (1994 ई.), इंदिरा गोस्वामी के 'आधालेखा दस्तावेज' (1988 ई.) का नीता बनर्जी द्वारा किया गया अनुवाद 'जिंदगी कोई सौदा नहीं (1996 ई.), लक्ष्मीनंदन बरा के 'पाताल भैरवी' (1986 ई.) का नीता बनर्जी द्वारा किया गया अनुवाद 'पाताल भैरवी' (1996 ई.), होमेन बरगोहाई के 'अस्तराग' (1986 ई.) का महेंद्र नाथ दुबे द्वारा किया गया अनुवाद 'अस्तराग' (1996 ई.) इंदिरा गोस्वामी के 'छिन्नमस्तार मानुहटो' (2001 ई.) का पापोरी गोस्वामी द्वारा किया गया अनुवाद 'छिनमस्ता' इंदिरा गोस्वामी के अहिरण (1980 ई.) का बुद्धदेव चटर्जी द्वारा किया द्वारा किया गया अनुवाद 'छिनमस्ता' इंदिरा गोस्वामी के अहिरण (1980 ई.) का बुद्धदेव चटर्जी द्वारा किया गया अनुवाद 'अहिरण' और रजनीकांत बरदलै के 'निर्मल भकत' (1926 ई.) का चित्र महंत द्वारा किया गया अनुवाद 'निर्मल भकत'।

कुछ असमीया कहानियों के हिंदी में अनुवाद भी हुए हैं। पुस्तक के आकार में प्रकाशित ऐसे कहानी संग्रहों का उल्लेख आगे किया गया है।

पदमकुमारी गोहाई के 'माधुरी' का शंकरलाल शर्मा द्वारा किया गया अनुवाद 'माधुरी' (1947 ई.), महिम बरा के 'काठनिवारी घाट' (1961 ई.) का नवारुण वर्मा द्वारा किया गया अनुवाद 'काठनिवारी घाट' (1988 ई.), लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा के 'बुढी आइर साधु का डॉ. अजीत कुमार दास द्वारा किया गया अनुवाद 'दादी की कहानियाँ' (1990 ई.), शीलभद्र के 'अपराजेय' का डॉ. महेंद्र नाथ दुबे द्वारा किया गया अनुवाद 'अपराजेय' (1990 ई.), भवेंद्रनाथ शइकीया के 'सूर्यास्तर गान' का डॉ. महेंद्र नाथ दुबे द्वारा किया गया अनुवाद 'ढलान की बेला (1995 ई.), डॉ. निर्मलप्रभा बरदले के संपादन में प्रकाशित 'असमीया गल्प संकलन' के नवारुण वर्मा द्वारा किया गया अनुवाद 'असमीया कहानियाँ' (1995 ई.), भवेंद्रनाथ शइकीया के 'आकाश' का नवारुण वर्मा द्वारा किया गया अनुवाद 'आकाश' (1996 ई.), बिंदु चौधुरी द्वारा अनूदित बारह असमीया कहानियों का संकलन 'लोहित्य की लीला', रीतामणि वैश्य द्वारा अनूदित और संपादित असम की महिला कथाकारों की श्रेष्ठ कहानियों का संकलन 'लोहित किनारे', रवि शंकर रवि द्वारा संपादित संकलन 'असमिया की प्रतिनिधि कहानियाँ।

महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव द्वारा विरचित 'चित्र भागवत' के असमीया अनुवाद का हरिनारायण दत्तबरुवा द्वारा किया गया हिंदी अनुवाद 'चित्र भागवत' (1949), महापुरुष श्री श्री माधवदेव की अमर कृति नामघोषा का हरमोहन दास द्वारा किया गया अनुवाद 'महापुरुष माधवदेव का नामघोषा (1949), महापुरुष श्री श्री माधवदेव के नामघोषा का सुरेंद्रनाथ साहु द्वारा किया गया अनुवाद 'महापुरुष माधवदेव-

'कृत नाम घोषा' (1960), नलिनीबाला देवी की चुनिंदा कविताओं का लोकनाथ भराली और परेश चंद्र देव शर्मा द्वारा किया गया अनुवाद 'कविश्री माला' (1962), माधव कंदली द्वारा विरचित असमीया रामायण का नवारुण वर्मा द्वारा किया गया अनुवाद 'असमीया माधव कंदली रामायण (1976), चुनी हुई असमीया कविताओं का चित्र महंत द्वारा किया गया अनुवाद 'असमीया कविता', महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव के कीर्तन- घोषा का नवारुण वर्मा द्वारा किया गया अनुवाद 'श्रीशंकरदेव की कीर्तन- घोषा (1986-87), गणेश गगँ की काव्य-कृति 'पापरि का राजेंद्र प्रताप द्वारा किया गया अनुवाद, कार्बी रामायण चाबिन आलुन का डॉ. देवेन चंद्र दास 'सुदामा' द्वारा किया गया अनुवाद, ज्योतिप्रसाद आगरवाला की रचनावली का देवी प्रसाद बागड़ोदिया द्वारा किया गया अनुवाद 'ज्योति प्रभा (1995 ई.), और डॉ. वाणीकांत काकति के साहित्येतिहासपरक पुस्तक का नवारुण वर्मा द्वारा किया गया अनुवाद 'प्राचीन असमीया साहित्य' ।

डॉ. वाणीकांत काकति का 'साहित्य आरु प्रेम' निबंध संग्रह का चित्र महंत ने 'साहित्य और प्रेम' (1993) नाम से अनुवाद किया।नीलमणि फुंकन के 'साहित्य कला' का सुमति तालुकदार द्वारा किया गया अनुवाद 'साहित्य कला' (1958 ई.), डॉ. करबी डेका हाजरिका के 'माधवदेवः साहित्य, कला और दर्शन' सुजाता वैश्य द्वारा किया गया अनुवाद।

प्रवीण फुकन के ऐतिहासिक नाटक 'लाचित बरफुकन' का छगनलाल जैन द्वारा किया गया अनुवाद 'लाचित बरफुकन' (1971), प्रवीण फुकन के ही नाटक 'मणिराम देवान' का मदनलाल खेतान द्वारा किया गया अनुवाद 'मणिराम देवान' (1992), रूपकोंवर ज्योतिप्रसाद आगरवाला के 'शोणित कुँवरी' (1925 ई.) का तरुण आजाद डेका द्वारा किया गया अनुवाद 'शोणित कुँवरी' ।

लक्ष्मीनाथ फुकन के साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त 'महात्मार परा रूपकोंवरों लै' का नवारुण वर्मा द्वारा किया गया अनुवाद 'महात्मा से रूपकोंवर तक', आबिदुद्दिन अहमद के 'संप्रीतिर साधक: आजान फकीर' का रफिकुल हक द्वारा किया गया अनुवाद 'संप्रीति का साधकः अजान फकीर' ।

हेमरथ वर्मन द्वारा संकलित और नवारुण वर्मा द्वारा अनूदित 'डाक के वचन' (1992 ई.), डॉ. बि. पि. फिलिप द्वारा अनूदित, संकलित और संपादित तथा नागालैण्ड राष्ट्रभाषा प्रचार समिति द्वारा प्रकाशित 'नागा लोक कथाएँ ।

3.3.13 पूर्वोत्तर की हिंदी पत्र-पत्रिकाएँ

पूर्वोत्तर की प्रमुख हिंदी पत्रिकाएँ निम्नलिखित हैं-

'राष्ट्रसेवक' (1951 ई.) के प्रथम संपादक रजनीकांत चक्रवर्ती थे । वर्तमान संपादक डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया हैं। फिलहाल यह पत्रिका द्विभाषिक है । 'उलुपी' (1997 ई.) के संपादक रविशंकर रवि हैं। 'अरुणप्रभा' (2001 ई.) के संपादक नंदकिशोर पाण्डेय हैं । 'समन्वय पूर्वोत्तर' (2008 ई.) केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा की पूर्वोत्तर भारत केंद्रित पत्रिका है। 'पूर्वोत्तर भारती दर्पण' (2014 ई.) के संपादक डी.पी. फिलिप हैं । 'शोधमीमांसा (2016 ई.) के संपादक रीतामणि वैश्य हैं। 'स्नेहिल' (2016 ई.) । 'कंचनजंघा' (2020 ई.) के संपादक डॉ. प्रदीप त्रिपाठी हैं। 'पूर्वोत्तर सृजन पत्रिका' (ई-पत्रिका, 2020 ई.) के संपादकत्रय रीतामणि वैश्य, जय कौशल और मिलन रानी जमातिया हैं। 'शोध चिंतन पत्रिका' (ई-पत्रिका, 2020 ई.) के संपादक रीतामणि वैश्य हैं। 'लोहित्य साहित्य सेतु' (ई-पत्रिका 2020 ई.) के संपादक प्रीति वैश्य हैं। 'कला' (2021 ई.) के संपादक डॉ. एलाबम विजयलक्ष्मी हैं। 'पूर्वांगन' (ई-पत्रिका, 2021 ई.) के प्रधान संपादक प्रो. भरत प्रसाद और

संपादक डॉ. सुनील कुमार हैं । 'नेहु ज्योति' के संपादक प्रो. दिनेश कुमार चौबे हैं। इनके अलावा 'मेघालय दर्पण' पत्रिका भी प्रकाशित होती है।

पूर्वोत्तर से कई हिंदी समाचार पत्र प्रकाशित हुए, पर कुछ समय बाद किसी कारणवश बंद हो गये । अभी भी प्रकाशित हो रहे पूर्वोत्तर के प्रमुख हिंदी समाचार पत्र हैं- सेंटिनल, दैनिक पूर्वोदय, पूर्वांचल प्रहरी, और प्रात: खबर आदि हैं। सेंटिनल और पूर्वांचल प्रहरी का प्रकाशन 1989 ई. से शुरू हुआ। दैनिक पूर्वोदय का प्रकाशन 2005 ई. से शुरू हुआ ।

चतुर्थ अध्याय

पूर्वोत्तर विषयक हिन्दी लेखन

4.1 परिचय

पूर्वोत्तर भारत के विषय में कहना गलत नहीं होगा कि पूर्वोत्तरक्षेत्र एक ऐसे फूल के समान है जिसके बगैर भारत रूपी गुलदस्ते की कल्पना ही नहीं की जा सकती। अपनी सांस्कृतिक एवं भाषाई विविधता के लिए पूर्वोत्तर पूरे भारत में जाना जाता है। कई भाषाओं में यहाँ के जीवन-मूल्यों को आधार बनाकर साहित्य का निर्माण हुआ है। कहने का अभिप्राय यह है कि कई भाषाओं के लेखकों ने यहाँ के जन-जीवन को अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त किया है। यहाँ के मूल बाशिंदों की जिंदगियों को अपने साहित्य का माध्यम बनाया है। लेकिन यदि हिंदी साहित्य के इतिहास को उलट-पलटकर देखते हैं तो हमें स्थिति ठीक नजर नहीं आती। आशय है कि हिंदी साहित्य में पूर्वोत्तर को लेकर एक उदासीनता का भाव दिखाई देता है।

जिसके कारण हिंदी साहित्य में पूर्वोत्तर का रेखांकन काफ़ी कम मात्रा में पाया जाता है। लेकिन आज हिंदी साहित्य में विभिन्न विमर्शों के उत्पन्न होने के कारण पूर्वोत्तर को लेकर जिज्ञासा का उदय जरूर हुआ है। यह समझने का प्रयास किया जा रहा है कि पूर्वोत्तर कैसा है? वहाँ की जिंदगी की क्या विशेषताएँ एवं समस्याएँ हैं? कुछ यहाँ के मूल लोग और कुछ बाहरी लोग पूर्वोत्तर के विषय में हिंदी भाषा में सृजन कर रहे हैं। असम, अरुणाचल, त्रिपुरा, मणिपुर, मिजोरम और मेघालय में सृजनात्मक वातावरण का निर्माण हुआ है। हिंदी भाषा और साहित्य में पूर्वोत्तर एवं वहाँ की जिंदगी से जुड़े तमाम अध्यायों को विषय बनाकर कुछ 'यात्रा वृतांत, संस्मरण, कहानी, कविता, उपन्यास आदि लिखे गये हैं। मुख्य रूप से पूर्वोत्तर को लेकर ग्यारह उपन्यास अभी तक शोधार्थी को प्राप्त हुए हैं। साथ ही दो कहानी संग्रह, छः यात्रा-वृत्तांत, कुछ कविताएँ, कुछ संस्मरण एवं निबंधों की जानकारी शोधार्थी को है। जिनका शोधकर्ता ने अवलोकन भी किया है।

अभी तक जो कुछ भी लिखा गया है उसको देखकर यह कहना ठीक होगा कि पूर्वोत्तर को लेकर अधिकतर रचनाएँ गैर-पूर्वोत्तर के रचनाकारों ने की है। नीचे हिंदी साहित्य में पूर्वोत्तर संबंधी रचनाओं को उनके विधागत स्वरूप में विश्लेषित किया जा रहा है।

4.2 यात्रा वृत्तांत

यात्रा वृत्तांत किसी यात्री के निजी अनुभवों का लेखा-जोखा होता है। जिसमें संवेदना को कलात्मक एवं साहित्यिक पद्धति से उकेरा जाता है। यात्रा वृत्तांत किसी भी मानव के जीवन, उसकी सभ्यता एवं उसकी संस्कृति को जानने-समझने का एक दृष्टिकोण प्रदान करता है | यात्रा वृत्तांत को अनेक विद्वानों ने यात्रा साहित्य का नाम दिया है। वहीं कुछ विद्वानों ने इसे यात्रा संस्मरण कह कर पुकारा है। यात्रा वृत्तांत गद्य साहित्य की समृद्ध विध है । हिंदी में इस विधा की शुरूआत भारतेंदुकाल से होती हुई दिखाई पड़ती है।

यह बात सत्य है कि मनुष्य स्वभाव से ही यायावर होता है। उसका स्वभाव घुम्मकड़ किस्म का रहा है। राहुल सांकृत्यायन ने घुम्मकड़ी को धर्म का दर्जा दिया है। उनका मानना है कि "मेरी समझ में दुनिया की सर्वश्रेष्ठ वस्तु है घुम्मकड़ी । घुम्मकड़ से बढ़कर व्यक्ति और समाज के लिए कोई हितकारी नहीं हो सकता है।" [1]

सामान्यत: कहा भी जाता है कि यात्राएँ मनुष्य को सहज बनाती हैं। जीवन को जीना सिखाती हैं। विभिन्न समाजों से मेल कराती हैं। जीवन के सार को बताती हैं। इसलिए सभी को यात्राएँ करनी चाहिए। इन्हीं सब बातों को समेटकर रचनाकारों ने यात्राएँ लिखी हैं। हिंदी के कुछ प्रमुख यात्रा वृत्तांत इस प्रकार हैं- अरे यायावर रहेगा याद, कुछ अटके कुछ भटके, अरुणोदय की धरती पर, रास्ते की तलाश में, वह भी कोई देश है महाराज, ब्रह्मपुत्र के किनारे-किनारे।

पूर्वोत्तर भारत के असम राज्य में जन जीवन की प्रकृति एवं वन्य जीवों के बीच सहज संबंधों को देखा जा सकता है। प्रकृति एवं वन्य जीव को जन जीवन से जोड़कर देखते हुए अज्ञेय ने लिखा है कि "जिसने वह नहीं देखा, वह नहीं मानेगा कि संस्कृत वाक्यों में कदली वन में विचरते हाथियों का वर्णन मिलता है, वह अक्षरतः सत्य हो सकता है। जंगली ही सही, केले के इतने बड़े जंगल की दो घंटे मोटर दौड़ा कर भी पार न हो... और उनकी चिकनी गहरी हरी छाँहों में कहीं हाथियों के झुण्ड और कहीं बड़ी शालीनता से घूमते मिथुन ... मिथुन अरना भैंसा ही होता है, किंतु अरने भैंसे से कहीं अधिक गठे शरीर वाली और फुर्तीलीवन्य जातियाँ सभी मिथुन को पूज्य मानती हैं, कुछ जातियाँ अपने को मिथुन- कुलोत्पन्न बताती हैं और मिथुन को अपना पूर्वज मानकर पूजती हैं। कहीं कहीं मादा मिथुन पालते भी हैं।"'[2]

अनिल यादव अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'वह भी कोई देश है महाराज' में मेघालय की खासी महिलाओं के विषय में लिखते हैं कि "खासी महिलाओं को पूर्वोत्तर में सर्वाधिक व्यापार चतुर माना जाता है। लेकिन इस क्षेत्र के सबसे बड़े धार्मिक खासी बाजार यूडो (बड़ा बाजार) में गैर- मंगोल चेहरे वाले लगातार बढ़ते जा रहे हैं। खरीद- फरोख्त की भाषा बिहारी टोन की हिंदी 'केतनाठु पिसा हो चुकी है। [3]

अरुणाचल प्रदेश के विषय में लेखिका निरुपमा कहती हैं "अरुणाचल प्रदेश एक ऐसा राज्य है जिसके विभिन्न क्षेत्रों की वेश-भूषा, भाषा, धर्म, सामाजिक जन जीवन तथा कला संस्कृति पर उसके सीमावर्ती क्षेत्रों का प्रभाव है। राज्य के उत्तरी क्षेत्र पर तिब्बत, पूर्वी क्षेत्र पर बर्मा तथा दक्षिण क्षेत्र पर असमी सभ्यता तथा संस्कृति का प्रभाव है। एक बात जो सर्वव्यापक है। वह है वहाँ की कला। राज्य की अधिकांश सभी जातियाँ, जनजातियाँबेतों पर सुंदर नक्काशी का कार्य करने में निपुण हैं। यहाँ की महिलाएँ भी शिल्प एवं बुनाई कला में प्राकृतिक तथा पौराणिक दृश्यों को उकेरने में कुशल हैं।[4]

नागालैंड के त्यौहार के बहाने वहाँ की लोक संस्कृति को दिखाने का प्रयास करती हुई निरुपमाने लिखा है कि "नागा लोगों द्वारा मनाये जाने वाले त्यौहारों में से कोंयी, मोमात्सु, तुलुनी, तोक्कूएमोंग प्रमुख हैं। नागा आदिवासियों का सबसे लोकप्रिय नृत्य है 'नाग नृत्य' जो त्यौहारों के अवसर पर किया जाता है। नागा लोग अपने नृत्य को 'लिम' कहते हैं व नागा नृत्य वीर रस से भरा उत्तेजना युक्त नृत्य है। इन नृत्यों में युद्ध कलाओं का प्रदर्शन करते हुए नाग नर्तक अपने सिर पर लंबे पट्टे अथवा सींगों का मुकुट पहनकर भालों के साथ नृत्य करते हैं। [5]

पूर्वोत्तर भारत के अन्य राज्य मणिपुर के आर्थिक जीवन के बारे में जगमल सिंह लिखते हैं कि "औद्योगिक उत्पादन कृषि, वन संपदा तथा खनिज संपदा पर निर्भर करते हैं। मणिपुर की भूमि उर्वर है, वन संपदा बहुतायत में है और पर्वत श्रृंखलाएँ खनिज भंडार युक्त हैं किंतु इन सब बातों के होते हुए भी मणिपुर में औद्योगिकरण संभव नहीं हो सका है। यहाँ लगभग 4% जनसंख्या ही उद्योग में काम करती है। जिसमें 3.5% गृह उद्योगों में कार्यरत हैं। मणिपुर की भौगौलिक स्थिति उबड़-खाबड़ धरातल, दुर्गम मार्ग, यातायात एवं परिवर्तन के साधनों की सुविधा का अभाव, तकनीकी जानकारी का अभाव, छोटा स्थानीय बाजार तथा पूँजी का अभाव आदि मणिपुर के औद्योगीकरण के मार्ग में बाधक तत्त्व है।" [6]

असगर वजाहत मिजोरम के बौद्धों के विषय में लिखते हैं कि "मिजोरम के बौद्ध चेरावंद शाखा के अनुयायी हैं जो हिंदू विश्वासों और एनिमिज्म दर्शन के सिद्धांतों का सम्मिश्रण है। स्थानीय लोग मंदिर को निर्वाण शुक मंदिर के नाम से जानते हैं। मंदिर के दोनों तरफ़ भिक्षुओं के रहने की व्यवस्था है। इनका जीवन इतना सादा और सरल लगा कि ईर्ष्या होने लगी। लगा कि वे इस छोटे से पहाड़ को पूरा संसार मान बैठे हैं। यहाँ जो उगता है वह खाते हैं यहाँ जो हवा आती है उससे साँस लेते हैं और अपने जीवन को विश्वासों के अनुसार जीते हैं। ऐसी जगहें संसार में कम ही बची होंगी जहाँ धर्म, राजनीति और व्यवसाय के साथ न जुड़ गया हो ।[7]

मृदुलागर्ग अपने यात्रा वृत्तांत 'कुछ अटके कुछ भटके' में सिक्किम के विषय में लिखती हैं कि "ढाबे की मालकिन ने मेजपोश में पोशीदा मिट्टी के तेल की सिगड़ी जला रखी थी । खूब इसरार के साथ हमें वहाँ बिठलाया गया था । नीचे आँच ऊपर भाँप उठाती आँच से उतरी ताजा सुनहले सेला चावल की ताहरी । चामू सरोवर देवभातमाजा जाता है। उसके आस-पास केवल शाकाहारी भोजन मिलता है।" [8] प्रस्तुत पंक्तिओं के माध्यम से सिक्किमी महिलाओं की मेहमान नवाजी को दिखाया गया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि पूर्वोत्तर भारत की संस्कृति एवं समाज दोनों अतुलनीय है । यात्रा वृतांतों के माध्यम से रचनाकारों ने पूर्वोत्तर भारत की प्रकृति की सुंदरता का यथावत चित्रण किया है साथ ही वह यहाँ की संस्कृति का उत्कृष्ट चित्रण करने में सफल हुए हैं। लगातार इस क्षेत्र में रचनाकार सक्रिय हो रहे हैं।

4.3 संस्मरण

पूर्वोत्तर विषयक हिंदी साहित्य लेखन में संस्मरण की उपलब्धता न के बराबर है । इस विधा में रचनाकारों को कार्य करने की बहुत आवश्यकता है। चूँकि संस्मरण एक ऐसी विधा है जिसमें स्मृतियों को फिर से जीवित किया जाता है। इसलिए आज जरूरत है कि भाग-दौड़ भरी जिंदगी में उन स्मृतियों को जिन्दा किया जाए जो व्यक्ति को साहस दे सके, सुकून दे सके।

4.4 कहानियाँ

हिंदी कहानियों में पूर्वोत्तर भारत को चित्रित करने का सबसे सफल प्रयास अज्ञेय ने किया। इनका नाम अग्रणीय लेखकों में आता है। पूर्वोत्तर भारत पर लिखी गयी उनकी कहानियों के अंतर्गत 'हीलिबोन की बत्तखें', नाग पर्वत की एक घटना एवं जयदोल आदि कहानियों को देखा जा सकता है। हीलिबोन की बत्तखें नामक कहानी में हीलिबोन के पारिवारिक वातावरण को कहानीकार ने अप्रत्यक्ष रूप से चित्रित किया है। हीलिबोन अपने घर में अकेली है। उसके एकाकीपन ने हीलिबोन के मन में एक अलग ही रूप दिया है । इस विशेष मानसिकता का दर्शन एक विशेष घटना एवं वातावरण में होता है। जब उसकी बत्तखों की हत्या करने वाले का शिकार (लोमड़ी) को कैप्टन दयाल मारता है।

उस निर्दयी शिकारी अर्थात् लोमड़ी को देखने के लिए उत्सुक होकर दोनों निकलते हैं। उन्होंने ऐसा दृश्य देखा कि "करारे में मिट्टी खोद कर बनायी हुई खोह में या कि खोह की देहरी पर नर लोमड़ी का प्राण हीन आकार दुबका पड़ा था कास के फूल की झाड़ू सी पूंछ उस की रानों को ढंक रही थी जहाँ गोली का जख्म होगा। भीतर शिथिल - गात लोमड़ी उस शव पर झुकी खड़ी थी, शव के सिर के पास मुँह किये मानों उसे चाटना चाहती हो और फिर सहम कर रुक जाती है। लोमड़ी के पांवों से उलझते हुए तीन छोटे-छोटे बच्चे कुनमुना रहे थे। उस

कुनमुनाने में भूख की आतुरता नहीं थी, न वे बच्चे लोमड़ी के पेट के नीचे घुसड़-पुसड़ करते हुए भी उसके थनों को ही खोज रहे थे। माँ और बच्चों में किसी को ध्यान नहीं था कि गैर और दुश्मन की आँखें उस गोपन घरेलू दृश्य को देख रही हैं। " [9]

उस परिवार का स्नेह और दर्द देखकर वह अपने एकाकीपन की व्यथा को नियंत्रित करने में असमर्थ होकर उन्माद की अवस्था में अपनी उन बत्तखों की स्वयं ही हत्या कर देती है जिनसे उसे अत्यंत प्रेम था और जिनके सौंदर्य को देखकर वह गर्व से फूली नहीं समाती थी। स्पष्ट है कि हीली की अवस्था और विक्षिप्त व्यवहार का कारण उसके परिवार का वातावरण ही है।

जयदोल कहानी का नायक सागर है। वह एक लेफ्टिनेंट हैं। उसको एक दिन शिवसागर के मंदिर को देखने की इच्छा हुई वह मंदिर देखने के लिए उतावला हो रहा था। एक फौजी आदमी होने के बावजूद उसके अंदर आस्तिकता थी। उसमें कला की वस्तुओं के प्रति रुचि थी। उसे 'शिवसागर' 'जदसागर' आदि सुंदर नाम बहुत मुग्ध करते हैं। वह सोचता है कि सागर तट के मंदिर को दोल कहना सुंदर कवि की कल्पना कैसी है। सचमुच जब ताल के जल में मंद हवा से सिहरती चाँदनी में मंदिर के कुहासे सी परछाई डोलती होगी तब मंदिर सचमुच सुंदर हिडोले सा दिखता होगा।

इस कहानी की नायिका ययमती है। वह एक रानी है। ययमती एक दिन नागा युवक की बात के उत्तर में 'चेक' के नाम पूरा उच्चारण नहीं करती। वह 'चुकिल' कहकर शब्द को कुछ ऐसे भाव से अधूरा छोड़ देती है जैसे उस शब्द के उच्चारण से मुँह दूषित हो जाएगा। वह कुछ बोलना चाहती है पर कुछ भी न कह सकी। इस प्रकार की कलात्मक भूमिका कहानी की कलात्मक इकाई का अविभाज्य अंग बन जाती है। इस पृष्ठभूमि के कारण आहोम राजाओं के रंग महल में आश्रय पाकर शिथिल हो जाने के बाद वह आँखे बंद करके कुछ देखने लगा।

'नागा पर्वत की घटना' कहानी में अंग्रेज सैनिक ने आत्म समर्पण करने वाले दो सौ सौनिकों को भून डाला है। यहाँ जापानी सैनिक आत्म समर्पण करते हैं। ये इस बात का प्रतिबिम्ब है कि बर्बर पशु का हौसला बड़ी तेजी से गिरता है। उन सैनिकों के जीवन के अनुभवों का वर्णन किया गया है। सैनिक जीवन एवं युद्ध की मानसिकता को सफलता के साथ निरुपित किया गया है। जैसे कि युद्ध सेना के अनुशासित पशु को अनुशासनहीन भी बना सकता है। की तैयारी के रूप में सैनिक का महत्व होता है। सैनिक जीवन में सैनिक को अनुशासन में रहना सिखाया जाता है।

हाँ, फौजी जीवन आदमी को इतना अनुशासनात्मक बना देता है कि फायर का हुक्म मिलते ही गोली दाग देता है। उचित-अनुचित कुछ नहीं सोचता। यह तो इतनी बड़ी बुराई नहीं है। क्योंकि ऐसाडिसिप्लिनतो हम चाहते ही हैं और जो चाहा जाए उसका हो जाना क्यों बुरा ? इसके लिए मनुष्य मात्र की एक सहज प्रवृत्ति से लाभ उठाया जाता है। इसी प्रवृत्ति से लाभ उठाकर सैनिक जीवन में सैनिक की नैतिकता के विवेक को पूरी तरह से बेहोश करने का प्रयत्न किया जाता है। उसे पूरी तरह से अनुशासन में जकड़ने का प्रयत्न किया जाता है इस अनुशासन के फलस्वरूप सैनिक सधा हुआ पशु मात्र रह जाता है। पशु से मनुष्य को अलगाने वाले विवेक से उसे दूर हटाया जाता है। इसलिए वह पशु से भी बदतर हो जाता है क्योंकि पशु, पशु होकर अपने पद पर है। और मनुष्य (पशु होकर) अपदश्य ...। मनुष्य को अगर ठीक प्रकार से अनुशासित किया जाए तो वह विवेक छोड़कर अनुशासन के मार्ग पर चलने लगता है। वह अपने वरिष्ठ अधिकारी के आदेश पर किसी को भी गोली मार सकता है और अपने आपको भी मौत के मुँह में झोंक सकता है।

जोराम याला नबाम द्वारा रचित 'साक्षी है पीपल' कहानी संग्रह के अंतर्गत आठ कहानियाँ संकलित हैं। इन कहानियों में स्त्री जीवन की पीड़ा एवं शोषण का चित्रण प्रमुख रूप से किया गया है तथा साथ ही बच्चों के जीवन को भी दिखाया गया है। अनेक माँओं किंतु एक ही पुरुष की संतान होकर साथ-साथ रहते, सोते खाते शिकार करते खेती में सहायता करते, शैतानी एवं मनोरंजन करते तथा अपनी जरूरतें पूरी करने को 'आतुर होते हुए दिखाई देते हैं।

ये बच्चें सिर्फ़ पिता से डरते हैं। माँ से कभी भी नहीं। ये स्थिति तब है जब वह पिता कोई बड़ा काम नहीं करता। बस कभी-कभी गुस्सा होकर दाव उठाये पत्नियों को धमकाने लगता है। बच्चे समझने लगते हैं कि उनका पिता अलग-अलग दिन अलग- अलग माँओं के पास जाता है। लेकिन उनके मन में कोई सवाल नहीं उभरता। वे जन्म ही इसके अभ्यस्त हो चुके हैं। यह उनकी समाज व्यवस्था का अंग बनकर सदियों से इसी तरह की जीवन-शैली चली आ रही है। जहाँ शिक्षा से इस चलन में बदलाव का प्रभाव बढ़ गया है। वहाँ इस चलन में बदलाव आया, बच्चे बदलाव को भी जानने की कोशिश कर रहे हैं।

चितरंजन लाल भारती द्वारा रचित कहानी संग्रह 'पूर्वोत्तर का दरद' के अंतर्गत ग्यारह कहानियों का संकलन किया गया है। जिसके अंदर मुख्य रूप से दो प्रकार की पीड़ाएँ दिखाई देती हैं। विस्थापन और अलगाववाद। जिसे वह सदियों से झेल रहा है। विस्थापन प्रकृति द्वारा एक ओर बाढ़ के रूप में दिखाई देता है तो दूसरी ओर मनुष्यों द्वारा निर्मित हिंसक कारनामों द्वारा। ऐसी स्थितियाँ जब विकट बनती हैं तो अलगाववाद और आतंकवाद उफन पड़ता है। इसी के अंतस में विरोधी या प्रतिद्वंदी केन्द्र भी होते हैं जो समयानुसार पल्लवित, पुष्पित होते रहते हैं। कुल मिलाकर ऐसी अराजक स्थिति बन जाती है। जिसमें व्यक्ति और परिवार से शुरू होकर इसकी जद में गाँव, शहर और सम्पूर्ण समाज तक आकर उलझता चला जाता है। विकट स्थिति तब बनती है जब आगे का रास्ता तो दिखता नहीं पीछे का रास्ता भी बंद हो जाता है। फिर भी यह मनुष्य की जिजीविषा है कि वह अंततः रास्ता निकालता ही है। इन्हीं रास्तों की खोज करने का प्रयास ये कहानियाँ करती हैं।

4.5 कविता

पूर्वोत्तर पर हिंदी कविता में लेखन कार्य अल्प मात्रा में हुआ है। हिंदी साहित्य में प्रयोगवाद के पुरस्कर्ता अज्ञेय को शिलांग के प्राकृतिक सौंदर्य ने काफ़ी आकर्षित किया था। उन्होंने अपनी कई कविताओं की रचना यहीं पर की थी। इन्होंने आशी : वीर बहु 1944, देखती है पीठ 1945 ई., पासव प्रातः शिलांग, दूर्वादल 1947 ई. जैसी कई कविताएँ शिलांग में ही लिखीं। दूर्वादल कविता की पंक्तियों के अंतर्गत शिलांग का परिवेश दिखाई देता है। ऐसे वर्णित करते हैं-

"पार्श्व गिरि का वृक्ष, चीड़ों में डगर चढ़ती उमंगों सी।
बिछी पैरों में नदी ज्यों दरद की रेखा
विहाग - शिशु मौन नीड़ों में।
मैंने आँख पर देखा
दिया मन को दिलासा-पुनः आऊँगा।
(भले ही बरस, दिन- गमगीन युगों के बाद)
क्षितिज ने पलक-सी खोली
तमक कर दामिनी बोली
अरे यायावर! रहेगा याद ? "[10]

प्रो. माधवेन्द्र प्रसाद पाण्डेय द्वारा रचित कविता संग्रह 'खुब्लेईशिबुनचीड़वन' के अंतर्गत पचपन कविताएँ संकलित हैं। जहाँ 'खुब्लेईशिबुनचीड़वन' शीर्षक खासी भाषा का शब्द है। जिसका अर्थ होता है 'बहुत-बहुत धन्यवाद' अर्थात् हमारा मेघालय के चीड़वन के प्रति बहुत-बहुत धन्यवाद। प्रस्तुत काव्य संकलन के अंतर्गत पूर्वोत्तर के प्राकृतिक सौंदर्य का चित्रण किया गया है। जहाँ "पर्वतों, झरनों, नदियों, झीलों एवं संस्कृति की सुंदरता को प्रमुख रूप से महसूस किया जा सकता है। साथ ही यहाँ के लोगों की ईमानदारी, सच्चाई, कोमलता, मिठास अगर मानव मूल्य है तो वे केवल इसी क्षेत्र में देखे जा सकते हैं। " [11] " एक उदाहरण दृष्टव्य है-

"सुंदर देखने का सुख सबसे बड़ा सुख,
इतना कि आपको
बना सकता आदमी,
आदमी बनने से बड़ा
कोई दूसरा सुख नहीं होता,
पल दो पल ही सही,
आदमी होना
कायनात की सबसे खूबसूरत
वादियों में शामिल होना है,
पल दो पल ही सही, हम फूल बन जाते,
फल बन जाते, बीज की अनंत संभावना को थामेवृक्ष बन जाते,
वृक्ष बन जाना सुंदर बनने की पराकाष्ठा है। " [12]

4.6 उपन्यास

हिंदी भाषा में पूर्वोत्तर भारत को आधार बनाकर जितने भी उपन्यास लिखे गये हैं। लगभग वे सभी उपन्यास कमोवेश ऐतिहासिक हैं। पूर्वोत्तर से सम्बन्धित सबसे पहला उपन्यास देवेन्द्र सत्यार्थी का 'ब्रह्मपुत्र' है। गोपाल राय ने अपनी पुस्तक 'हिंदी उपन्यास का इतिहास' में इसकी प्रकाशन तिथि सन् 1956 दर्ज की है। यह दौर हिंदी उपन्यास लेखन में आंचलिक उपन्यास लेखन का दौर था। आंचलिकता के प्रति वैचारिक निष्ठा और लोक जीवन से अनुराग ने इस उपन्यास को अनूठी कृति के रूप में प्रस्तुत किया। इस उपन्यास में कथा का समय भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का समय है और स्थान ब्रह्मपुत्र और माजुली द्वीप तथा उसके सामने का भू-भाग है।

प्राकृतिक आपदाओं की विभीषिकाओंके बावजूद मनुष्य की जिजीविषा के बीच होने वाला संघर्ष ही उपन्यास की मुख्य कथावस्तु है। रचनाकार ने इस संघर्ष कासजीव चित्रण किया है। उपन्यास के कथानुसार स्वतंत्रता की प्राप्ति के बाद दिशांत भूख में नागालैंड की रानी गीडालू आती है। रानी गीडालू स्वतंत्र भारत में पूर्वोत्तर भारत के लोगों के सम्मान की गारंटी को उभारने का कार्य करती है। पूर्वोत्तर पर लिखे हिंदी उपन्यासों में यह उपन्यास वहाँ की जन जीवन की गहरी समझ प्रस्तुत करता है।

इसी क्रम में दूसरा उपन्यास 'जहाँ बाँस फूलते हैं' आया इसके लेखक श्री प्रकाश मिश्र हैं। लेखक नेकई वर्षों तक मिजोरम में खुफ़िया प्रमुख के रूप में कार्य किया है। उसी अनुभव के आधार पर यह उपन्यास लिखा गया है। उपन्यास का कथा समय सन् 1968 का लालडेंगा का प्रसिद्ध विद्रोह है। एक जगह विस्तार से उपन्यासकार ने अपने अनुभव के आधार पर पूर्वोत्तर भारत की समस्या जिसे निहित

स्वार्थ के चलते समस्या बनाया गया- का भांडा-फोड़ किया है। उपन्यास के अंत में रुमाल्खुमा की डायरी मिलती है। जिसमें उसकी आठ कविताएँ होती हैं- मिजोरम के दुर्भाग्य और लहूलुहान यथार्थ पर आँसू बहाती।

अगला तीसरा उपन्यास 'मुक्ति' 1999 ई. में प्रकाशित हुआ। इसके लेखक महेन्द्रनाथ दूबे हैं। इसउपन्यास के जरिये डॉ. दूबे शेष भारत के साथ पूर्वोत्तर भारत के जुड़ाव पर विशेष जोर देते हैं। इसलिए लोकप्रिय गोपीनाथ बरदलाई के निधन और जवाहर लाल नेहरू के देहावसान पर उपन्यास के पात्र गुहाटी और दिल्ली चले जाते हैं। महात्मा गाँधी का निध भी भारी क्षति के साथ उभरकर सामने आता है। चौथा उपन्यास 'उत्तरपूर्व' सन् 2002 में प्रकाशित हुआ।

इसके लेखक लाल बहादुर वर्मा मणिपुर विश्वविद्यालय में इतिहास के प्रोफ़ेसर रहे थे। उन्होंने अपने मणिपुर प्रवास के अनुभवों के आधार पर यह उपन्यास लिखा था। उपन्यास का कथा समय ऐतिहासिक नहीं बल्कि लेखक का समकालिक है। इसलिए लेखक को किसी कथा युक्ति की आवश्यकता नहीं पड़ी। परंतु गौर करने कि बात यह है कि इस उपन्यास की कथा ऐतिहासिक न होने परभी मणिपुर के आधुनिक इतिहास के एक विराट नायक इरावत सिंह की उपस्थिति कथा में बराबर बनी रहती है। मणिपुरी समाज में महिलाओं की प्रभावी उपस्थिति के बावजूद घर का ढाँचा पितृसत्तात्मक परिवार जैसा ही होता है।

उपन्यास 'उदासी' में इसे बखूबी दिखाया गया है। अगला उपन्यास 'रूप तिल्ली की कथा' है। जिसकी चर्चा यहाँ करना जरुरी है। इसका प्रकाशन सन् 2006 में हुआ है। इस उपन्यास की कथा भूमि मेघालय है। इस उपन्यास में मेघालय की रमणीय प्रकृति का सुंदर चित्रण किया गया है। कथा मुख्यतः एक नर बलि की घटना के इर्द-गिर्द घुमती है। इसी क्रम में खासी समुदाय में व्याप्त जादू-टोने का विवरण भी प्रस्तुत करती है। साथ ही अंग्रेजों द्वारा सिलहट से गुवाहाटी तक सड़क बनाने के प्रयासों का प्रतिरोध भी यहाँ दिखाया गया है। जगह-जगह खासी लोक कथाओं और लोक गीतों का हिंदी अनुवाद भी इस उपन्यास को स्थानीय रंग प्रदान करने में पर्याप्त सफल हुआ है।

खासी लोगों का प्रतिरोध फैंटसी के स्तर तक पहुँच जाता है। जब कथा के अंत में रूपतिल्ली की पहाड़ी के शीर्ष पर मौजूद एक पेड़ इस बात की निशानी बन जाती है कि जबतक यह कटेगा नहीं तब तक खासी पराजित नहीं होगा। पेड़ को काटने के क्रम में भी कई मिथकीय घटनाएँ घटित होती दिखाई गयी हैं। अंततः वह पेड़ खासी प्रतिरोध के समापन के प्रतीक के रूप में कट कर गिर जाता है।

4.7 अन्य गद्य विधाएँ

पूर्वोत्तर भारत की अन्यत्र विधाओं के अंतर्गत केवल निबंध और पत्रकारिता के संबंध में ही सूचनाएँ उपलब्ध हैं। हिंदी निबंध विधा में पूर्वोत्तर का संबंध आते ही आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की परंपरा के निबंधकार कुबेरनाथ राय के निबंधों की याद बरबस आ जाती है | उनके लगभग सभी निबंध संग्रहों में पूर्वोत्तरभारत के संदर्भ बिखरे पड़े हैं। कुबेरनाथ राय 1956 ई. में नलबारी (असम) में अंग्रेजी अध्यापक बनकर गये। वहीं उन्होंने अपने जीवन के 29 वर्ष बिताये। अपने प्रसिद्ध निबंध 'यह लो अंजुरी भर कामरूप' में जापारकुची गाँव के बहाने कुबेरनाथ राय ने पूर्वोत्तर भारत की जनजातियों की लोक- संस्कृति पर प्रकाश डाला है। 'यह कथा नदी की' में ब्रह्मपुत्र के बहाने गंगा तिरी निषाद और ब्रह्मपुत्र तट पर बसी किरात जाति की तुलना की गयी है। 'दृष्टि अभिषेक' नामक निबन्ध में असम के उमानंद क्षेत्र की मनोरम नौका यात्रा का वर्णन किया गया है। 'कजरी वन वन में राजहंस' नामक निबंध के अंतर्गत एक पिकनिक का वर्णन किया गया है। जिसमें असम प्रदेश के प्रकृति चित्रण के साथ वहाँ के परिवेश का जीता जागता रूप प्रस्तुत हुआ है।

कुबेरनाथ राय का एक रिपोर्ताज है जिसका नाम 'दृष्टि अभिसार' है। इसका मूल विषय असम, भूटान, अरुणाचल का मिलन बिंदु भैरव कुंड है। राय जी भैरव कुंड में असमिया बंधुओं के साथ वन भोज का आनंद लेने गये थे। इसमें एक जगह असम की महत्वपूर्ण सड़क गोहाई कमल मार्ग या ग्रैंड ट्रंक रोड़ का वर्णन आया है। इनका एक रिपोर्ताज धर्मी निबंध 'यम द्वारे महा घोरे' है। यह यमद्वार वर्तमान असम, बंगाल और भूटान की सीमा पर स्थित है। यह प्रकृति का बड़ा ही मनोहर स्थल है। इनका अगला रिपोर्ताज धर्मी निबंध है 'महाकलांतर।

इसके अंतर्गत काजीरंगा अभ्यारण्य का वर्णन किया गया है। जिसमें नयनाभिराम सौंदर्य तथा जीव जंतु विशेषकर भारतीय एक सींग वाले गैंडे का वर्णन मिलता है। कुबेरनाथ राय के सांस्कृतिक निबंध संग्रह 'फणों का मणिद्वीप' में मणिपुर लोक नृत्य का वर्णन मिलता है | यहाँ मणिपुरी लोक जीवन से प्रभावित लोक नृत्य 'लाईहरौबा' का अनुपम चित्रण है। इनके एक निबंध संग्रह का नाम 'उत्तर कुरु' है। उत्तर कुरु में भारतीय दक्षिण कुरु एवं पांचाल की पितर संस्कृति का संकेत है। इसका संबंध चंद्रा वंशीय आर्यों एवं हिमालय की गंधर्व कीजर जातियों के समन्वय की कथा से है। 'आगम की नाव' और 'देवी का जलयान' कुबेरनाथ राय का एक अन्य निबंध संग्रह है।

आगम की नाव और देवी का जलयान निबंध में आर्यों और आर्येतर संस्कृति का मूल्यांकन किया गया है। इसमें आर्य संस्कृति आगम तथा आर्येतर को निगम कहा गया है। उनका एक अन्य निबंध असमिया वैष्णव धर्म का क्रम विकास है। इसमें असम प्रान्त में वैष्णव धर्म के उद्भव और विकास पर विचार किया गया है। कुबेरनाथ राय ने अपने एक निबंध में असमिया समा में राम के विश्वास पर अपने विचार प्रकट किये हैं।

अगर पूर्वोत्तर में हिंदी पत्रकारिता पर बात की जाए तो इसका भविष्य उज्ज्वल दिखाई देता है। कृपाशंकर चौबे एक जगह लिखते हैं कि "पूर्वोत्तर में सर्वाधिक आठ सौ सैंतीस अखबार असम से निकलते हैं। मणिपुर से 258, त्रिपुरा से 162, सिक्किम से 115, मेघालय से 110, नागालैंड एवं अरुणाचल से 25-25 अखबार निकलते हैं। यदि पूर्वोत्तर भारत में हिंदी पत्रकारिता की बात करें तो असम से हिन्दी में प्रकाशित होने वाला प्रथम पत्र 'प्रकाश' था। वह मासिक था और उसके संपादक विश्वेश्वर शर्मा थे। यह 1919 ई. में डिब्रूगढ़ से निकला " [13]

सन् 1939 में पन्नालाल पुरोहित ने साप्ताहिक पत्र नवजागृति निकाली, 1947 ई. में तिनसुकिया से साप्ताहिक 'अकेला' निकला। जिसके संपादक विश्वनाथ गुप्त थे। उसी साल गोवाहाटी से शंकर लाल भातरा ने साप्ताहिक 'शंखनाद' का प्रकाशन किया। सूर्यवंशी चौधरी ने हिंदी व असमिया भाषा में सन् 1959ई. में 'असम प्रदीप निकाला। 1972 ई. में हिंदी असमिया व नेपाली में 'नव ध्वनि' नामक पत्रिका निकाली। गुवाहाटी से 1976 ई. में बसंत कुमार सिंह ने जय हिंद और 1982 ई. में शम्भू प्रसाद शर्मा ने पाक्षिक रजनीगंधा का प्रकाशन किया। साल 1986 ई. के बापचन्द्र महंत ने त्रैमासिक पत्रिका 'समन्विता' निकाली। हिन्दी, असमिया व राजस्थानी में 1976 ई. में 'असम ज्योतिका' का प्रकाशन हुआ।

यदि दैनिक समाचार पत्रों की बात करें तो असम से प्रकाशित होने वाला प्रथम दैनिक 'लोकमान्य' है जिसका प्रकाशन गुवाहाटी से 18 अप्रैल 1963 ई. को हुआ। उसके बाद जी.एल. अग्रवाल ने 16 मई 1989 ई. को 'पूर्वांचल प्रहरी' निकाला। पूर्वांचलप्रहरी के निकलने

के चौदह दिन बाद ही हिंदी दैनिक 'सैंटीनल' निकलने लगा। 14 सितंबर 1989 ई. को हिन्दी दैनिक 'उत्तरकाल' निकलने लगा। सन् 1991 में पूर्वांचलप्रहरी से हिंदी साप्ताहिक 'सत्य सेतु' भी निकलने लगा।

30 मार्च, 1996 ई. को गुवाहाटी से सांध्य दैनिक 'द ब्लास्ट' निकला। हिंदी दैनिक पूर्वोदय सन् 2005 से गोवाहाटी व जोरहाट से निकल रहा है। कुछ समय बाद वहसिलचर से भी निकलने लगा है। गुवाहाटी से हिन्दी दैनिक 'प्रातः खबर' भी निकलता है। सिक्किम से हिन्दी दैनिक अनुगामिनी निकलता है। अरुणाचल से हिन्दी साप्ताहिक 'अरुण आवाज' निकलता है। पूर्वोत्तर से प्रकाशित हिंदी पत्र-पत्रिकाएँ पूर्वोत्तर के साहित्य को यदा-कदा हिन्दी में अनूदित कर लाती रही हैं। किंतु सुचिंतित तरीके से हिन्दी और पूर्वोत्तर में भाषा सेतु का काम पूर्वोत्तर की जिन पत्रिकाओं ने किया है। उनमें 'उलूपी', 'महीप' और 'समन्वय पूर्वोत्तर' का नाम सबसे आगे है।

पंचम अध्याय

हिंदी कथा-साहित्य में चित्रित पूर्वोत्तर भारत का सामाजिक जीवन

5.1 परिचय

समाज लोगों का वह समूह है, जिसमें लोग एक दूसरे की सहयता करते और लेते हुए जीवन व्यतीत करते हैं। पूर्वोत्तर का समाज कई जाति जनजातियों के मेल से बना है। यहाँ का सामाजिक ढाँचा अन्य जगहों से थोड़ा भिन्न है । यहाँ कुछ ऐसी खुबियाँ हैं जो यहाँ के समाज को विशिष्ट बनाती हैं। इस अध्याय में हम हिंदी कथा - साहित्य में चित्रित पूर्वोत्तर के समाजिक जीवन के विविध पक्षों को विवेचित करने का प्रयास करेंगे। इस अध्याय को दो उप विभागों में विभाजित करके अध्ययन करने का प्रयास किया गया है- हिंदी उपन्यासों में चित्रित पूर्वोत्तर भारत का सामाजिक जीवन और हिंदी कहानियों में चित्रित पूर्वोत्तर भारत का सामाजिक जीवन

5.2 हिंदी उपन्यासों में चित्रित पूर्वोत्तर भारत का सामजिक जीवन

5.2.1 सामासिक समाज

पूर्वोत्तर भारत में विभिन्न जाति जनजातियाँ निवास करती हैं। पूर्वोत्तर के स्थानीय निवासियों के अलावा पूर्वोत्तर के बाहर के लोग भी कई पीढ़ियों से पूर्वोत्तर में रह रहे हैं। इनमें से कुछ हमेशा के लिए बस गये हैं, कुछ अपने मूल स्थान से जुड़े हुए हैं। 'आहुति' में मणिपुर का चित्रण है। मणिपुर में भी यही स्थिति है। यहाँ भी उत्तर भारत के लोग आकर बस गये हैं। वे लोग अधिकतर इकट्ठा रहते हैं। उनकी बस्तियाँ भी हैं। ऐसे लोग अपनी मातृभाषा तो बोलते ही हैं साथ ही मणिपुरी भाषा भी एक मणिपुरी व्यक्ति की तरह ही बोलते हैं। मनोज को यह देख कर बहुत आश्चर्य होता है। बस्ती (बिहारी बस्ती) के लोग आपस में भोजपुरी में बातें करते हैं, पर वे मनिपुरी भाषा के अच्छे जानकार है। स्थानीय निवासियों के साथ वे मनिपुरी में बड़े अधिकार से बातें करते हैं। [8]

पूर्वोत्तर के स्थानीय समाजों में बाहरी लोग मिलते हैं। शहरों में इनकी संख्या और अधिक होती है। उत्तर भारत के हिंदी भाषी लोग भी मणिपुर के शहरों के समाज का एक हिस्सा बन गये हैं। पर मणिपुरी समाज का हिस्सा बन जाने पर भी वे अपनी संस्कृति से ही जुड़े हुए हैं- इन लोगों ने (बिहारी बस्ती के लोगों ने) अपने समाज से अपनी रीति-रिवाज, पूजा-पाठ को नहीं छोड़ा। शादी-ब्याह अभी भी अपनी जातियों में करते हैं। रिश्तों के लिए ये उत्तर पूर्व के अन्य राज्यों में बसे लोगों को ही चुनते हैं बहुत कम लोग अपने मूल स्थान पर जाते हैं। [8]

मणिपुरी समाज में दो ही जातियाँ हैं- एक मूल निवासी क्षत्रिय और दूसरे बाहर से आकर मणिपुरी समाज में सम्मिलित होने वाले ब्राह्मण । मूल निवासी मैतेयी अपने रक्त की शुद्धता की चिंता करते हैं और ब्राह्मणों को अपने में सम्मिलित करने के बाद भी उन्हें बाहरी ही मानते हैं। मैतेयी लड़की के साथ ब्राह्मण युवक के विवाह पर अब विरोध होने लगा है। 'आहुति' में मनोज के मित्र अध्यापक नवीन शर्मा जो मणिपुरी ब्राह्मण है उनके विवाह के वक्त उनकी प्रेमिका के मैतेयी होने के कारण बहुत विरोध और असुविधाओं का सामना करना पड़ा था । 'आहुति' में उपन्यासकार लिखते हैं- मैतेयी, जो अपने को क्षत्रिय मानते हैं, यहाँ के मूल निवासी और अपने कुल की शुद्धता को बनाये रखने में विश्वास करते हैं। ब्राह्मणों को मैतेयी कुनबे में स्वीकार करने के बाद और हिंदू समाज में महत्त्वपूर्ण स्थान देने के बाद भी उन्हें 'आउटसाइडर' मानते हैं । [8]

आगे 'आहुति' में इस बात को और अधिक स्पष्ट करते हुए कहा गया है- शादी के इच्छुक लड़के और लड़की दोनों को मैतेथी होना चाहिए, उनमें कोई अगर ब्राह्मण कुल का है तो वह भी स्वीकार नहीं। [8]

'आहुति' उपन्यास में मनोज अपने गाँव जाता है। वह मणिपुर के समाज की विशेषताएँ अपने साथियों को बताता है। निम्नलिखित पंक्तियों में मणिपुर के समाज के ढाँचे पर अच्छा प्रकाश डाला गया है- मनोज ने बताया किस तरह का वहाँ का समाज है, वहाँ जाति के आधार पर लोग नहीं बँटे हैं। लड़के-लड़कियों में भी कोई अंतर नहीं है। छुआछूत या जातिप्रथा जैसे प्रचलन नहीं है। सभी समान रूप से शिक्षा लेते हैं, उनके रहन-सहन को देखकर अमीर-गरीब का अंतर मालूम नहीं होता। शादी में दहेज की बंदिश नहीं है, लड़का-लड़की अपने मन से शादी करते हैं। [8]

'आहुति' में मणिपुर के विवाह संबंधी प्रसिद्ध प्रथा का उल्लेख कई बार हुआ है। एक जगह पर मनोज के मन में चल रही बात का उल्लेख है- मनिपुर में जातिप्रथा नहीं है। समाज में शादी की प्रथा कितनी अच्छी है, लड़के-लड़कियाँ एक-दूसरे को चुन लेते हैं। हिंदू होने पर भी अपनी परम्परागत प्रणाली को चलाये रखा है। कोई भी लड़का गरीब हो या अमीर, लड़की को लेकर भाग जाता है। दोनों जब तक एक-दूसरे को चाहते हैं, कोई उन्हें रोक नहीं सकता। [8]

यह प्रथा भारत के कई क्षेत्रों की 'ऑनर किलिंग और भागी गई लड़की को कलंक मानने की
मानसिकता को एक चुनौती है। प्राचीन काल में जब मनुष्य सभ्य नहीं हुए थे तब आहार आदि के लिए शिकार आदि करके छोटे-छोटे झुण्डों में एक साथ रहते थे। इन झुण्डों को कबीला कहा जाता है। इन कबीलों में भी आज के राष्ट्रों की तरह एक प्रमुख होता था, जो सरदार कहलाता था। 'जंगली फूल' में तानी कबीला खेती करता है पर धान की खेती नहीं। वे खेती करने पर भी झुण्ड में ही रहते थे। कबीलाई जीवन अधिकतर खानाबदोश जीवन होता है, जिसमें कुछ-कुछ समय बाद कबीला एक जगह से दूसरी जगह स्थानांतरित होता रहता है। इतिहास यह बताता है कि कबीले हमेशा एक जगह रहने की इच्छा रखते थे। खेती से यह सम्भव हो सका। तानी और दोलियांग भी इसी प्रकार एक जगह अपने कबीले को बसा कर एक स्थिर समाज की स्थापना करना चाहते हैं- दोनों का सपना था एक विश्राममय समाज का निर्माण करना। खानाबदोशी जीवन से अलग एक ऐसा स्वर्ग हो, जहाँ हमेशा के लिए ठहर जाएँ। लहलहाते खेत हो। नाचते-गाते लोग हो। सारे लोग हर प्रकार के भय से मुक्त हो।[11]

अक्सर जैसा कि पहले होता था कोई राजा किसी दूसरे राजा की सहायता के बदले अपनी पुत्री उस राजा को देता था, 'जंगली फूल' में भी ऐसा ही प्रसंग आया है। खूंखार ताप नामक भारी-भरकम बदसूरत व्यक्ति को मारने के पुरस्कार स्वरूप मैकार- मैरांग कबीले के सरदार ने अपनी पुत्री आसीन का विवाह तानी से करा दिया। [11]

'मुक्तावती' में मणिपुरी समाज की सभी को अपने में समा लेने की विशेषता का उल्लेख उपन्यास का नायक चंद्रावत करता है- यही तो विशेषता है मणिपुरी समाज की, कि वह किसी भी व्यक्ति को सदा के लिए अपने में घुला मिला लेता है बशर्ते कि वह व्यक्ति भी इसमें हृदय से घुल-मिल जाय। मणिपुर का सारा हिंदू समाज आखिर अनेक जातियों और रक्तों के सम्मिश्रण का ही तो परिणाम है? [3]

राजतंत्र में राजा सर्वस्व होता है। उसको सभी सुविधाएँ सुलभ होती हैं। उसे अपनी जीविका के लिए अलग से कुछ करने की आवश्यकता नहीं होती। परंतु खासी समाज का ढाँचा कुछ इस प्रकार का था कि राजा-रानी को भी अपनी जीविका के लिए खेतों में काम करना पड़ता था। 'रूपतिल्ली की कथा' में समतावादी खासी समाज का चित्र खींचा गया है- खसिया समाज में इतनी समता बनी हुई थी कि राजा-रानी को भी अपने बसर के लिए अपने खेतों पर अपने हाथों से काम करना पड़ता था। उसमें जो दूसरे लोग सहयोग करते थे, वे नौकर या मजदूर की हैसियत से नहीं, सहयोगी की हैसियत से उसमें अपेक्षा रहती थी कि सियेम भी मौका आने पर उनके साथ सहयोग करेगा। चूँकि राजा सबके खेतों में जा-जाकर गुड़ाई, निराई, बुआई, कटाई नहीं कर सकता था अकेले होने के कारण शारीरिक रूप से सम्भव नहीं था इसलिए सबके सहयोग की वापसी वह गाँव की रक्षा के रूप में करता था, वह भी नेतृत्व देकर, अन्यथा रक्षा तो सभी अपनी कौम की सामूहिक रूप से करते थे। [9]

मिजो समाज अपेक्षाकृत तौर पर संबंधों को खुली छूट देने वाला समाज है। 'जहाँ बाँस फूलते हैं' में मिजो समाज की इस विशेषता को रेखांकित किया गया है। झा कामी के साथ जोर-जबरदस्ती करते वक्त चौबीस साल की लड़की का एकदम क्वॉरी रहना देखकर सोचता है- पसीने से लदफद झा की भी आँखें आश्चर्य से खुली रह गई कि कोई चौबीस साल की लड़की भला कैसे एकदम क्वॉरी हो सकती है, वह भी लुशाइयों के बेरोक-टोक समाज में। [9]

ऊपर की पंक्तियों में आए 'लुशाइयों के बेरोक-टोक समाज' वाक्यांश से मिजो समाज के खुलेपन का प्रमाण मिलता है। पूर्वोत्तर के कई जनजातीय समाज में युवक-युवतियों के रहने के लिए कुछ सामूहिक घर बना देने की व्यवस्था है। मिजो समाज में युवकों के लिए बानाये गये ऐसे घरों को जालबुक कहते हैं। 'जहाँ बाँस फूलते हैं में एक जालबुक का उल्लेख आता है- दूसरी तरफ वहाँ जालबुक के सामने कुछ किशोर एक अलाव को घेर कर बैठे कुछ छान घोंट रहे थे। [9]

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। समाज में रहते हुए लोग एक दूसरे की सहायता से जीवन व्यतीत करते हैं। एक दूसरे के सुख-दुःख में साथ रहना साहचर्य के लिए आवश्यक है। किसी काम में एक दूसरे की मदद करना जीवन को सुगम बना देता है। समाज एक साथ रहने वाले लोगों का समूह है। यदि हम हर कार्य खुद करना चाहते, किसी की मदद लेना नहीं चाहते तो हमारा जीवन बड़ा कठिन होता या ऐसा होने की भी पूरी सम्भावना है कि हम जी ही न पाते। समाज के अलग-अलग लोग अलग-अलग कार्य करते हैं, इस प्रकार समाज के सारे आवश्यक काम हो जाते हैं। इस प्रकार हमारा जीवन सरल हो जाता है। साहचर्य पूर्वोत्तर के जनजीवन की एक अन्यतम विशेषता है। आलोच्य उपन्यासों में पूर्वोत्तर के साहचर्यपूर्ण जीवन का चित्रण मिलता है।

बड़े-बड़े शहरों में बिना कीमत के एक दूसरे के काम में सहायता करना कम देखा जाता है। पर हमारे गाँव आज भी साहचर्य की भावना से परिचालित हैं। 'मिनाम' उपन्यास में मोदी गाँव के लोग एक दूसरे के काम में सहायता करते हुए साहचर्यपूर्ण सामूहिक जीवन का दृष्टांत प्रस्तुत करते हैं। उपन्यासकार ने उल्लेख किया है- गाँव की महिलाओं में एक बहुत ही अच्छी बात यह देखी गई कि वे एक-दूसरे की काफी मदद करती हैं। 'रिगे एनाम' के तहत वे सब मिलकर आज एक के खेत में तो कल दूसरे के खेत में काम करती हैं। इस प्रकार वे हँसी-मजाक भी करती रहती है और खेती का कार्य आराम से हो जाता है। [13]

एक जगह रहने वाले लोगों में साहचर्य पनपता ही है। वे बुरे वक्त में एक-दूसरे के काम भी आते हैं। 'मुक्तावती' उपन्यास में मुक्तावती जब चंद्रावत के त्यागपूर्ण परोपकारी कार्यों से प्रभावित होकर उसके घर चली आती है तब सुबह मुक्तावती के पिता चंद्रमणि सिंह पुलिस के साथ मुक्तावती को वापस ले आने के लिए पहुँच जाते हैं। मुक्तावती जाने से इनकार करती है तो उसे हथकड़ियों में कैद करके ले चलने का आदेश चंद्रमणि सिंह देता है। तब चंद्रावत की माँ अपनी बहू को इस प्रकार अपमानित होने से बचाने के लिए रास्ते में बाधा बनकर खड़ी हो जाती है। चंद्रावत की माँ के साथ-साथ चंद्रावत के मुहल्ले की युवतियाँ भी बाधा डालने का प्रयास करती हैं। राजकुमार चंद्रमणि सिंह सभी को गोलियों से भुन देने का डर दिखाता है। तब मुहल्ले के सारे लोग इन लोगों की सहायता के लिए निकल आते हैं। उस परिस्थिति का वर्णन उपन्यासकार ने निम्नलिखित ढंग से किया है- इस बीच मुहल्ले के बहुत सारे लोग कौतूहलवश ही वहाँ एकत्र हो चुके थे। लेकिन राजकुमार चंद्रमणि सिंह के अपमान भरे लहजे ने अब उन्हें भी उत्तेजित कर दिया। मइतेइयों की संख्या वहाँ काफी थी। कुछ जातिवाद के स्वाभिमान ने, कुछ मुहल्ले के स्वाभिमान ने और कुछ चंद्रावत और चंद्रावत की माँ के व्यक्तित्व के सम्मान ने मिल कर उन्हें भी क्रोधोन्मत बना दिया। उस भीड़ में से क्रोध और उत्तेजना से भरे तरह-तरह के वाक्य निकलने लग पड़े। 'पकड़ लो सालो को मार-मार कर चटनी बना दो !' 'राजकुमारपन दिखाने आया है हरामी मारो दस जूते !' [3]

'राह और रोहे' में जीवन अपने एक सहकर्मी राष्ट्रभाषा प्रचारक के टी.वी. के इलाज के लिये पैसा इकट्ठा करने के लिये एक नाटक खेलने की योजना बनाता है- सर्वप्रथम तो मैं एक हिंदी नाटक की तैयारी करना चाहता हूँ, जिसका अभिनय इन्हीं छुट्टियों में माघ बिहु के अवसर पर होना चाहिये। घर-घर में नाटक के टिकट बेच कर कुछ रुपये उठाऊँगा, जिससे मेरे एक क्षय रोग से पीड़ित प्रचारक भाई का अधूरा इलाज पूरा हो सके। [28]

5.2.2 स्त्री की स्वतंत्रता एवं शोषण

पूर्वोत्तर में सामाजिक व्यवस्था कुछ ऐसी है कि स्त्रियों का यहाँ पर आमतौर पर बहुत सम्मान और रूतबा होता है। विवाह के मामले में भी स्त्रियाँ यहाँ अपेक्षाकृत रूप में अधिक स्वतंत्र होती हैं। यहाँ स्त्रियों के पास अपना वर चुनने की अपेक्षाकृत अधिक स्वतंत्रता होती है। 'आहुति' में मणिपुरी लड़कियों की स्वतंत्रता और विवाह के समय इच्छित वर से विवाह के अधिकार से उपन्यास का नायक बहुत प्रभावित होता है। वह अपने प्रदेश में अपनी जाति के विवाह में लड़कियों की परतंत्रता से मणिपुर की इस मामले में स्त्रियों की स्वतंत्रता की तुलना करता है। मनोज को मणिपुर की लड़कियों के विवाह के मामले में इतनी स्वतंत्रता कैसी लगती है इस पर उपन्यासकार ने टिप्पणी की है- मणिपुर में शादी में लड़कियों को अपने मनोनुकूल लड़का चुनने की परम्परा से मनोज बहुत प्रभावित हुआ। [8]

मणिपुर में शादी के लिए अपने मन पसंद लड़के के साथ भाग जाने की प्रथा भी मणिपुर में स्त्रियों की स्वतंत्रता का प्रमाण है। प्रथा यह सूचित करता है कि मणिपुर में लड़की को अपना मन पसंद वर चुनने की स्वतंत्रता है। पर इस प्रथा का एक दोष भी है। इसका उल्लेख उपन्यासकार ने निम्न प्रकार से किया है- लड़का-लड़की के भाग जाने के बाद शादी होनी ही है, अगर किसी वजह से शादी न हो पाए तो उस लड़की की किसी ढंग से शादी नहीं हो पाती। इसी तरह अगर जबरदस्ती किसी लड़की का अपहरण हो गया तो उसकी नियति है कि उस व्यक्ति को ही वह अपना पति स्वीकार कर ले, अन्यथा उसका समाज में कहीं कोई स्थान नहीं है। [8]

'मुक्तावती' में मणिपुर को नारी प्रधान देश कहा गया है। मणिपुर में 'लक्ष्मी बाजार' और 'ईमा बाजार' हैं जो पूरी तरह से स्त्रियाँ ही चलाती हैं। यह मणिपुर में स्त्री की स्वतंत्रता और रूतबे का प्रमाण है। 'मुक्तावती' में चंद्रावत शैलेंद्र से कहता है- मणिपुर नारी प्रधान देश है भइया । यहाँ की नारी शक्ति पुरुषों से पीछे रह कर हार स्वीकार नहीं कर सकती। [3]

स्वतंत्रता पूर्व से ही मणिपुर में विधवा समस्या पर्दा प्रथा नहीं था । स्त्रियों को तलाक देने का अधिकार था और पुनर्विवाह का भी नृत्य संगीत का पेशा अपना कर भी यहाँ की स्त्रियाँ अकुलीन या वेश्या नहीं कहलाती थी, यहाँ स्त्री को इतनी स्वतंत्रता है। 'मुक्तावती' में उपन्यासकार ने कहा है- मणिपुर की महिलाएँ भारत के अन्य प्रांतों की महिलाओं से सामाजिक रूप से काफी आगे दीखीं। भारत के अन्य प्रांतों की तरह यहाँ की ऊँची जाति की महिलाएँ बलात् वैधव्य की क्रूरता की कड़ियों में जकड़ी नहीं जाती। उन्हें तलाक तक देने का अधिकार है। पुनर्विवाह का भी। पर्दे की पाखण्डमय मर्यादा भी नहीं है। और जीविका के लिए नृत्य-संगीत का पेशा का भी पर्दे की पाखण्डमय मर्यादा भी नहीं है। और जीविका के लिए नृत्य-संगीत का पेशा अपना कर भी वे समाज द्वारा अकुलीनता या वेश्यात्व के कलंक से लांछित नहीं की जाती। और इन उन्मुक्तताओं के रहते भी उनके आचार में असंयम नहीं । अमर्यादा नहीं । [3]

स्त्री का शोषणा सदियों से चला आ रहा है। स्त्री को शोषण के इस नर्क से निकालना है तो स्त्रियों को शिक्षा द्वारा सबल तो बनना ही होगा । साथ ही समाज की मानसिकता को बदलने की आवश्यकता है । स्त्रियों के शोषण में प्रमुख है उनका यौन शोषण किसी गाँव, कस्बे या शहर में अपनी आर्थिक शक्ति का फायदा उठाकर स्त्रियों का निरंतर यौन शोषण करने के कई उदाहरण साहित्य और समाज में देखने-सुनने को मिल जाते हैं । 'जहाँ बाँस फूलते हैं में उल्लेख आता है कि साइलो ने न जाने कितनी विवाहिताओं, कुमारियों के साथ संबंध बनाये हैं। यह अपने रसूख के बल पर किसी का व्यभिचार करने का उदाहरण है-

साइलो ने हमारी जाने कितनी विवाहिताओं, कुमारियों को गाभिन किया तो पंचायत नहीं बैठी और इसकी बीवी गाभिन हो गई तो पंचायत बैठी है। [9]

'जहाँ बॉस फूलते हैं' में जोरमी का प्रेमी झा गर्भवती जोरमी के गर्भ के संतान को अपना मानने से इंकार कर देता है, जबकि उसका जोरमी के साथ यौन संबंध था। झा के मुकर जाने के कारण ही जोरमी को दयनीय जीवन जीना पड़ता है। गाँव के लोग कहते भी हैं कि अवैध बच्चे को वे ईश्वर का बच्चा मानकर पालते हैं। केवल झा को स्वीकार करना है कि बच्चा उसका है। अन्यथा जोरमी को गाँव से बाहर निकाल दिया जायेगा। पर झा नहीं मानता। इसके बाद जोरमी का जीवन बहुत दुःखदायी हो जाता है। सभी उसे चरित्रहीन, वेश्या आदि कहते हैं। वह साइकिया से दुःखी होकर कहती है- सभी मुझे रंडी कहते हैं। [9]

कामी जानती थी कि भले ही मिजो स्त्रियों का जीवन कठिन होता है, पर वाई (गैर मिजो को मिजो वाई कहते हैं) अपनी पत्नियों से ही यौन संबंध बानने को जायज ठहरा कर भी गुपचुप ऐसे पापाचार करते हैं जिसे सुनकर मिजो दहल जाए- वह बाइयों के लैंगिक संबंध के मानदण्डों को जानती थी। शादी के बाद ही अपनी पत्नी से सेक्स का मुखौटा लगाने वाले ये दगाबाज जो-जो करते हैं उसे सुनकर मिजो दहल जाए। उसने देखा है सिलचर से जम्मू और रामेश्वरम तक सड़कों पर अवैध बच्चों की लाशें, हर शहर में वेश्याओं की जमात और बलात्कार अपहरण के मुकदमे [9]

'जंगली फूल' में भी स्त्री के शोषण का वर्णन आता है। नीचे जो उद्धरण दिया जा रहा है वह उपन्यासकार की अपनी टिप्पणी है, पात्रों के संवाद या सोच नहीं है। यदि उपन्यासकार पात्रों के संवाद में या सोच के रूप में यह बात लिखता तो इसमें यह अस्वाभाविकता आ जाती कि प्रागैतिहासिक समाज में कोई पात्र आधुनिक व्यक्ति की तरह स्त्री शोषण की बात कैसे सोच सकता है- किसी समय उसकी भी एक पत्नी हुआ करती थी। सुंदर और जवान मेहनती और मुँहफट । बच्चे नहीं हुए। लोग कहते थे वह बाँझ है। दिन रात मेहनत करती लेकिन पति के प्रेम की अधिकारी कभी नहीं रही। रहती भी कैसे? दासी थी। युद्ध से जीतकर लाई गई थी। उसके शरीर का काम सिर्फ पति के शारीरिक प्यास को ही बुझाने का होता था। [11]

स्त्री को वस्तु मानने की मानसिकता और उसे धन के बल पर अपने अधिकार में करने की रीति 'जंगली फूल' में भी चित्रित है। सिमांग जिस जगह की थी उस जगह के बारे में टिप्पणी करते हुए उपन्यासकार ने कहा है- यहाँ भी विवाह में औरतों को खरीदे जाने का रिवाज है। [11]

इस उपन्यास में उल्लेख है कि जो लड़की विवाह के लिए खरीदी नहीं जाती उसे लोगों के कटुवचन सुनने पड़ते है। उनका कोई सम्मान नहीं होता- जो बिकी या खरीदी नहीं जाती थी, उनकी कीमत ही नहीं होती थी। उनको कई तरह के ताने सुनने पड़ते थे। [11]

पुत्र और पुत्री में भेदभाव करना हम सदियों से देखते आ रहे हैं। प्राचीन काल में पुत्री का भी उतना ही महत्त्व था जितना पुत्र का । पर बाद में यह स्थिति बदली । 'जंगली फूल' के उपन्यासकार के प्रागैतिहासिक काल की कथा में इस स्थिति का चित्रण बहुत हद तक आधुनिक युगीन मानसिकता का आरोपण है- पहली संतान बेटी हुई...स्वागत का वह आनंदित चेहरा उनका नहीं था जो एक पिता का होता है। [11]

आगे उपन्यासकार ने लिखा है- दूसरी संतान हुई एक पुत्र । पति ने उसके स्वागत में उत्सव का आयोजन किया था। [11]

'जंगली फूल' में विधवाओं की स्थिति पर भी लिखा गया है- गाँव के मर्द कहते हैं- 'विधवा औरतों पर दया करते हुए सम्भोग करना चाहिए। अहसान ही करना होता है। फिर भी ये औरतें बड़ी नौटंकीबाज होती है मना करती फिरती है कमीनी ।' हर मर्द उस पर अपना हक मानकर उसके साथ छेड़छाड़ करने लगते हैं। बाकी औरतें अपने लिए उसे खतरा मानकर उससे किनारा कर लेती हैं। इस प्रकार की परेशानियों से बचने के लिए औरतों को किसी मर्द की दूसरी, तीसरी या फिर चौथी बीवी बन जाना मंजूर कर ही लेना होता है। कम से कम पानी तो कहलाओ किसी की और सुरक्षित रहो। मर्द कहते हैं- इस प्रकार किसी भी औरत को वेश्यावृत्ति करने से वे बचा लेते हैं । वे समाज के रक्षक होते हैं। [11]

'मिनाम' में यामी को उसकी माँ महिलाओं के मासिक धर्म के समय की अपवित्रता की समस्या के संबंध में बताती है कि कैसे मासिक धर्म के दिनों में पुरुषों के द्वारा इस्तेमाल की गई चीजों को छूने से असुविधाएँ उत्पन्न होती है- आने ने यह भी बताया कि मासिक धर्म होने के बाद से लड़कियों का इस कोब (सीडी) से उठना निषेध है। आमतौर पर घर के मर्द नदी और जंगलों में शिकार खेलने जाते हैं, अगर लड़की मासिक धर्म के बाद या मासिक धर्म के दौरान मर्दोंवाला स्थान या चीजों का प्रयोग करते हैं वह उन मर्दों को 'गम्मा' हो जाता है

अर्थात् वे शिकार पाने में नाकामयाब हो जाते हैं। यही नहीं वे 'केबा' यानी किसी मसले के लिए किए गए सभा आदि में अपना पक्ष नहीं रख पाते या बात नहीं कर पाते हैं। [13]

इस प्रकार की सोच स्त्री के शोषण का ही छद्म हथियार है। यह पुरुष का समाज पर वर्चस्व बना कर रखने का तरीका है। भारतीय समाज में स्त्रियों के मासिक-धर्म के समय उन्हें अपवित्र बताकर बहुत सी पाबंदियाँ लगा दी जाती हैं। उन दिनों स्त्रियों को मंदिर में या ऐसी ही पवित्र माने जाने वाले स्थलों में जाने की मनाही होती है। अब यह कितना उचित है या अनुचित इस पर बहसें की जा सकती है। स्त्रियाँ खुद भी स्वेच्छा से इन पाबंदियों को मानती हैं। ऐसा नहीं है कि ऐसी सोच हर स्त्री की हो। इसके अपवाद भी है। पूर्वोत्तर की स्त्रियाँ और पूर्वोत्तर के समाज अपेक्षाकृत तौर पर ज्यादा उन्मुक्त हैं। फिर भी इस प्रकार की समस्या यहाँ भी है। भारतीय समाज में स्त्री पुरुष के बाद आती है। समाज का ढाँचा ही ऐसा है कि हर मामले में स्त्री का स्थान बाद में आता है। त्याग, जिम्मेदारी आदि में स्त्री को आगे कर दिया जाता है। पर जैसे ही सुखभोग या अधिकार की बात आती है स्त्री को पिछे धकेल दिया जाता है। स्त्री शारीरिक रूप से कमजोर है और पुरुष इसका फायदा उठाता है। स्त्री को शिक्षा से वंचित रखकर सड़ी-गली परम्पराओं का पालन कराकर स्त्रियों की मानसिकता ऐसी बना दी जाती है कि स्त्री अपने को द्वितीय स्थान की मानने लगती है। पुरुष शारीरिक रूप से बलवान है। पर स्त्री को ही हर प्रकार की मेहनत करनी पड़ती है। आमतौर पर स्त्री को न तो पैतृक सम्पत्ति से कुछ मिलता है न पति की सम्पत्ति से ही। मायके में वह पिता और भाइयों के नीचे रहती है और ससुराल में पति और बेटों के नीचे।

'मिनाम' उपन्यास में भारतीय समाज में प्रचलित इस परम्परा का यथार्थ चित्रण मिलता है। इस उपन्यास की यामी स्त्री की इसी अवस्था को प्रत्यक्ष करती है- यहाँ रहते कुछ दिन ही हुए पर यामी ने देखा कि यहाँ स्त्रियाँ बस भोग की वस्तु हैं। वे घर सम्भालने वाली, बच्चे पैदा करने वाली, खेतों में काम करने वाली, जंगल से लकड़ियाँ इकट्ठे करने वाली के अलावा और कुछ नहीं थी। पुरुष प्रधान समाज, घर का मुखिया भी मर्द, औरत को घर के किसी भी महत्त्वपूर्ण कार्य में अपना निर्णय देने का हक नहीं है। पैतृक सम्पत्ति में उसका कोई अधिकार भी नहीं है। फिर भी वे खुश हैं। उन्हें अपने अधिकारों का पता ही नहीं। या यूँ कहे, उन्हें कभी जरूरत ही नहीं महसूस हुई। वे पहले से ही मान बैठी हैं। कि मर्द हर तरह से औरत से ताकतवर है और औरत कमजोर पति जो कहता है वह पत्थर की लकीर [13]

इस उपन्यास में मिनाम अपनी डायरी यापी को जब देती है तब वह स्त्री के शोषण की बात करती है। वह नेताओं द्वारा स्त्री की प्रगति के लिए भाषण देने की बात करती है। साथ में वह कहती है कि स्त्री को पुरुष कभी उसका प्राप्य अधिकार नहीं देता। कदम से कदम मिलाकर चलने पर भी पुरुष प्रधान समाज में स्त्री निर्बलता, लाचारी के साथ जीती है। मिनाम कहती है- आज समाज के हर तबके के लोग नारी सम्मान, नारी सशक्तीकरण आदि के बारे में बड़ी-बड़ी बातें कर रहे हैं। नेतागण अपने राजनैतिक फायदे के लिए इसी मुद्दे पर जोर-शोर से भाषण- बाजी करतें हैं। पर आज भी औरत शोषण का शिकार हो रही है। यह सत्य कभी नहीं बदलेगा, जब तक पूरा समाज, पूरी तरह शिक्षित न हो जाये मर्द औरत के हक की बात करता है पर, वही मर्द अपनी बीवी को वह हक नहीं दे पाता. कारण हम औरतों को अपने हक का पता ही नहीं है। आज भी समाज के कई क्षेत्रों में नारी पर शोषण हो रहा है। वक्त बदल गया है, आज दुनिया में स्त्री और पुरुष दोनों कदम से कदम मिलाकर चल रहे हैं, फिर भी हम आज भी कहीं न कहीं इस पुरुष प्रधान समाज में एक लाचार, निर्बल अबला नारी हैं। [13]

अगर स्त्री साहसी है, अपने हक के लिए लड़ती है तो समाज उससे डरता है। ऐसी हिम्मती स्त्री को समाज के लिए हानिकारक माना जाता है। मिनाम की माँ जमीन को लेकर किये केस को जीतने की पूरी कोशिश करती है। वह हार मानने का नाम नहीं लेती। उनकी

जमीने बिक जाती है, पर मिनाम की माँ अपने पक्ष को सही साबित करने को लड़ती रहती है। इस पर समाज कहता है- एक औरत में इतनी हिम्मत, ऐसी औरत समाज के लिए ठीक नहीं है। [13]

एक अकेली स्त्री मानो समाज के मर्दों के लिए आसान शिकार है। अगर स्त्री पुरुष के साथ नहीं है तो उस पर हर पुरुष अधिकार कर सकता है। मिनाम का रिश्ते का चाचा रात को ग्यारह बजे मैसेज भेजता है कि उसके पास रात गुजारने को जगह नहीं है। वह अकेली मिनाम के साथ रात गुजारना चाहता है। इस पर मिनाम लाचारी में कहती है- इस बात पर हँसु, रोऊँ या गुस्सा करूँ। [13]

स्त्री से सम्बंधित ऐसे नियम और मानसिकता है समाज में कि स्त्री को फूंक-फूंक कर कदम रखने पड़ते हैं। यदि उसके साथ कोई भी ऊँच-नीच हो जाती है तो उसका जीवन बहुत मुश्किल हो जाता है। स्त्री का पुलिस की हिरासत में जाना भी उसके लिए एक ऐसा ही कलंक है जिसके बाद उसके जीवन में कुछ भी आसान नहीं रह जाता। 'ब्रह्मपुत्र' उपन्यास में देवकांत को फरार कराने के इल्जाम में धर्मानंदी और उसकी बेटी आरती को पुलिस गिरफ्तार कर लेती है। कुछ दिन बाद दोनों छूट आते हैं। पाँच दिन थाने में रह आने के कारण अब आरती का विवाह कही नहीं होगा। यह कलंक धुल नहीं सकता। उपन्यासकार कहते हैं- अब यह कलंक जीवन पर्यंत नहीं धुल सकता था। कोई-कोई तो यहाँ तक कहता सुना गया था अब आरती का विवाह भी नहीं हो सकेगा, गंदा अंडा कौन लेगा? [25]

स्त्री को अपने से नीचा मानना पुरुषों की मानसिकता है। 'मुक्तावती' उपन्यास में मुक्तावती का घर छोड़कर चंद्रावत के घर चले जाने का जब मुक्तावती की माँ समर्थन करती है, तब उसके पिता मुक्तावती की माँ को घर से निकाल देने को उद्यत होता है। अगर मुक्तावती को बालों से पकड़ कर वह महाराज के सामने पेश करती है और खुद भी धर्मशास्त्र के विधान के अनुसार प्रायश्चित करती है तभी घर में रह सकती है । मुक्तावती का पिता कहता है- इस घर में रहना चाहती है, तो जा अभी इसी दम अपनी पापिन बेटी के बाल पकड़े ले जाकर महाराज साहेब के सामने हाजिर कर उनसे क्षमा की भीख माँग और तब दोनों माँ- बेटी धर्मशास्त्र के विधान के अनुसार प्रायश्चित करके इस घर में कदम रखो। समझी। [3]

इसके उत्तर में मुक्तावती की माँ जो कहती है उसमें स्त्री का स्वाभिमान और अधिकार के प्रति सचेतता झलकती है। मुक्तावती की माँ कहती- छी, निर्लज । घर से निकलेगी वो जो रखेल बन कर आई होगी। मैं तो धर्म-पत्नी बन कर आई हूँ, धर्म-पत्नी बन कर। [3]

'जहाँ बाँस फूलते हैं' में रौपारी नामक एक पात्र है जो विधवा है। उसका सम्बंध एक दक्षिण भारतीय व्यक्ति से होता है। वे खुल्लम-खुल्ला मिलने लगते हैं जिसको मिजो समाज अच्छी नजर से नहीं देखता । रौपारी का कृष्णन के साथ सम्बंध पर अक्सर लोग व्यंग्य करते हैं। किसी दूसरे समाज में ऐसे आचरण पर कुहराम मच गया होता। पर मिजो समाज में स्वतंत्रता अधिक है। इसीलिए निम्नलिखित तरह से व्यंग्य करके ही लोग शांत रह जाते हैं। राह चलता कोई रौपारी से कहता है- आज की महफिल में महुए की शराब पेश करना । रौपारी कुढ़ गई। वह खूब जानती थी कि पू कृष्णन् के साथ सम्बंध जोड़ने का यह उनका खास व्यंग्य है- कृष्णन् को महुए की शराब विशेष रूप से पसंद है। [9]

विवाह से पहले गर्भवती हो जाने पर अगर और कोई रास्ता न हो तो युवती को गर्भपात का रास्ता चुनना पड़ता है। पर एक माँ अपने गर्भस्थ संतान की हत्या करने को इतनी आसानी से तैयार नहीं होती । अगर वह ऐसा करती भी है तो मानसिक उथल-पुथल झेलने के

बाद। पर कभी-कभी पति, प्रेमी या माता- पिता द्वारा भी गर्भपात कराने के लिए युवती बाध्य की जाती है। गर्भपात के दौरान युवती की मृत्यु भी हो सकती है और होती भी है। 'जहाँ बाँस फूलते हैं' में दोला अपनी बेटी पुई का गर्भपात कराता है क्योंकि वह जोवा जैसे आवारे के साथ अपनी बेटी का रिश्ता नहीं करना चाहता। पर इसी प्रयास में रक्तस्राव बंद न होने पर पुई की मृत्यु हो जाती है। उपन्यास में कहा गया है- और वह समयानुसार माँसपिंड बन उसके उदर में एक आकार ले रहा था। उसे ही उसका बाप लालदोला उसके जिस्म से निकाल फेंकना चाहता था। जोवा को खबर मिली कि पुई अस्पताल से लौट आई है। उसके बदन से निरंतर खून बह रहा है। शायद वह न बचे। [9]

परम्परावादी लोगों का मानना है कि विधवाओं को कठोर नियमों के बीच जीवन गुजारना चाहिए। उन्हें न सजने-सँवरने का हक है न अच्छा खाने-पीने का। 'मुक्ति' में पंडित सुलोचन प्रसाद मिश्र कहता है- आखिर एक नौकरानी ही तो है, सो भी विधवा ज्यादा अच्छे सफेद कपड़े पहनेगी तो समाज की आँखों में चुभेगा और उसकी भी फजीहत होगी। आप तो बस मोटे थान की बिना किनारी की साड़ी ही दे दें और पैसों के लिए बही में नाम चढ़ा दें। [6]

'मुक्ति' में एक प्रसंग आता है जिसमें एक नादान बालिका की जिंदगी तबाह होने का वर्णन आता है। एक साँड़ों पर छापी लगाने और उनके अंडकोष कुटने वाला मुन्नन खाँ नामक व्यक्ति एक नाबालिग बच्ची की कलाई पर गोदना गोदवा देता है- 'मुन्नन खाँ की बीवी'। अब उससे कौन शादी करेगा। कियांग्माइची इसका बदला लेने के लिए मुन्नन खाँ के चूतड़ों पर छापी से दाग कर 'नामर्द' यह शब्द छाप देती है। फिर इसका कारण बताते हुए कहती है- देखिए इस नादान बच्ची के हाथ पर इसने जबरदस्ती गोदना गोदवा दिया है- 'मुन्नन खाँ की बीवी'। यह बच्ची नदी पार कर इधर चाय बागान के स्कूल में पढ़ने जाती थी। इस रास्ते से आते-जाते यह उस पर बुरी नजर रखे हुए था। एक दिन जब गोदना गोदने वालियों को पा गया, तो उन्हें पैसे खिलाकर इसने हाथ में यह गुदवा दिया। इसका नामर्द बाप रो-रो कर चुप रह गया। मगर इसकी माँ ने जब लोगों से गिड़गिड़ा- गिड़गिड़ा कर न्याय की भीख माँगी, तो आप लोगों की पुरुषों की पंचायत ने मुन्नन पर दस रुपए का जुर्माना कर उसे छोड़ दिया। मैं आज दस की जगह बीस रुपए जुर्माना भर चुकी हूँ। एक अबोध बालिका की खुली कलाई पर छापी मारकर उसकी जिंदगी बरबाद कर देने का दण्ड अगर दस रुपए है, तो इस अधेड़ बदमाश की ऐसी जगह पर जो बराबर ढँकी रहती है छापी लगाने का दण्ड आपकी ही विचार-सभा की व्यवस्था के अनुसार बीस रुपए से ज्यादा नहीं हो सकता [6]

दुनिया के सारे धर्म स्त्री के खिलाफ हैं। वे स्त्री पर अपना कब्जा बनाए रखना चाहते हैं। इसलिए धर्मशास्त्र कहते हैं स्त्री नरक का द्वार है, स्त्री महाठगिनी है। परम्परावादी धारणा है कि जब स्त्री कुमारी हो तब उसके शरीर की रक्षा पिता करे। युवती हो तब पति और वृद्धा हो तब पुत्र। यह स्त्री को पुरुष के नीचे रखने का और उसकी स्वतंत्रता छीनने का षड्यंत्र है। 'मुक्ति' में कियांग्माइची की माँ कहती है- क्रिश्चियन धर्म की बात क्या करें? जिस धर्म ने सारी दुनिया में यही शोर मचा रखा है कि उसके संस्थापक क्राइस्ट का जन्म एक अविवाहित कुमारी कन्या के गर्भ से हुआ। वह स्त्री की कितनी इज्जत फैला रहा है यह तो कोई भी सोच सकता है। [6]

स्त्री को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक करना है तो उसको शिक्षित बनाना होगा। एक घर को सही से चलाने में स्त्री का ही हाथ होता है। अगर स्त्री शिक्षित है तो इस काम में उसकी कुशलता बढ़ जाती है। इतना ही नहीं एक समाज को भी अगर बेहतर बनाना है तो हमारे समाज का आधा हिस्सा अर्थात् स्त्री को शिक्षित करना अत्यंत आवश्यक है। अगर स्त्री शिक्षित नहीं होगी तो वह अपने घर को सम्भालने में, बच्चों को शिक्षित करने में, उनकी सही से परवरिश करने में असमर्थ होगी। पर यह बात लड़कियों के माँ-बाप नहीं समझते। अब स्त्री शिक्षा पर जोर दिया जा रहा है। पर आज भी अधिकांश लोगों की मानसिकता यह है कि लड़कियों को पढ़ा-लिखा कर क्या होगा,

उन्हें तो एक दिन घर छोड़ कर जाना ही है। सम्भवत यदि लड़कियाँ विवाह के बाद घर छोड़ कर ससुराल न जाती तो माता-पिता लड़कों की भाँति लड़कियों को भी शिक्षित करने में आग्रही होते । माँ जो खुद एक स्त्री है वह भी अपनी लड़की को पढ़ाना नहीं चाहती। लोगों की मानसिकता है कि लड़कियों को तो चूल्हा-चौका ही करना है, इसके लिए पढ़ने-लिखने की क्या आवश्यकता है। एक लड़का शिक्षा ग्रहण करता है तो वह खुद शिक्षित होता है। पर एक लड़की शिक्षा ग्रहण करती है तो वह पूरे घर को शिक्षित करती है।

'मिनाम' में यामी स्कूल के लिए बच्चों को बुलाकर लाती है। पर उनकी माँएँ आकर उन्हें यह कहकर ले जाती हैं कि अगर लड़की स्कूल में पढ़ेगी तो छोटे भाई को कौन सम्भालेगा। यामी का भाई कहता है- लड़कियों को पढ़ कर क्या करना है, शादी करके घर ही तो सम्भालना है, जब तक माँ-बाप के घर हैं, माँ-बाप की मदद करनी है, घर का काम सीखना है। [13]

'मिनाम' में यामी अपनी बेटियों को पढ़ाना चाहती थी। पर उसके ससुर तागार और उसका पति तातुम बेटियों को पढ़ाने के खिलाफ थे। फिर भी यामी ने अपनी जिद् नहीं छोड़ी और अपनी बेटियों को पढ़ाया। इसी जिद् का नतीजा था कि उसकी बेटियाँ यापी और याजुम क्रमश: डी.सी. और डॉक्टर बनकर गाँव का नाम रोशन करती हैं। 'मिनाम' में मिनाम को बारहवीं के बाद उसके ससुराल वाले पढ़ने नहीं देते। अब उसके जीवन का हर फैसला ससुराल वाले करते हैं। स्त्री को जब मायके वाले ही पढ़ने नहीं देते फिर पराये ससुराल वालों से क्या उम्मीद की जा सकती है। मिनाम अपने जमाने की बात करती है कि उस जमाने में लड़कियों को पढ़ने नहीं दिया जाता था- कुछ को घर के कामकाज के लिए, तो कुछ को अपने से छोटे भाई या बहन के लिए निबि बनाने के लिए, तो कुछ की नेप्पा ञिदा के तहत बचपन में ही शादी कर दी जाती थी। [13]

पहले लड़कियों को पढ़ने नहीं दिया जाता था । 'मुक्ति' उपन्यास का काल 1947-1962 तक है । 'मुक्ति' में बलूलहक साहब की बेटी आयशा पढ़ना चाहती है पर बिरादरी वाले लड़की के पढ़ाई के खिलाफ है- मेरी बेटी आयशा अपनी पढ़ाई की जिद पर अड़ी हुई थी जबकि हमारी बिरादरी के मुसलमानों की जिद थी कि इंटर तक पढ़ चुकी है उसे और अब मत पढ़ाओ । शादी-ब्याह करके घर - गिरस्ती बसवा दो। [6]

5.2.3 बलात्कार और वैश्यावृत्ति

स्त्री का बलात्कार उसका चरम यौन शोषण है। इससे स्त्री की आत्मा पर गहरी चोट लगती है। यह एक अति घृणनीय अपराध है। हत्या से तो एक बार प्राण चले जाते हैं, पर बलात्कार से स्त्री हर दिन मरती है। इस घटना की शिकार स्त्री को समाज ग्रहण नहीं करता । पुरुष का अपनी शारीरिक शक्ति, सामाजिक रुतबा, आर्थिक बल के द्वारा यह स्त्री पर किया गया घोर अपराध है। इसके लिए मृत्यु दण्ड भी कम है। पर हमारे समाज में कितने ही ऐसे अपराधी साफ बच जाते हैं, क्योंकि अपनी इज्जत जाने के डर से पीड़ित के परिवार जन इसकी पुलिस में रिपोर्ट नहीं लिखाते और यदि साहस करके न्याय की तलाश में रिपोर्ट लिखा भी देते हैं तो अपराधी अपनी राजानीतिक, आर्थिक शक्ति का फायदा उठाकर बच निकलते हैं। ऐसे अपराध को रोकने के लिए समाज की मानसिकता बदलने की आवश्यकता है। कानून व्यवस्था को मजबूत करने की भी जरूरत है।

'रूपतिल्ली की कथा' में राली के जयंती पर बलात्कार की घटना का चित्रण है- घोड़ा रोककर राली उसे (जयंती को) कुछ देर तक देखता रहा। फिर घोड़े से उत्तर झट उसके पास गया और तुरंत ही पत्थर पर उसे उकड़ू कर दोनों पाँव नीचे की तरफ खींच दिया। फिर दबोचकर उसके कुल्हे पर बैठ गया [9]

'उफ़्फ़' में भी बलात्कार का प्रयत्न करते हुए दिखाया गया है। अम्लान डीसी मित्तल की पत्नी रंजना के साथ बलात्कार करने का प्रयास करता है। पहले वह मित्तल की शराब में नींद की गोली मिला देता है। जब मित्तल सो जाते हैं, तब अम्लान रंजना के साथ बलात्कार का प्रयास करता है। पर रंजना चीखती नहीं, उसे डर है कि अम्लान उनके बच्चों को या उससे अपेक्षाकृत कमजोर पति को नुकसान न पहुँचा दे- चीखने से भी तो... कितनी लाज लगेगी दूसरे सुनेंगे तो बेचारे सुनील मुश्किल में पड़ जाएँगे। ताकतबर भी तो है उनसे कहीं बच्चों को कुछ... वह महसूस करता है, प्रतिरोध दम तोड़ रहा था बाँहों में बँधी औरत का जोर से मसल दी हैं छातियाँ [4]

रंजना रोने लगती है और कहती है कि इसके बाद वह जी नहीं पायेगी । अम्लान उसे छोड़ देता है। इसके बाद रंजना पति को बताती है कि अम्लान ने उसके साथ बलात्कार की कोशिश की थी। सुनील मित्तल इस बात से हैरान है कि इतने दिनों तक रंजना ने क्यों नहीं बताया । 'जहाँ बाँस फूलते हैं' में अक्सर चुप रहने वाला बूढ़ा जोरमी के साथ बलात्कार करता है। एक पितृतुल्य बुजुर्ग से जोरमी को ऐसी उम्मीद नहीं थी। पर काम की प्यास अपनी उम्र नहीं देखती। इसकी सजा कठोर होनी चाहिए। पर बूढ़े को सजा नहीं मिली। जोरमी ने किसी से इसकी शिकायत भी नहीं की। इस घटना को झा देख लेता है और सम्भवत: इसी कारण वह जोरमी के गर्भस्थ संतान को अपना नाम देने से मुकर जाता है। इसके बाद जोरमी की जिंदगी नरक बन जाती है- बिना उसकी बात का जवाब दिए बड़े ने जोरमी कि बाँहों में भर जू (एक प्रकार की शराब) से तर, पर काम से प्यासे अपने सफेद होंठों को उसकी बाई कनपटी पर रख दिया।....' जोरमी ! मेरी पत्नी नहीं है न ।'.... गुस्से में 'कर्षिया' (जानती हूँ) कहती हुई उसकी जकड़ से छूटने के लिए जमीन पर बैठ जाने के लिए झुकी। पर संतुलन न पाने के कारण उसकी कमर बेंच से टकरा गई और वह चीखती हुई बोली, 'कपू, आपसे ऐसी उम्मीद न थी ।' पर बूढ़ा इसी क्षण उस पर चढ़ बैठा तो वह उसकी फुर्ती व ताकत पर आँखें फाड़े रह गई। [9]

'मुक्ति' में भी बलात्कार के प्रयास का एक प्रसंग आता है। उपन्यास का नायक कमल भट्टाचार्य शरणार्थी बस्ती में साँवरी के साथ बलात्कार का प्रयास करता है। पर साँवरी अपनी लाज बचाने के लिए कमल के माथे पर काँसे का लोटा मारकर सुक्ता देवी की नवजात बच्ची मुक्ति को लेकर भाग जाती है- इतना कहकर कमल ने उसका हाथ पकड़ उसे अपनी ओर खींचा ही था कि बगल में पड़े काँसे के लोटे को उठाकर उसने इतनी जोर से दे मारा कि कमल के ललाट की दाहिनी ओर की कनपटी से खून की धार सी उछल पड़ी। [6]

'मुक्ति' में कियांग्माइची के माता-पिता की बर्मा में हत्या के बाद वह कुछ जापानी सैनिकों के हाथ लग जाती है जो उसके साथ लगातार कई-कई दिनों तक बलात्कार करते रहते हैं। [6]

'जंगली फूल' में तानी की अनुपस्थिति में तानी का ही सौतेला भाई तापिन उसकी पत्नी आसीन के साथ बलात्कार करता है। आसीन कहती है- बस इतना ही जानती हूँ कि उस शैतान तापिन ने मेरा बलात्कार किया है। [11]

स्त्री या पुरुष यदि पैसे देकर यौन उपभोग के लिए उपलब्ध हो तो, उस स्त्री या पुरुष के इस व्यवसाय को वेश्यावृत्ति कहते हैं। सामान्यतः तो स्त्री को ही इस नरक में जीना होता है। पर पुरुष भी किसी मजबूरी या आर्थिक तंगी के कारण इस व्यवसाय में उतरते हैं। जब स्त्री किसी दुर्घटना में तथाकथित यौन शुचिता खो देती है और समाज द्वारा लांछित होती है और उसके पास जीविका के लिए कोई दूसरा रास्ता नहीं बचता, तब वह इस व्यवसाय में उतरती है। 'जहाँ बाँस फूलते हैं में झा के धोखे के बाद जोरमी के पास कोई रास्ता नहीं रहता और उसे वेश्यावृत्ति अपनानी पड़ती है- लालदोला ने इसका फायदा उठाकर पहले बागियों के कैंप में मनोरंजन के लिए रखा और नसीब ने अब उसे कोठे पर ला बिठा दिया है। [9]

यद्यपि कि जोरमी अपनी रोज-रोज की शर्मनाक जिंदगी से ऊब गई थी, फिर भी जिंदा रहने की एक ऐसी ललक शेष थी कि वह जिंदगी को त्याग नहीं सकती थी। [9]

स्त्री शारीरिक रूप से कमजोर है। विवाह के बाद स्त्री ससुराल आ जाती है जहाँ उसका कोई रक्त सम्बंधी नहीं होता। वह ससुराल में पराई होती है। आमतौर पर उसको सहयोग करने वाला या समर्थन करने वाला ससुराल में कोई नहीं होता। यही कारण है कि पति और ससुराल के बाकी लोग उसे शारीरिक और मानसिक रूप से प्रताड़ित करते हैं। 'मिनाम' में यामी का 'लेपा लिङनाम' प्रथा (इस प्रथा में लड़की को जोर-जबरदस्ती उठाकर ले जाया जाता हैं और विवाह के लिए मजबूर किया जाता है) के तहत जोर-जबरदस्ती तातुम से विवाह करा दिया जाता है। उसे एक कमरे में बंद रखा जाता है। अपनी सास द्वारा लाया गया खाना खाने में जब यामी आनाकानी करती है तब तातुम उसे पीटता है। वह कहता है- 'साल्ला! मेरा आने का दिया वाला नाई खाएगा?' कहकर जबरन खाने को यामी के मुँह में स दिया। फिर उसके बालों को पकड़ कर फर्श पर मारने लगा। यामी चीखती रही, चिल्लाती रही। अंत में बेहोश हो गई। उसे उसी हालत में छोड़कर तातुम चला गया। [13]

इसी उपन्यास की मिनाम के साथ भी घरेलू हिंसा होती है। एक बार उसका पति बस में उसने किसी लड़के की तरफ देखा है ऐसा आरोप लगाकर उसको थप्पड़ मारता है। मिनाम को वह रंडी कह कर गालियाँ भी देता है- किसे और कब देखा मुझे भी पता नहीं। वो मुझे 'रंडी' और जाने क्या-क्या कहकर गालियाँ दे रहा था। [13]

उसके बाद मिनाम को अपने सतीत्व का सबूत देने के लिए मानो अग्नि परीक्षा ही देनी पड़ जाती है। मिनाम को गरम लोहे की दाव को पकड़ कर यह साबित करना पड़ता है कि मिनाम उस लड़के के साथ सोई नहीं है- उसने स्तोव जलाया, दाब (तलवार जैसी वस्तु) को उस पर रखा तब तक रखा जब तक वो लाल हो गई। उसे उठाकर मेरे सामने आकर बोला कि तुम उसके साथ कब सोई ? अगर तुमने उसे नहीं देखा है तो इस गरम लोहे (दाब) को अपनी हाथों से पकड़ो, नहीं छुआ तो इसका मतलब तुम सोई हो उसके साथ मेरे दोनों तरफ नंगी तलवार लटक रही थी। बहुत मिन्नतें की, अपनी बेगुनाही का सबूत मैं कहाँ से लाती? कुछ मिनट बीत जाने पर उसने दुबारा लोहे को गर्म किया, इस बार मेरे पास उसे पकड़ने के सिवा और कोई रास्ता नहीं था। बस छुआ ही था कि हाथ पूरी तरह जल गया। मैंने चिल्लाकर उसे छोड़ दिया और रोने लगी। [13]

मिनाम अपने पति द्वारा किये गये घरेलू हिंसा के साथ धीरे-धीरे आदी हो जाती है। उसका पति पहले तो उसे पीटता है, फिर माफी माँग कर प्यार जताने लगता है- वो मुझे पहले जानवरों की तरह पीटता, फिर रात को मुझसे माफी माँगता और प्यार से पेश आता। धीरे-धीरे मैं भी उसकी इस बात की आदी हो गई। [13]

मिनाम मार की इतनी ज्यादा आदी हो गयी थी कि उसे मार के बाद के प्यार से सुख मिलने लगता मार के बाद प्यार में मुझे एक मजा सा आने लगा। [13]

मिनाम के साथ केवल उसका पति ही घरेलू हिंसा करता हो ऐसा नहीं है। उसकी सास भी उस को मानसिक रूप से प्रताड़ित करती है। वह कहती है।

5.2.4 प्रेम एवं विवाह

मैं भी अपने ढंग से उनकी सेवा करती थी, पर कभी-कभी उनका तेवर बदल जाता और मेरे लिए अपशब्दों का प्रयोग भी करने लग जाती थी। [13]

प्रेम बहुत ही पवित्र अनुभूति है। प्रेम के अलग-अलग रूप है। परिवार जनों से प्रेम, अपने संगी से
प्रेम, जानवरों से प्रेम, ईश्वर से प्रेम आदि। युवक-युवती प्रेम में कभी तो ईमानदार रहते हैं, वे पूरी जिंदगी साथ रहते हैं। पर कभी-कभी प्रेम संबंध में एक साथी दूसरे को धोखा भी देता है। 'मिनाम' में यामी की सहेली आजा अपने प्रेमी की धोखेबाजी की बात बताते हुए यामी को एक पत्र लिखती है। आजा का प्रेमी उससे शादी करने का वादा कर चुका था। पर बाद में एक दूसरी युवती आजा को बताती है कि आजा का प्रेमी और वह शादी करने वाले हैं- मेरे संघर्ष के दौरान मुझे एक लड़का मिला। वो मेरा बहुत खयाल रखता था, हम धीरे-धीरे पास आ गए। हम शादी करने वाले थे।... कुछ दिन पहले मैं उससे मिलने गई तो देखा कि उसके कमरे में एक लड़की बैठी हुई है। जब में पहुँची तो मेरा परिचय मौसी की बेटी कहकर कराया। मैं वहाँ से निकल आयी उस लड़की ने मुझे बताया कि वे शादी करने वाले हैं। मैं टूट गई। [13]

मिनाम अपने पहले प्रेम प्रस्ताव के बारे में बताती है कि एक लड़के ने पहले तो उससे कहा कि उसे मिनाम के गाँव की किसी लड़की से प्यार हो गया है, वह मिनाम की करीबी है। मिनाम ने सोचा कि उसकी एक रिश्ते की भतीजी के बारे में कह रहा है। पर अगले दिन मिनाम को उस लड़के का एक पत्र मिला कि कल वाली बात मिनाम के लिए कहा गया था।

'मिनाम' में ताकोप नामक एक अनाथ लड़के का वर्णन आता है। ताकोप की माँ यासी को ताकोप के पिता तामार ने प्रेम की आड़ में गर्भवती कर दिया था और जब वह छः महीने की गर्भवती यासी को अपने घर ले आया तो यासी को यह पता चला कि तामार की पहले से ही बीवी और दो बेटियाँ हैं। मिनाम को स्कूल में कई लड़कों ने प्रेम पत्र भेजा। इससे मिनाम को लगने लगा कि शायद वह खुबसूरत है । वह प्रस्तावों को ठुकराती रही। पर आखिर में उसे एक लड़का पसंद आया जो उसी की तरह हॉस्टल का मॉनिटर था। इस प्रसंग में मिनाम कहती है- शायद अंग्रेजी कहावत 'नियेरस्ट इज डियेरेस्ट' वाली बात थी। [13]

प्रेम उन लोगों में ज्यादा पनपता है जो समान स्वभाव, स्तर के होते हैं । उपन्यासकार का भी यही मानना है। यदि हमारा प्रेम पात्र हमारी छोटी-छोटी बातों का खयाल रखता है, हमारी छोटी-बड़ी मुसीबत में हमारा साथ देता है तो प्रेम बढ़ जाता है। एक बार मिनाम के आँख के नीचे छोटी सी चोट लगी। जब उसके प्रेमी ने उस छोटी सी चोट को देखा तो उसे फिक्र हुई और वह जिज्ञासा करने लगा कि 'क्या हुआ'। यह जिज्ञासा मिनाम को बहुत अच्छी लगी- मुझे बहुत अच्छा लगा। आज तक किसी ने भी मेरी ओर इस तरह ध्यान नहीं दिया। यह मामूली-सा निशाना उसे दिख गया और वह इससे परेशान हो गया। इस एहसास से ही मैं भाव-विभोर हो उठी। [13]

प्रेम में डूबी हुई मिनाम प्रेम के संबंध में कहती है- प्यार भी अजीब होता है, आप जिसे प्यार करते हैं, उससे जुड़ी हर चीज आपको प्यारी लगती है। [13]

पर आखिर में इसी युवक ने पति बनने के बाद मिनाम की जिंदगी नर्क बना दी । मिनाम का प्रेमी अक्सर उससे नजदीकी बढ़ाने का प्रयास करता। मिनाम इसके लिए तैयार नहीं थी । उस समय वह यह सोचने लगती थी कि अपने प्रेमी को नजदीक आने से रोकने पर वह नाराज न हो जाए। बाद में मिनाम अपने जीवन के अनुभव से सीखती है कि अगर आपका साथी आपके साथ जल्दी नजदीकी बढ़ाने का प्रयास करे तो समझ जाना चाहिए कि उसका प्रेम वासना से युक्त है। मिनाम कहती है- आज मैंने जाना कि हमें प्यार करने वाला हमें उसी रूप में पसंद करेगा जिस रूप में हम हैं और हम पर अपना हक नहीं जतायेगा बल्कि हमारे मान का मान रखेगा। [13]

जब कोई हमारे प्रेम के खिलाफ बोलता है, दुनिया जब हमारे प्रेम को बनावटी कहती है तब हम अपने प्रेम को सच्चा साबित करने के लिए किसी भी हद तक जाते हैं। मिनाम भी अपने प्रेम को सच्चा साबित करने के लिए सभी की मर्जी के खिलाफ विवाह करती है। इस प्रसंग में वह कहती है- यह भी मेरी एक जिद थी। मैं उस वक्त लोगों को यह दिखाना चाहती थी कि मैं ऐसी वैसी लड़की नहीं हूँ, मैंने प्यार किया है कोई पाप नहीं। [13]

प्रेम में प्रेमी एक-दूसरे का साथ पाना चाहते हैं। प्रेमी एक-दूसरे को करीब पाना चाहते हैं। अधिक समय और एकांत की कामना हर प्रेमी को होती है। कोई भी उपन्यास प्रेम कहानी के बिना पूरा नहीं होता । जीवन ही जब प्रेम के बिना पूरा नहीं होता फिर जीवन का प्रतिबिम्ब उपन्यास प्रेम के बिना कैसे पूरा हो सकता है । 'आहुति' उपन्यास में नायिका चानु मनोज की जीवन रक्षा के लिए अपने प्राणों की आहुति दे देती है । चानु मनोज के संसर्ग में रहते-रहते उसे प्रेम करने लगती है। वह मनोज के साथ एकांत के कुछ पल पाना चाहती है- मैं यहाँ फोटो खिंचवाने नहीं आई हूँ, यह तो न जाने बचपन से कितनी बार किया है। मैं तो आज आई हूँ ताकि कुछ पल आपके साथ झील के किनारे बिता सकूँ। [8]

प्रेम में मान अभिमान भी होता है। 'आहुति' में इसका सुंदर उदाहरण देखा जा सकता है। प्रसंग है- मणिपुर में दंगे हो जाने पर मनोज की कोई खबर चानु को नहीं होती। चानु बेचैन रहती है। फिर जब कुछ दिन बाद मनोज चानु के घर आता है तब चानु मनोज के समक्ष अपना अभिमान प्रकट करती है जो मनोज के प्रति उसके प्रेम का सबूत है- "चानु, ठहरो, तुमने नहीं पूछा दंगे में कहाँ था, कैसा था।' चानु रूक गई, उसने मुड़कर देखा और धीरे से बोली, 'मैं कौन होती हूँ, कुछ भी पूछने वाली, आपने यह अधिकार मुझे दिया है। क्या?' मनोज धीरे से हँस पड़ा, 'अरे इसमें अधिकार देने की बात कहाँ से आ गई। इतना बड़ा संकट आया था, मैं बच गया, तुम्हें इसकी खुशी नहीं है क्या?" एकाएक चानु की आँखों से आँसू निकल आये, उसने अपने दोनों होठों को दबाकर अपनी काँपती आवाज को रोकने की कोशिश की। [8]

प्रेम संबंध में अक्सर परिवार और समाज की तरफ से बाधा उपस्थित की जाती है। कुछ प्रेमी अविवाहित भी रह जाते हैं। वे किसी और को साथी के रूप में स्वीकार नहीं कर पाते। ऐसे उदाहरण आज के समाज में कई देखे जा सकते हैं। 'जंगली फूल' में ऐसा ही एक प्रसंग है। 'जंगली फूल' प्रागैतिहासिक काल की कथा कहता है । इसीलिए एक प्रागैतिहासिक काल के समाज में ऐसा उदाहरण बहुत हद तक लेखिका के वर्तमान विचारधारा और दृष्टांतों को उस काल पर प्रक्षिप्त करने का ही परिणाम हैं। 'जंगली फूल' में ताप के पिता और आसीन की बुआ के प्रेम में ऐसी बाधा उपस्थित हुई थी और आसीन की बुआ अविवाहित ही रह गयी- आज यह बूढ़ी हो गई है। इसी सरदार की बड़ी बहन है यह। इसने कभी विवाह नहीं किया। ताप के पिता से प्रेम करती थी। इसी कारण उसका भाई नाराज हुआ। दोनों परिवारों में दुश्मनी के चलते दो दिल अलग हो गए। फिर लड़के का ताप की माँ से विवाह हो गया, लेकिन यह आजीवन अकेली रह गई। [11]

प्रेम संबंध में एक सच्चाई एक पक्षीय प्रेम की भी है। कोई किसी से प्रेम करता है परंतु या तो प्रिय को इसका पता नहीं होता या वह अस्वीकार कर देता है। 'लोहित' उपन्यास में इस प्रकार के एक पक्षीय प्रेम का उदाहरण सामने आता है । उपन्यास का नायक हितेन जोयमती से प्रेम करता है, परंतु वह कभी यह प्रकट नहीं कर पाता । जोयमती भी उसका प्रेम समझ नहीं पाती। वह गैर असमीया युवक बृजेंद्र को चाहने लगती है। उपन्यासकार टिप्पणी करती हैं- हितेन के प्यार को दोस्ती समझती रही और बृजेंद्र की दोस्ती को प्यार तो नहीं समझ रही बह? [26]

हालाँकि बाद में उपन्यास के अंत की तरफ जोयमती भी हितेन के प्रति प्रेम अनुभव करने लगती है । पर राजेश्वरी माँ अपनी होशियारी से जोयमती का विवाहित जीवन टूटने से बचा लेती है। जोयमती के जोर देने पर हितेन श्रावनी से विवाह करने को राजी हो जाता है। पर उसका एक पक्षीय प्रेम अंत तक रहता है। वह अपने मन की बात जोयमती को व्यक्त करता है- मेंरे दिल में अभी भी कोई और है और हमेशा रहेगी [26]

'रूपतिल्ली की कथा' उपन्यास में कई प्रेमी युगल हैं। ये हैं राफताब नजवा, रिंजा - अल्खा आवरी, रालिंसन जयंती आदि । नजवा और राफताब के प्रेम में विवाह से पूर्व ही नजवा गर्भवती हो जाती है। उसके बाद उनका विवाह होता है। नजवा और राफताब कई दिन जल केलि करते हैं। इसके परिणाम स्वरूप नजवा गर्भवती हो जाती है। पश्चिम में विवाह से पूर्व माँ बनना इतना बुरा नहीं माना जाता। प्रेमी युगल बहुत बार अपने ऊपर संयम नहीं रख पाते और इसका परिणाम युवती के गर्भवती होना होता है। 'रूपतिल्ली की कथा' में नजवा के गर्भवती होने को एक वाक्य से इस प्रकार व्यक्त किया गया है- फिर गाँव में एक दिन शोर हुआ कि वह पेट से है। [9]

प्रेम संबंध को लेकर लोगों में ईर्ष्या भी होती है। हम जिससे प्रेम करते हैं वह यदि किसी और से प्रेम करे तो हमे ईर्ष्या होती है और हम प्रेम पाने के लिए गलत रास्ता भी अपना लेते हैं। 'राह और रोहे' उपन्यास में रामनाथ भराली नामक युवक रेणु से प्रेम का प्रस्ताव करता है। रेणु उसका प्रस्ताव ठुकरा देती है। फिर अधिक तंग करने पर रेणु के पिता भी उसे फटकारते हैं। रेणु के घर जब जीवन का आना-जाना होने लगता है। तब रेणु के साथ जीवन को देखकर रामनाथ को ईर्ष्या होने लगती है और रामनाथ गुण्डे भेजकर जीवन को चोट पहुँचाने की कोशिश भी करता है। रामनाथ भराली की ईर्ष्या के बारे में उपन्यासकार ने लिखा है- अपनी इस एकांत साधना के दौरान में उसने कई बार जीवन को वहाँ आते-जाते देखा कभी उसका स्वागत और कभी उसे विदा करते वक्त भराली को यदाकदा रेणु की झलक मिल ही जाती । वह तब ईर्ष्या से जल-भुन कर राख हो जाता। [28]

प्रेम में सब कुछ प्रिय को सौंप देने की इच्छा प्रेमी को होती है। 'राह और रोहे' में ऐसी इच्छा रेणु की जीवन, मैं तुम्हारी हूँ, मेरा हृदय भी तुम्हारा है, और यह शरीर भी, जैसे चाहो, तुम इन्हें...। [28]

आदर्शवादी प्रेमी अक्सर विवाह से पूर्व शारीरिक संपर्क को नाजायज मानते हैं। 'राह और रोहे' में एक बार पढ़ाते हुए जीवन रेणु के गालों को अपनी हथेलियों के बीच लेते हुए कहता है- तुम कितनी अच्छी हो रेणु [28]

इस हरकत के कारण वह अपने आप को धिक्कारने लगता है। वह दूसरे दिन रेणु को एक पत्र देता है । उसमें लिखा होता है- मुझे ऐसा लगता है, जैसे कल से मैंने तुम्हारी श्रद्धा का अधिकार खो दिया हो, अपने पवित्र प्रेम को कलुषित कर दिया हो। [28]

पुरुष के संदर्भ में अपनी पत्नी या प्रेमिका और स्त्री के संदर्भ में अपने पति या प्रेमी के रहते हुए भी अगर कोई पुरुष या स्त्री अन्य व्यक्ति से प्रेम करता है, शारीरिक संबंध बनाता है तो हम उसे परकीया प्रेम कहते हैं । परकीया प्रेम के पीछे अपने मौजूदा साथी से ऊब जाना भी एक कारण है। कुछ स्त्री-पुरुष परकीया प्रेम में रोमांच का अनुभव करते हैं और इसी अनुभव के लिए भी वे इस प्रकार के संबंध बना लेते हैं । 'मिनाम' में यामी का पति तातुम यामी के हर बार लड़की पैदा करने से चिढ़ जाता है, उसे लड़का चाहिए। यामी का तातुम से जोर-जबरदस्ती विवाह करा दिया गया था। तातुम यामी को घमण्डी मानता था। उसके घमण्ड को तोड़ने के लिए और अपने अपमान का बदला लेने के लिए ही उसने यामी से जोर- जबरदस्ती विवाह किया था। यामी से वह प्रेम नहीं करता था। इन सभी कारणों से तातुम गाँव की अन्य स्त्रियों से शारीरिक संबंध बनाता था और यामी से उन स्त्रियों की तुलना करके यामी को पीटता था- इस बार लड़का न होने पर रोज हंगामा करने लगा। अब वह खुलकर गाँव की अन्य भाभियों के साथ रात बिताने लगे। गाँव के जिस भी भाभी का पति रात को खेतों में सोने या जंगल में शिकार आदि करने जाता तातुम को पता नहीं कैसे पता चल जाता था, वह उनकी बीवियों के पास चला जाता। अगले दिन आ जाता और यामी के साथ उस औरत की तुलना कर यामी को बदचलन घमण्डी जाने क्या-क्या कहकर पीटने लगे। [13]

'मिनाम' में मिनाम के पति का भी परकीया प्रेम संबंध चित्रित हुआ है। गाँव की एक भाभी के साथ उसके पति का परकीया प्रेम संबंध है। शादी से पहले भी मिनाम के पति का उसी औरत के साथ इस प्रकार का संबंध था। मिनाम इस संदर्भ में कहती है- एक बार उसकी एक भाभी रात के समय पोका लेकर घर आयी। जब वो जाने लगी, मेरा पति तुरंत पीछे निकला। [13]

रिश्ते में बुआ लगने वाली एक लड़की से भी मिनाम के पति का इसी प्रकार का संबंध दिखाया गया है। मिनाम इस संदर्भ में कहती है- बेटी के हॉस्टल जाने के बाद उसने एक अन्य लड़की से रिश्ता जोड़ लिया। वह भी रिश्ते में बुआ लगती है। उसके लिए हमारे बीच फिर झगड़े होने लगे। [13]

'जंगली फूल' में परकीया प्रेम का चित्रण मिलता है। नायक तानी और सिमांग का प्रेम भी परकीया प्रेम ही है । तानी और सिमांग दोनों विवाहित हैं। परकीया प्रेम संबंध करने वाली स्त्री का पकड़े जाने पर उस पर तरह-तरह के अत्याचार किये जाते हैं, उसके मददगार के साथ बुरा सलूक किया जाता है- विवाहित महिला किसी गैर मर्द के साथ पकड़ी गई तो नर्क से भी बदतर सजा उसे मिलती थी। या तो उसे ऐसे आदमी के साथ बेच देते थे जो उसको पसंद नहीं होते, या फिर कई-कई दिनों तक उसे भाड़ी-भरकम लकड़ी के साथ बाँध दिया जाता

था और उसकी मर्जी के खिलाफ उसके शरीर के साथ कई तरह से खिलवाड़ किया जाता। मददगार को कई तरह के जुर्माने लगते थे। कभी-कभी मारपीट और खून-खराबे तक की नौबत आ जाती। मर्द कई- कई पत्नियाँ रख सकते हैं। उनके लिए कोई खास सजा तय नहीं है। [11]

'लोहित' में जोयमती के नाना की एक बरमी रखैल होने की बात आती है- उसके नाना की एक खुबसूरत रखेल है। जोयमती को वह बहुत अच्छी लगती है। वह यहाँ की नहीं है। बरमा की है। नाना तो नहीं रहे लेकिन वह अभी भी है। [26]

'रूपतिल्ली की कथा' में भी परकीया प्रेम के प्रसंग मिलते हैं। राली और नाङखलाउ की रानी का प्रेम संबंध इसी प्रकार का है। राली विवाहित है और नाङखलाउ की रानी भी । उपन्यासकार कहते हैं- इस पूरे दौर में नाङख्लाउ की रानी राली के करीब आती गयी, लेकिन जयंती जरा भी दूर नहीं हुई। [9]

राली नाङखलाउ की रानी को प्रेम पत्र लिखता है। जिसमें वह नाङखलाउ की रानी के प्रेम में पागल हो जाने की बात करता है और जीवन के बाकी दिन उसी के साथ बीताने की ख्वाहिश जाहिर करता है। यह पत्र राली की पत्नी जयंती के हाथ लगती है और तभी वह राली से दूर होने लगती है। पत्र में वह लिखता है- बिना प्यार जताये तुम्हें देखना असम्भव है और बिना बोलकर बताए यह प्यार करना भी असम्भव है। लम्बे समय से चुप रहा हूँ, अब नहीं रहा जाता। मैं तुम्हारे प्यार में पागल हूँ और मेरे लिए सिर्फ एक खुशी बची है कि जीवन के बाकी दिन तुम्हारे साथ बिताने की इच्छा में एक एक कर नष्ट कर दूँ। [9]

'रूपतिल्ली की कथा' में परकीया प्रेम का एक और उदाहरण है। रिंजा की पत्नी अल्खा का बसंता के साथ परकीया प्रेम संबंध है। रिंजा जब अंग्रेजों से लड़ता हुआ कई महीनों के बाद गाँव पहुँचा है तो देखता है। कि वह तो बेटा छोड़कर गया था, पर अब एक बेटी भी है। अल्खा कह देती है कि यह बसंता की संतान है- वह बसंता की संतति है। मैं तुमसे प्यार जरूर करती हूँ, लेकिन शरीर का धर्म है। रहा नहीं गया। परिणाम तुम्हारे सामने है। [9]

'उफ़्फ़' में मुख्यमंत्री दिव्य बरफूकन और एसपी अद्वैत रंजन की पत्नी अक्षरा के बीच परकीया प्रेम संबंध है । इतने बड़े व्यक्ति का इस प्रकार के रिश्ते से जुड़े रहना बदनामी की सुर्ख़ियों का कारण हो सकता है । इसी बात को व्यक्त करते हुए अक्षरा की सहेली एंजेला दिव्य बरफूकन को आगाह करती है- यू हैव सक्सिडेड, मि. दिव्य, पर मुझे डर है, किसी गंदे स्कैंडल की सुर्खियाँ बन कर ही नहीं रह जाए यह सब [4]

आगे एंजेला कहती है कि अक्षरा किसी और की पत्नी है- शी इज वाइफ ऑफ समवन [4]

दिव्य बरफूकन और अक्षरा के कुछ सम्भोग के दृश्य भी खींचे गये हैं- होठ ले लिए हैं होठों में और अपनी जाँघों पर खींच लाये हैं उसे [4]

अक्षरा का संबंध अम्लान के साथ भी होता है। उसके साथ भी अक्षरा का संबंध यौन संबंध तक बढ़ जाता है। एक अवश आवेग कसता गया था बाँहों का घेरा [4]

'जहाँ बाँस फूलते हैं' में लालदोला और लालसाङलियाना साइलो की पत्नी के बीच परकीया प्रेम संबंध था। लालवानी लाल दोला के वीर्य से गर्भवती होती है। साइलो लालवानी को इसी कारण छोड़ देता है और लालदोला उससे विवाह कर लेता है- लालदोला ने जब उसे पहली बार देखा था, तब मन-ही-मन निर्णय ले लिया था कि ललपा उसे बच्चा दे या न दे, वह वानी को बच्चा अवश्य देगा। [9]

'मुक्ति' में भी परकीया प्रेम का एक प्रसंग आता है। एक अंग्रेज लेफ्टिनेंट की बरमी पत्नी और मुल्तान सिंह नामक एक फौजी अधिकारी के बीच का परकीया प्रेम का प्रसंग आता है। एक दिन रंगे हाथों पकड़े जाने पर मुल्तान सिंह लेफ्टिनेंट को उसी की बरमी पत्नी के कहने पर गोली मार कर मार डालता है। मुल्तान सिंह का परकीया प्रेम प्रसंग के बारे में उपन्यासकार लिखता है- उस बीवी के कहने से ही लेफ्टिनेंट मुल्तान सिंह की ड्यूटी फ्रंट पर न लगकर हेडक्वार्टर प्रोमे शहर में ही लगी हुई थी, जबकि उसका शौहर वह लेफ्टिनेंट स्वयं प्रायः फ्रंट पर चला जाता था। इधर मुल्तान सिंह जी अपनी बीवी को घर में बंद कर ताला जड़ कर सीधे उसके क्वार्टर पहुँच जाते और उसकी बीवी से रंगरेलियाँ करते रहते। [6]

श्रीप्रकाश मिश्र ने 'जहाँ बाँस फूलते हैं और 'रूपतिल्ली की कथा' में कई जगह पूर्वोत्तर की महिलाओं को कामुक बताया है पर वस्तुस्थिति यह नहीं है। पूर्वोत्तर की महिलाओं की गलत छवि उपन्यासकार द्वारा प्रस्तुत किया गया है। परकीया प्रेम हो सकता है, पर स्त्री इस प्रकार 'शरीर का धर्म',[9] 'रहा नहीं गया' [9] आदि कभी नहीं कहेगी। स्त्रियों की स्त्री सुलभ लज्जा इसके आहे तो आयेगी ही।

भारतवर्ष के अनेक समाजों में बहुविवाह की प्रथा युगों से चली आ रही है। सामान्यतः पुरुष ही एकाधिक स्त्रियों से विवाह करते हैं। इस प्रकार के विवाह के कारण पत्रियों में आपस में झगड़े होते हैं। यह झगड़े सम्पत्ति को लेकर भी होते हैं और छोटी-मोटी घरेलू बातों को लेकर भी यह समाज के लिए सही या उपयोगी नहीं माना जा सकता। स्त्री का भी यह अधिकार होता है कि उसके पति का सारा प्यार, सारा ध्यान उसको ही मिले जैसे उसका सारा प्यार, सारा ध्यान पति को समर्पित होता है।

'मिनाम' में यामी का पति यामी के लड़का पैदा न कर पाने के कारण दूसरी शादी की धमकी देता है- मेरा जमीन इतना ज्यादा है, मिथुन इतना ज्यादा है, तादोक (माला) है सब कुछ है लेकिन मेरा माईकी बेटा नाई पैदाकर सकता... मेरा वंश को कौन चलाएगा? हम तो दूसरा शादी करेगा ही। [13]

'मिनाम' में अरुणाचल की गालो जनजाति की कथा कही गयी है। इस जनजाति में बहुविवाह को 'जिम लाबोनाम' कहा जाता है। उपन्यासकार ने कहा है कि अधिकतर जनजातियों में बहुविवाह आम बात है। पुरुष को यह अधिकार इस लिए था कि यदि पत्नी से पुत्र संतान की प्राप्ति न हो तो पुरुष दूसरा विवाह कर सके- आदिवासी समाज में अधिकतर जनजातियों में बहुविवाह का प्रचलन है। ञिम लाबोनाम अर्थात् बहुविवाह आज भी समाज में बड़ी तेजी से बढ़ रहे हैं। समाज में यह नियम इसलिए बनाया गया था कि किसी कारणवश किसी दम्पत्ति की कोई औलाद न हुई तो वंश को चलाने के लिए पुरुष दूसरी शादी कर सकते हैं। प्राचीन काल में बेटी के होते हुए भी बेटे न होने पर बेऔलाद माना जाता था क्योंकि यहाँ पैतृक सम्पत्ति पर बेटों का ही हक होता है। यही नहीं अगर किसी कारणवश पत्नी की मौत हो जाती है तो वो पुनः विवाह करने के लिए आजाद है। किंतु इस प्रथा का पालन अब पुरुष अपनी अय्याशी को पूर्ण करने हेतु कर रहे हैं। [13]

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि पत्नी की छोटी बहन या रिश्ते में बहन लगने वाली युवती ही सौतन बन कर आती है। 'मिनाम' में मिनाम की भी तीन माँएँ थी- बड़ी माँ से तीन बेटियाँ थीं और माँ से चार बेटियों और एक बेटे में मैं सबसे छोटी थी। [13]

मिनाम अपनी माँ के संदर्भ में कहती है- आने (माँ) उनकी (पिता की) तीसरी बीवी थी पहली से कोई संतान नहीं हुई। फिर उन्होंने अपने बड़े भाई की विधावा से शादी की। [13]

मिनाम दुदुंघर नामक स्थान में स्कूल की शिक्षिका बनकर जाती है। वहाँ वह जिस मकान मालिक के मकान में किरायेदार बनती है उसकी पत्नी कम उम्र की एक लड़की होती हैं। बाद में वह लड़की वहाँ से भाग जाती है। मिनाम को पता चलता है कि वह मकान मालिक की तीसरी बीवी थी- लोगों से पता चला कि पहली बीवी के गुजर जाने के बाद यह उसकी तीसरी बीवी थी। [13]

'मिनाम' में यामी की बड़ी बेटी यापी की सहेली तोपी को विवाह के बाद पता चलता है उसके पति की पहले से पत्नी और चार बच्चे हैं- शादी के कुछ महीने बाद तोपी को पता चला कि उसका पति पहले से ही विवाहित है और पहली पत्नी से उनके चार बच्चे थे, दो बेटे और दो बेटियाँ [13]

'आहुति' में बहुविवाह की प्रथा पर भी मनोज और चानु विचार-विमर्श करते हैं। चानु कहती है- मैं तो बचपन से देखती आ रही हूँ; शादी के बाद परिवार का सारा बोझ अकेली औरतों को उठाना है, बच्चों को पालना, पढ़ाना सभी उन्हीं को करना है। और कभी भी पति दूसरी औरतों को घर में ला बैठाता है। [8]

मनोज चानु से प्रश्न करता है और चानु जबाव देती है- पर चानु मैं यह समझ नहीं पाता, यहाँ साधारणतः पुरुष कई-कई शादियों क्यों करते हैं। वही तो मैं कह रही हूँ। नई पीढ़ी की लड़कियाँ इस को पसंद नहीं करती, पर वे असमर्थ हैं, वे इस स्थिति को बदल नहीं सकती । बहुपत्नीवाद यहाँ के समाज में मान्यता प्राप्त कर चुका है। [8]

आर्थिक स्थिति के मजबूत होते जाने और पत्नियों की संख्या में वृद्धि होने के बीच का संबंध उजागर करते हुए 'आहुति' में उपन्यासकार टिप्पणी करता है- जो जितने बड़े पद पर हैं, वे उत्तने ही अधिक बार शादी करते हैं। [8]

'आहुति' में मनोज को अपनी सह-अध्यापिका की कहानी पता चलती है कि कैसे उसका निकम्मा पति उस पर अत्याचार करता है और दूसरी पत्नी लाने की धमकी देता है- शालिनी ने एक दिन गौड़मणि सिंह के शराब की मजलिस पर ऐतराज जताई, घर में उत्पन्न कठिनाइयों को बताया। बस गौड़मणि का पारा गर्म हो गया, उसने शालिनी को बुरी तरह मारा और साथ में दूसरी पत्नी लाने का भी एलान कर दिया। [8]

मणिपुर में बहुविवाह की प्रथा का ऐतिहासिक कारणों में से एक यह भी है कि 1819 ई. में बर्मा ने मणिपुर पर आक्रमण कर दिया था और भारी संख्या में पुरुषों को बंदी बना कर ले गये थे। तब पुरुषों की कमी के कारण एक ही पुरुष से एकाधिक महिलाओं की शादी होने लगी- सन 1819 में मनिपुर पर बर्मा के आक्रमण में भीषण रक्तपात हुआ । बर्मा की सेना ने लाखों का वध किया और एक लाख लोगों को

बंदी बना कर ले गए। मनिपुर की पुरुष जनसंख्या की बहुत बड़ी क्षति हुई, उसका एक दुष्परिणाम यह भी हुआ कि एक पुरुष के साथ कई महिलाओं की शादी होने लगी। अन्य कारणों के साथ मनिपुर में बहुपत्नीवाद के प्रचलन का एक कारण यह भी है। [8]

'जंगली फूल' में भी बहुविवाह के उदाहरण मिल जाते हैं। 'जंगली फूल' का नायक तानी खुद भी कई विवाह करता है। उसका पिता भी चार विवाह करता है- पिताजी की चार पत्नियाँ थी। जिसकी जितनी पत्नियाँ वे उतना ही धनवान और शक्तिशाली माने गए। एक से अधिक विवाह करो और बच्चे जितना हो सके पैदा करो अपना कबीला छोटा है। [11]

'जंगली फूल' में अन्य कबीलों से भी विवाह संबंध किये जाते थे। इस प्रकार अन्य कबीलों की स्त्रियों को अपने कबीले में शामिल करके जनसंख्या बढ़ाकर अपनी कबीले को बड़ा और शक्तिशाली बनाना कबीलों का उद्देश्य रहता था । इस प्रकार उपन्यासकार ने प्राचीन काल में बहुविवाह को न्यायोचित ठहराया है ।

बहुविवाह का एक दुष्परिणाम यह भी होता है कि सौतेली माँएँ सौतन के बच्चों को बहुत कष्ट देती हैं । कुछ पुरुष इसलिए भी दूसरा विवाह नहीं करते । ब्रह्मपुत्र' उपन्यास में धर्मानंदी अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद इसलिए दूसरा विवाह नहीं करता क्योंकि सौतेली माँ उसकी बेटी आरती को सतायेगी, उस पर अत्याचार करेगी- ये लम्बे वर्ष उसने बिना घर वाली के ही बिता दिये थे। वह चाहता तो किसी को आसानी से घर में बिठा सकता था, पर आरती का जीवन जंजाल बन जाता आरती के लिए सौतेली माँ लाकर वह उसके पथ में काँट नहीं बोना चाहता था। [25]

'मुक्तावती' में भी बहुविवाह के उदाहरण हैं । मुक्तावती के पिता की एकाधिक पत्नियाँ थीं । बहुविवाह का एक परिणाम सौतिया दाह भी होता है । 'मुक्तावती' में जब मुक्तावती के माँ को उसका पति घर से निकल जाने को कहता है और मुक्तावती की माँ अपनी महासती बेटी मुक्तावती का गुणगान करने लगती है तब उसकी सौतें उसे निम्नलिखित कड़वी बातें कहकर ताने देती है जो सौतिया दाह का ही उदाहरण है।

निकल घर से । महासती मुक्ता की माँ है न तू? और महासती की माँ महासती से कम क्या होगी? सती भी अपने पति का हुकुम नहीं टालती और तू तो महासती ठहरी। पति का हुकुम घर से निकलने का हो चुका है, मगर तू है बेशरम कि अभी भी अपनी जीभ चलाये जा रही है। भाग इस घर से [3]

बहुविवाह के पीछे के कारणों की बात करें तो एक कारण तो यह भी देखा गया है कि पत्नी से संतान प्राप्त नहीं होता या पुत्र संतान प्राप्त नहीं होता। दूसरा कारण पुरुषों की कामुकता और तीसरा कारण सम्पत्ति का अहंकार मान सकते हैं।

पूर्णवयस्क होने से पहले यदि किसी लड़के या लड़की का विवाह कर दिया जाता है तो उसे बाल विवह कहते हैं । बाल विवाह के कारण कई प्रकार की समस्याएँ खड़ी होती हैं। अधिकतर कम उम्र की लड़की का अधिक उम्र के पुरुष के साथ विवाह कर दिया जाता है। इस प्रकार का विवाह अनमेल विवाह की कोटि में आता है। लड़का-लड़की यदि कम उम्र के होंगे तो वे मानसिक और शारीरिक रूप से

परिपक्व नहीं होंगे। घर- परिवार की जिम्मेदारी निभाने और संतान जन्म देने में उनको बहुत कठिनाई होगी। कम उम्र की लड़की संतान जन्म देते वक्त मर भी सकती है और इस अवस्था में जन्मा बच्चा प्रायः स्वस्थ भी नहीं होता।

'मिनाम' में 'नेप्पा जिदा प्रथा की बात की गई है। इस प्रथा में जब बच्ची माँ के पेट में ही रहती है तभी उस गर्भस्थ बच्ची का विवाह तय कर दिया जाता है। मिनाम की माँ जब गर्भस्थ बच्ची थी तभी उसका विवाह तय हो गया था। मिनाम कहती है-

कहा जाता है कि आने (माँ) जब पेट में थी, तब आने का रिश्ता आबो (पिता) के बड़े भाई के बेटे के लिए नेप्पा जिंदा के तहत तय कद दिया था। [13]

दुदुंघर में जिस मकान मालिक के मकान में मिनाम किरायेदार थी उसकी तीसरी बीवी मात्र तेरह-
चौदह साल की थी। मिनाम ने टिप्पणी की है- अधेड़ उम्र के मकान मालिक की बीबी तेरह चौदह साल की एक बहुत ही सुंदर बच्ची थी। जबकि पति की बड़ी बेटी शादी करके दो बेटों की माँ थी छोटी बेटी सोलह-सत्रह वर्ष की। [13]

अनमेल विवाह कई समस्याओं की जड़ होती है। पुराने जमाने में रुची की उपेक्षा होती थी और इसी से पुरुष और समाज अपनी मर्जी से किसी भी स्त्री का विवाह तय करते थे। इससे अनमेल विवाह की समस्या का जन्म होता है । 'मुक्तावती' में अनमेल विवाह का एक प्रसंग आता है । वृंदासखी का विवाह बूढे तीन पत्रियों के पति से करवाने का निश्चय उसके माता-पिता करते हैं । वृंदासखी के दुर्भाग्य पर मुक्तावती, तोम्बी और सखियाँ टिप्पणी करती हैं- अरी, वही काङजाबी 'लाइकाय' (बस्ती, मुहल्ला) का हरेश्वर शर्मा, जिसकी तीन पत्नियाँ पहले ही अपने भाग्य को रो रही है। और अब चौथी वृंदासखी भी जीवन भर के लिए भाग्य को रोने जा रही है।

तोम्बी सना दुख के साथ घृणा भरे स्वर में बोली- 'वह बूढ़ा तो बड़ा खबीस है भाई। कोई भी अपकर्म उससे छूटा नहीं । गँजेड़ी है, भँगेड़ी है, अफीमची है, जुआरी है। और क्या-क्या बताऊँ बहनो । उसकी एक स्त्री तो इसी शोक में जहर खाकर मर भी गई। [3]

इस प्रकार के अनमेल विवाह के पीछे पैसों का लेन-देन होता है। इस भेद को खोलते हुए चंद्रा कहती सबसे बड़ा गुण तो पैसा है भाई। वृंदा के बाप को और दूसरे घटक लोगों को बतौर घूस के पैसे मिले होंगें। [3]

दो भिन्न जातियों के स्त्री-पुरुष का विवाह अंतर्जातीय विवाह कहलाता है । लम्बे समय से भारत में अपनी जाति के बाहर विवाह संबंध करना वर्जित रहा है । सामान्यत व्यवस्था- विवाह में जाति से बाहर वर- वधु नहीं ढूंढे जाते परंतु प्रेम संबंध में चूँकि माता-पिता, समाज का इतना दखल नहीं रहता। इसलिए प्रेम किस से किया जायेगा, वह जाति से बाहर का तो नहीं इसका ध्यान प्रेमी नहीं रखते । यहीं कारण है कि अलग-अलग जातियों के युवक-युवती परिवार और समाज से विद्रोह करते हैं, कभी पारिवारिक मजबूरी में, कभी सहर्ष भी ऐसे विवाह में सहमति प्रदान कर देते हैं। 'लोहित' उपन्यास में नायिका जोयमती उत्तर प्रदेश के बृजेंद्र से प्रेम के पश्चात परिवार की सम्मति से विवाह कर लेती है। चूँकि बृजेंद्र गैर-असमीया है। अत: यह विवाह अंतर्जातीय विवाह के अंतर्गत आता है। जोयमती समूचे असम से प्रश्न करती है- क्या मेरे बाद असम में किसी ने नॉन- असमी से विवाह नहीं किया? [26]

गैर असमीया से विवाह करने के कारण जोयमती की बहुत आलोचना होती है, उसे सताया जाता है। इन सब से परेशान होकर जोयमती असम छोड़कर चली जाती है। कई सालों बाद वह वापस आती है और यह प्रश्न पूछती है जिसमें उसके निर्वासन की वेदना बोल रही है। 'राह और रोहे' में एक अंतर्जातीय विवाह का प्रसंग आता है। रेणु के पिता ललित बाबू और रेणु की माँ राधादेवी का विवाह अंतर्जातीय था। इस संबंध में वर्णन है- राधादेवी एक मद्रासी अफसर की लड़की थी, जो वर्षों से असम सरकार के शिक्षा विभाग में काम करते थे। ललित बाबू और राधादेवी दोनों बनारस में सहपाठी थे। जब उनकी शादी होने लगी, तो गाँव में एक बबण्डर-सा उठ खड़ा हुआ। यह विवाह सिर्फ अंतर्जातीय या अंतप्रांतीय ही नहीं, असवर्ण भी था। ललित बाबू 'ब्राह्मण' थे तो राधादेवी 'शूद्र' [28]

'देश भीतर देश' में विनय और असमीया युवती मिल्की का विवाह अंतर्जातीय विवाह का उदाहरण है। अलग जाति में विवाह करने के कारण विनय के माँ-बाप विवाह में सम्मिलित नहीं होते- विनय ने अपने माता-पिता को भी अपने शादी के मौके पर बुलाया था, लेकिन गैर-जाति में उसके शादी करने के कारण उन्होंने विवाह समारोह में शामिल होने से मना कर दिया था। माता-पिता के न होने की टीस उसे सता रही थी। असमिया रीति-रिवाज के अनुसार शादी से पहले लड़की लड़के के घर जाती है। और लड़के की माँ लड़की की माँग सिंदूर से भरती है। [27]

विवाहित स्त्री-पुरुष जब एक साथ जीवन व्यतीत करने में असमर्थ हो जाते हैं तब वे लोग वैवाहिक संबंध विच्छेद के लिए कानून का सहारा लेते हैं। इसी को तलाक कहा जाता हैं। तलाक में कभी स्त्री मानसिक और शारीरिक अत्याचार की शिकायत करते हुए संबंध विच्छेद की अर्जी देती है। परकीया प्रेम की वजह से भी तलाक होता है। पुरुष भी उपर्युक्त कारण से अपनी पत्नी से तलाक लेने की गुहार लगाता है। 'मिनाम' में मिनाम अपने अत्याचारी पति के शारीरिक और मानसिक अत्याचार से पीड़ित होकर उससे तलाक लेती है। मिनाम कहती है- कागज पर दस्तखत करने को कहा और मैंने काँपते हाथों से अपने गृहस्थ जीवन पर विराम लगा दिया और वह मुस्कुराते हुए दस्तखत करने लगा और बेबाक हो मुझ से कहने लगा, 'हम फिर मिलेंगे, यूँ समझो तुम कुछ साल की छुट्टी पर हो। [13]

शारीरिक और मानसिक अत्याचार को सहते हुए भी एक स्त्री तलाक लेने के पहले हजार बार सोचती है। बहुत सी स्त्रियाँ तो तलाक लेती भी नहीं। तलाकशुदा स्त्री को समाज गलत मानता है, उसकी कोई इज्जत नहीं करता, तरह-तरह के ताने कसता है। फिर अपने बच्चों से दूर हो जाने का डर भी स्त्री को तलाक लेने से रोकता है। साथ ही स्त्री की आर्थिक रूप से पराधीन होना भी उनके तलाक की पहल न करने के पीछे का एक कारण है। मिनाम अपनी तलाक के बाद इन्हीं समस्याओं का उल्लेख करते हुए कहती है- बात तलाक की है इसलिए कहती हूँ पति से शोषित पत्नियाँ 'तलाकशुदा' खिताब से बचने के लिए ताउम्र पीड़ा सहती हैं। अपने बच्चों से अलग कैसे रहे? समाज द्वारा दुत्कारी जायेगी... इस प्रकार के कई सवाल। फिर सौतेली माँ मेरे बच्चों पर अत्याचार करेगी, बच्चे भूखे होकर भी माँग नहीं पायेंगे, डर के साये में रहेंगे, जाने क्या-क्या। [13]

समाज का तलाकशुदा स्त्री के प्रति दृष्टिकोण व्यक्त करते हुए मिनाम कहती है- पुरुष का तो पता नहीं पर जब किसी स्त्री का तलाक हो जाता है तो उसे समाज हेय दृष्टि से देखने लगता है। लोगों की नजर में हमेशा शक भरा रहता है। [13]

तलाक पुरुष को इच्छित जीवन दे सकता है पर स्त्री के लिए वह एक दाग होता है, जिसे छुपाया नहीं जा सकता। मायके वाले एक बेटी की शादी करके सारे दायित्वों से मुक्त हो जाते हैं। तलाक के बाद बेटी को अपने घर में रखने के लिए पारम्परिक मध्यवर्गीय परिवार

राजी नहीं होता । तलाकशुदा स्त्री जीविका के लिए बाहर निकलती है तो सभी को उस पर फब्तियाँ कसने और गंदी नजर डालने की छूट मिल जाती है । मिनाम टिप्पणी करती है- स्त्री के संदर्भ में तलाक उन तमाम सपनों का टूटना होता है, और उसके बाद आजीवन उसे धब्बे के साथ जीना कि वह एक तलाकशुदा औरत है। [13]

तलाक के बाद स्त्री का जीवन सकारात्मक दिशा नहीं लेता, सुधरता नहीं बदतर हो जाता है, दर्द का अंत नहीं होता, दर्द की शुरूआत होती है। मिनाम कहती है- अब वो मायके के लिए बोझ हो जाती है। अपनी जीविका के लिए बाहर निकलो तो समाज की गंदी नजरों का सामना करना पड़ता है। [13]

'रूपतिल्ली की कथा' में भी रिंजा और अल्खा आवरी के तलाक का प्रसंग आता है। पर यह कोर्ट में लिया गया तलाक नहीं है । खासी परम्परा में तलाक की अपनी विधि है । इसी परम्परागत तरीके से रिंजा और अल्खा का तलाक होता है- उसके बाद एक दिन तय किया गया। जिस दिन अल्खा आवरी और रिंजा के मामा लोग बतौर गवाह उपस्थित हुए। पति-पत्नी दोनों अपने-अपने लिए पाँच-पाँच कौड़ी लेकर आये। उनके सामने अल्खा ने अपनी पाँचों कौड़ियाँ रिंजा के हाथ में रख दी। रिंजा ने उन्हें अपनी कौड़ियों के साथ मिलाकर अल्खा को वापस कर दिया। तब अल्खा ने उन दसों कौड़ियों को पुनः रिंजा को दे दिया, जिसने तुरंत उसे जमीन पर फेंक दिया। इसे देखकर उ नोङ पिरता श्रोङ पूरे गाँव में नगाड़ा बजाकर घोषणा करने लगा, 'सुनो सुनो सुनो!! का अलखा आवरी और उरिंजा गाँव के बड़े-बूढ़ों, विशेषतः अपने-अपने मामा की गवाही में और क्षियाङ की उपस्थिति में अलग हो गये हैं। का अल्खा आवरी अब अविवाहित हो गयी और उ रिंजा अविवाहित हो गया है। [9]

'मुक्ति' में मिस्टर कारनेल भारत के स्वतंत्र होने के बाद इंग्लैण्ड में बसना चाहता है और अपनी पत्नी मेडम शिएरी को साथ चलने को कहते हैं। पर शिएरी इंग्लैण्ड को लूटेरों का देश, अस्मत बेचने वाला कहकर इंग्लैण्ड जाने से इंकार कर देती है। ऐसी हालत में मिस्टर कारनेल तलाक लेना चाहता है। शिएरी भारतीय परम्परा के मुताबिक पति-पत्नी के संबंध को जन्म जन्म का बंधन कहती है। शिएरी कहती है कि मिस्टर कारनेल उसे छोड़ नहीं सकते- तुम भारतीय संस्कृति के उपासक बनते थे, तुमने ईसाई पद्धति के अनुसार मुझसे विवाह जरूर किया मगर बाद में इसी पंडित जी से भारतीय विवाह पद्धति के नियम भी सुनते- सुनाते रहे। ब्राह्म विवाह में पति द्वारा पत्नी से और पत्नी द्वारा पति से किए गए संवादों प्रणों के मंत्रों को तुमने जाने कितनी बार खुद पढ़ा था और मुझे भी पढ़वाया था। अब तुम यूं एक झटके से नाता तोड़ कर नहीं जा सकते। भारतीयता विवाह को जन्म जन्म का बंधन मानती है। वह निबाहने की सीख देती है, ढकेलने और तोड़ने की नहीं। वह सब तुम्हारे उसी शोषण और अत्याचार की धरती ब्रिटेन में ही चल सकेगा। ममता की धरती भारत में नहीं चल सकेगा यह । तुम मुझे छोड़ नहीं सकते। मुझे छोड़ कर तुम जा नहीं सकते। [6]

पंडित सुलोचन प्रसाद मिश्र मेडम शिएरी को समझाता है कि मिस्टर कारनेल के पास इंग्लैण्ड जाने के अलावा कोई दूसरा चारा नहीं है। अतः या तो वह मिस्टर कारनेल के साथ इंग्लैण्ड चली जाए या तलाक दे दें- उनकी नौकरी छूट चुकी है। ऐसे में बहुत दिनों भारत में यूँ ही पड़े पड़े उन्हें कितनी कठिनाई होगी। अतः या तो तुम उनके साथ इंग्लैण्ड चली जाओ या फिर उन्हें डिवोर्स देकर मुक्त कर दो। [6]

बाद में मेडम शिएरी मिस्टर कारनेल को तलाक तो दे देती है पर फिर से रो धोकर तलाक वापस ले लेती है। तलाक को मेडम शिएरी ने मजाक बना कर रख दिया है। इस प्रसंग द्वारा विवाह को लेकर भारतीय मान्यता क्या है इसका क्षीण आभास मिलता है।

हमारे देश के विभिन्न प्रदेशों में लड़की वालों से दहेज के तौर पर पैसे, विभिन्न सामान आदि लेने की प्रथा चली आ रही है। कानून इसे वर्जित करता है फिर भी ऐसी प्रथा आज भी जारी है। पूर्वोत्तर भारत के राज्यों में ऐसी अनेक जाति-जनजातियाँ हैं जिनमें लड़की को वधु के रूप में पाने के लिये लड़के वालों की तरफ से कुछ सामग्रियाँ देने की प्रथा है। अरुणाचल में ऐसी प्रथा है। मणिपुर में भी है। 'आहुति' में मणिपुरी समाज में प्रचलित ऐसी प्रथा का उल्लेख है- यहाँ तो लड़के के पिता को ही लड़की के पिता के पास जाना पड़ता है, अगर दहेज देना भी पड़े तो लड़के के पिता को ही देना है। [8]

'जंगली फूल' में भी वर पक्ष से विवाह शुल्क लेकर वधु देने का चित्रण है । सिमांग इसलिए अपने अत्याचारी पति को नहीं छोड़ सकती थी क्योंकि इससे उसे विवाह के वक्त जितना विवाह-शुल्क उसके ससुराल वालों ने मायके वालों को दिए थे वह लौटाना पड़ेगा और उसके मायके वाले ऐसा करने में असमर्थ अगर वह खुद पति को छोड़ देती है, तो उसको वे सारे मिथुन और सारा सामान वापस करना होगा जो उन लोगों ने उसके माँ-बाप को दिए थे। [11]

'जंगली फूल' में वधु पक्ष की तरफ से दहेज देने का उदाहरण सामने आता है। जीत के विवाह में उसके पिता ने दहेज देने का प्रयास किया था। पर जीत दहेज लौटा देती है। उपन्यासकार ने इस घटना को इतिहास रचने वाली घटना कहा है- लेकिन विदाई के दिन जीत ने इतिहास रच दिया। उसने सारे आभूषण, सारे मवेशी, सारी सम्पत्ति जो भी दिए गए थे उन्हें लौटा दिया । [11]

जीत फिर दहेज को विवाह के लिए अनावश्यक बताते हुए जो विचार प्रकट करती है वह उपन्यासकार की दहेज प्रथा को खत्म करने का आह्वान ही है- विवाह का मतलब यही सब कुछ तो नहीं होता! इनकी वजह से विवाह क्यों करें? यह दिलों को जोड़ने के लिए दिया जाता है, लेकिन असल में यही वह वजह है जिसके चलते दिल टूट जाते हैं। रिश्ते बेईमान हो जाते हैं। देने वाला अहंकार से भर जाता है। लेने वाला इंसान से नीचे गिर जाता है। दो दिलों का संगम है.... दो कबीलों का महामिलन है यह! यह ऐसी वैसी नहीं है जो इन सामानों से दिल बहला लिया जाए। दिलों का लेना-देना होगा अब से । [11]

पूर्वोत्तर की जातियों में वधु पक्ष का दहेज देने की अनिवार्यता या प्रथा नहीं है। मणिपुरी समाज भी इसका अपवाद नहीं है। 'मुक्तावती' में जब चंद्रावत तोम्बी सना के पिता श्री अचउ सिंह से शैलेंद्र के विवाह का प्रस्ताव लेकर जाता है, तब श्रीअचउ सिंह बंगालियों (क्योंकि शैलेंद्र बंगाली है) में दहेज प्रथा के कारण स्त्रियों की क्या दशा होती है यह व्यक्त करते हुए मणिपुरी समाज में ऐसी प्रथा के न होने पर गर्व प्रकट करते हैं।

और मुझे यह भी मालूम है कि बंगाल की अनेक रूपवती कुलीन कन्याएँ दहेज के अभाव में पति न मिलने पर अंत में चकलों की शरण भी लेती हैं। लेकिन मणिपुर की महिलाओं को ऐसा कभी नहीं करना पड़ता [3]

वर पक्ष की तरफ से विवाह शुल्क देने की प्रथा का उल्लेख 'मुक्तावती' में एक जगह इस प्रकार है- अक्सर विवाह के अवसर पर वर की ओर से कन्या के पिता को विवाह शुल्क के रूप में 'मिथुन' ही दिया जाता है। [3]

मिजो समाज में भी लड़के वालों को ही विवाह शुल्क देना पड़ता है। 'जहाँ बाँस फूलते हैं' में जब जोवा की शादी की बात पुई से होती है तब पुई का पिता दोला उससे पाँच हजार रुपये 'नुपुई मान' (विवाह- शुल्क) की शर्त रखता है। एक बूढ़ा कहता है- दोनों शादी करना चाह रहे हैं। नुपुई मान तय कर लेना ही ठीक है। [9]

इसी के जवाब में आगे पुई की माँ कहती है- पाँच हजार से कम क्या होगा। [9]

5.2.5 शिक्षा

शिक्षा का महत्त्व कोई नकार नहीं सकता। शिक्षा के द्वारा ही हम अपना जीवन बेहतर तरीके से जी सकते हैं। अपना भला-बुरा समझने के लिए शिक्षित होना बहुत जरूरी है । अंधविश्वासों से दूर रहने और आधुनिक जमाने के साथ चलने के लिए शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। शिक्षा के साथ हमारे शिक्षकों का अभिन्न संबंध रहता है। शिक्षक ही हमें शिक्षा देते हैं और किसी काबिल बनाते हैं। पर मनुष्य स्वभाव से ही सुविधाभोगी होता है। जो सुविधाएँ शहरों में प्राप्त हो सकती हैं, वह गाँवों में प्राप्त नहीं होती । यही कारण है कि गाँवों में नियुक्त बहुसंख्यक शिक्षक अपने कर्त्तव्यों का सही से पालन नहीं करते । 'मिनाम' में यामी की सहेली आजा ऐसे ही शिक्षकों की समस्या की ओर इशारा करते हुए कहती है- राज्य सरकार ने लगभग हर गाँव में शिक्षा का प्रबंध कर रखा है। पर दूर-दराज इलाकों में जिस किसी की शिक्षक को भेजते हैं, वो वहाँ रहता नहीं सरकार से वेतन तो लेते है पर काम नहीं करते हैं। [13]

यामी अपने ही गाँव मोदी गाँव में शिक्षिका बन कर आती है। उसके अलावा जो शिक्षक वहाँ नियुक्त था, वह बच्चों को पढ़ाता नहीं था। जब यामी उनसे मिलने गई तो वे बोले कि यामी को अपनी पढ़ाई पर ध्यान देना चाहिए। गाँव के बच्चे कहाँ स्कूल आते हैं। तब यामी उनसे सवाल करती है- आपने कोशिश की? सरकार ने आपको क्यों रखा है? आपके हर दिन ताश खेलने बैठने से बच्चे कैसे स्कूल आयेंगे? [13]

अपने कर्त्तव्य के प्रति यामी में निष्ठा है और इसी वजह से वह इस प्रकार किसी सीनियर से सवाल पूछती है। शिक्षा-दीक्षा समाज को बेहतर बनाता है। शिक्षित व्यक्ति और समाज को गढ़ने में अहम भूमिका निभाते हैं। अपनी प्रांतीय भाषा ही प्रांत को अभिव्यक्त करने का माध्यम हो सकता है। पर अंग्रेजी भाषा का इतना आतंक छाया हुआ है कि जो अंग्रेजी नहीं जानता वह शिक्षित ही नहीं माना जाता । अंग्रेजी सीखना गलत नहीं है। पर अपनी मातृभाषा को न समझ पाना कितना अधिक लज्जाजनक है यही बताने की जरूरत नहीं है। यदि इस असमर्थता में गर्व का भाव भी मिला हो तो लज्जा की कोई सीमा नहीं रहती । 'जय आइ असम' में उपन्यासकार ने टिप्पणी की है किस प्रकार असम के एकांश लोग अपने बच्चों को अंग्रेजी माध्यम के विद्यालय में पढ़ाकर आनंदित हैं और साथ ही अपने बच्चों की असमीया भाषा बोलने की असमर्थता को गर्व के साथ सुनाते हैं । उपन्यासकार का सवाल है कि ऐसे लोगों द्वारा असमीया भाषा सभ्यता-संस्कृति का क्या विकास होगा- विश्वविद्यालय में असमीया माध्यम हुआ लेकिन, आज कितने लोग असमीया माध्यम अपनाते हैं? इधर अंगरेजी स्कूलों की बाढ़ आयी हुई है। हर असमीया आज अपने बच्चे को कान्वेटों में प्रवेश दिलाकर गर्वित होता है, 'बच्चे अपनी मातृभाषा असमिया नहीं समझ पाते', कहने में उनकी छाती फूल उठती है। 'दूसरे लोग असमिया पढे, हम असमिया छोड़े', यही भाव जिनके मन में है, उनसे जाति, भाषा संस्कृति की प्रगति से क्या आशा की जा सकती है। [15]

स्वतंत्रता के पूर्व असम के युवक उच्च शिक्षा के लिए कोलकाता ही जाते थे। कॉटन कॉलेज 1901 ई. में स्थापित हुआ था। पहले यह कलकत्ता विश्वविद्यालय के अंतर्गत था। फिर जब 1948 ई. में गौहाटी विश्वविद्यालय स्थापित हुआ, तब यह गौहाटी विश्वविद्यालय के अंतर्गत हुआ। 'ब्रह्मपुत्र' में देवकांत कोलकाता से ही उच्च शिक्षा लेकर आता है- देवकांत तो कलकत्ता से पढ़कर आया है। [25]

'ब्रह्मपुत्र' में देवकांत की तरह नारायण दरोगा का बड़ा लड़का कोलकाता में पढ़ रहा था। कोलकाता की तरह गुवाहाटी भी शिक्षा का केंद्र बन गया था। नारायण दरोगा का छोटा लड़का गुवाहाटी में पढ़ रहा था- उसका बड़ा लड़का कलकत्ता में वकालत पढ़ रहा था....छोटा लड़का गोहाटी में पढ़ रहा था। दो वर्ष पहले उसे गोहाटी के कॉलिज में प्रविष्ट कराया था। [25]

इन उद्धरणों से पता चलता है कि स्वतंत्रता पूर्व असम में उच्च शिक्षा का प्रचार होने लगा था। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपनी पुस्तक 'हिंदी साहित्य: उद्भव और विकास' में ईसाई मिशनरियों की भारत में शिक्षा के प्रचार-प्रसार के संबंध में लिखा है- इन ईसाई मिशनरियों का प्रधान उद्देश्य ईसाई धर्म का प्रचार करना था। यह कार्य उन्होंने बड़ी लगन, तत्परता और सूझबूझ के साथ किया। उन्होंने सबसे पहले देश की जनता को समझने का प्रयत्न किया। उनके कई प्रचारक सचमुच ही महाप्राण व्यक्ति थे। उन्होंने देश की विभिन्न भाषाओं का अध्ययन किया, उनकी लिपियों के लिए टाइप ढलवाए देश के विभिन्न भागों में स्कूल, कॉलेज, चिकित्सालय आदि लोकोपकारी संस्थाओं की स्थापना की, और इस प्रकार देश की जनता को अपने अनुकूल बनाने का प्रयत्न किया। [5]

पूर्वोत्तर में भी ईसाई मिशनरियों ने शिक्षा-दीक्षा दिलाकर पूर्वोत्तर के जनजातीय लोगों पर प्रभाव डालने और इस प्रभाव का फायदा उठाकर धर्म प्रचार करने का प्रयास किया है। यह क्रम लम्बे समय से चला आ रहा है। हालाँकि धर्म प्रचार ही उनका मुख्य उद्देश्य रहा है परंतु इसी बहाने पूर्वोत्तर में शिक्षा का प्रचार भी हुआ है। 'जहाँ बाँस फूलते हैं में अनाथ दोला को पादरियों ने ही पाला-पोसा और शिक्षित किया- दोला बारह साल का हो गया, तब भी पाँच साल का ही दीखता था। गाँव में नया पादरी आया और दोला को देखा तो तरस आ गई। अपने पास उठने-बैठने की इजाजत दे दी। चर्च में पूजा का बर्तन साफ करने का काम सौंप दिया। बदले में भोजन और पढ़ाई। भोजन से उसे जितना सुख मिलता था, पढ़ाई उतनी ही कटखन्नी पिल्ली लगती थी। किंतु पादरी की पिटाई ने इतना अवश्य ठोंक बजा दिया, इतना अवश्य कड़ा कर दिया कि आइजल के एकमात्र प्राइमरी स्कूल से प्राइवेट परीक्षा दे पाँच पास कर ले। फिर उस पादरी ने उसे आगे की पढ़ाई के लिए एक बड़े पादरी को सौंप दिया। [9]

'मुक्ति में पंडित सुलोचन प्रसाद मिश्र के द्वारा अपने क्षेत्र सिलचर में बहुत से स्कूल खोलने की योजना बनते दिखाया गया है। इससे यह पता चलता है कि स्वतंत्रता से पूर्व भी एकांश लोग असम के बराक उपत्यका में शिक्षा के प्रचार का प्रयास कर रहे थे। पंडित जी की योजना कुछ इस प्रकार की है- हमने निश्चय किया है कि हर दो-दो मील की दूरी पर जो-जो गाँव हैं, वहाँ वहाँ हम एक-एक अपर प्राइमरी स्कूल खोलेंगे। इस स्कूल के लिए जमीन उसी गाँव का वह आदमी देगा, जिसके पास उस गाँव में सबसे अधिक जमीन होगी। उसके अलावा अगर कोई स्वेच्छा से और जमीन देना चाहेगा, तो वह भी स्कूल के नशे में शामिल कर ली जाएगी। [6]

इन स्कूलों के लिए शिक्षक का प्रबंध उन शरणार्थी युवक-युवतियों में से करने का निश्चय किया जाता है जो शिक्षित हैं- भवेंद्र सिंह ने सुझाव दिया कि इधर जो ढेर सारे शरणार्थी आ गए हैं, उनमें से अनेक युवक- युवतियाँ पढ़े-लिखे हैं। कितने तो युवक हैं मगर एक वृद्ध

भी ऐसे हैं जो अपने यहाँ अध्यापन करते रहे थे। देश के बँटवारे से उनका घर-बार भी छूटा और अध्यापन का व्यवसाय भी । अतः यहाँ शिक्षा के प्रचार-प्रसार में उनकी भी मदद ली जानी चाहिए। [6]

सुलोचन प्रसाद मिश्र चाय बागानों में भी स्कूल खोलना चाहते हैं। सुखई राम धोबी कहता है- परंतु अपने अंग्रेज साहब से कहकर नवो बागानों में नी स्कूल बनवाने के लिए जोर वे खुद डाले। [6]

सुलोचन प्रसाद मिश्र अपने स्कूल खोलने के निश्चय में मदन मोहन मालवीय जी से प्रेरणा पाता है- एक क्षण को उन्हें लगा कि जैसे मालवीय जी उन्हें बार-बार पुकार-पुकार कर कह रहे हैं। "स्वतंत्रता की लड़ाई पूरी हुई। अब स्वतंत्र राष्ट्र के नागरिकों को शिक्षित करने की जरूरत है। शिक्षित नागरिक ही देश को महान बना सकते हैं। [6]

इस उद्धरण से इतना तो पता चल ही जाता है कि शिक्षा राष्ट्र के निर्माण के लिए कितना आवश्यक है।

जात-पाँत की समस्या भारत की सदियों पुरानी समस्या है। कुछ जाति अपने आप को अन्य जातियों से ऊँचा मानती आई हैं। वे नीची जातियों में विवाह आदि नहीं करते। अधिकतर जातियाँ विवाह संबंध अपनी ही जात में करती हैं। 21वीं सदी में भी यह मानसिकता खत्म नहीं हुई है। 'ब्रह्मपुत्र' में उल्लेख आता है कि दिसॉंगमुख के मीरी सम्प्रदाय के लोग अपनी जात में ही विवाह करते हैं- दिसाँगमुख में आधे तो मीरी रहते हैं, जो अपने मीरी लोगों में ही विवाह करते हैं। [25]

सिर्फ मीरी ही नहीं दिसॉंगमुख के नेपाली, असमीया यहाँ तक कि मछुए और नावरिया (माझी) भी अपनी जात में ही विवाह करते है- अब यह तो पुरानी रीति ठहरी नेपाली का विवाह नेपाली लड़की से ही होगा, असमिया का असमिया से, यहाँ तक कि मछुए और नावरिया भी हमेशा अपनी-अपनी जाति में ही विवाह करते हैं। [25]

मणिपुरी राजा अपने को अर्जुन पुत्र बभ्रुवाहन का वंशज मानते थे । परंतु बहुत से इतिहासकारों ने कूकी जाति का माना है। मणिपुर के राजा 'नागा- कूकी' जाति को अस्पृश्य और मणिपुरियों को 'नागा-: अछूत मानते थे । 'मुक्तावति में ये सारी बातें आई हैं- अनेक इतिहासकार मणिपुरियों को 'नागा कूकी' जाति का मानते हैं। किंतु मणिपुर नरेश के संरक्षण में लिखे जा रहे इतिहास में इस बात को परम असत्य मानकर अतिशय क्रोध प्रकट किया गया है । और वर्तमान राजवंश का संबंध सीधे अर्जुन पुत्र बभ्रुवाहन से जोड़ा गया है। जाति रूप से नागा- कूकी अछूत हैं, अस्पृश्य हैं। अतः इस पवित्र राज-वंश का नागाओं से संबंध जोड़ा जाना राज-वंश की दृष्टि से घोर अपराध माना गया। [3]

'नागा- कूकी' जाति को अछूत माना जाने का उल्लेख तब भी होता है जब अचउबा शर्मा मणिपुर नरेश को निम्नलिखित उद्धरण कृष्णमाधव द्वारा दिया गया भाषण कहकर भड़काने का प्रयास करता है- वास्तव में मणिपुर नरेश की धमनियों में भी उन्हीं नागाओं का रक्त प्रवाहित हो रहा है जिन्हें बड़ी कृतघ्नता और निर्लज्जता से महारज के पूर्व पुरुषों ने अछूत और अस्पृश्य बना दिया । [3]

'मुक्तावती' में नागाओं को अछूत मानने का एक और जगह उल्लेख मिलता है- दर्शकों में कुछ मणिपुरी हिंदू भी थे, जो अछूत नागाओं के शरीर संपर्क के भय से जरा दूर-दूर खड़े थे। [3]

ईसाई पादरी नागाओं को अछूत वर्ग से निकलने का उपाय शिक्षा प्राप्त कर बड़ा पद प्राप्त करने को बताते थे। इसके पीछे नागाओं को ईसाई बनाने की मंशा भी थी। 'मुक्तावती' में एक नागा पात्र अपने मित्रों को एक पादरी की इस आशाय की एक बात बताता है- पादरी साहेब हमको बोला- 'चल बेटा पढ़ हमारे इस्कूल में पढ़ कर बड़ा बनेगा । और तब हिंदू लोग तुमको अछूत नहीं बनाने सकेगा। तुमसे हाथ मिलायेगा। [3]

प्राचीन काल से ही भारत में वर्ण व्यवस्था का प्रचलन रहा है। प्रसिद्ध आलोचक शंभुनाथ ने वर्ण व्यवस्था के बारे में लिखा है- यह भी सच है कि जिस भारत में दार्शनिक स्तर पर अद्वैतवाद की घोषणा हुई, वहाँ सामाजिक स्तर पर सदियों से कठोर वर्ण व्यवस्था मौजूद रही है। [26]

परम्परावादी लोग आज भी ब्राह्मण को ऊँचा और शूद्र को नीचा मानते हैं। पर पूर्वोत्तर में वर्ण- व्यवस्था उतनी कठोर नहीं है । 'ब्रह्मपुत्र' में आरती देवकांत से अपने संबंध की बात सोचती है कि अगर देवकांत चाहेगा तो मछुआ बन सकता है। पर आरती को कभी देवकांत के घर वाले बहू स्वीकार नहीं करेंगे, क्योंकि आरती मछुआ है अर्थात् शूद्र और देवकांत ब्राह्मण- ब्राह्मण का लड़का चाहे तो मछुआ बन सकता है, पर मछुए की कन्या तो इस जन्म में ब्राह्मण की बहू बनने से रही। [26]

मणिपुर में दो ही वर्ण हैं- ब्राह्मण और क्षत्रिय । क्षत्रिय मणिपुर के मूल निवासी है, ब्राह्मण बंगाल या मिथिला से आए । मइतेइयों ने ब्राह्मणों को अपने समाज का हिस्सा बनाया। ब्राह्मणों ने अपनी संख्या बढ़ाने के लिए यह नियम बनाया कि मइतेइ युवती के गर्भ से जन्मा ब्राह्मण युवक की संतान ब्राह्मण होगी है। ब्राह्मण कन्या से मइते युवक विवाह नहीं कर सकते- मणिपुर के वर्तमान हिंदू समाज के मुख्यतः दो अंग हैं- ब्राह्मण और क्षत्रिय (मइतेइ) । ब्राह्मण मुख्यत: बंगाल या मिथिला से आये। वे क्रमशः मइतेइ कन्याओं से विवाह सूत्र में बँधने लगे । अपने जातित्व की सुरक्षा के लिए, अपनी संख्या की अभिवृद्धि के लिए उन्होंने यहाँ नया नियम चालू किया 'ब्राह्मण वीर्य से मइतेइ कन्या में उत्पन्न संतान मइतेइ न होकर ब्राह्मण होगी। और ब्राह्मण कन्या से कोई मइतेइ युवक विवाह न कर सकेगा। [3]

'मुक्तावती' में शैलेंद्र को जब हरेंद्रनाथ चट्टोपाध्याय की पुत्री से संबंध का प्रस्ताव आता है और तोम्बी सना से अपने प्रेम के कारण इस संबंध को अस्वीकार करने के लिए अनिलकुमार घोष की बैठक में बैठें चारों बंगाली भद्रजनों के बहस का सूत्र पकड़ते हुए यह कहता है कि वह मइतेइ घर में भात खाता है अत: अब वह ब्राह्मण नहीं रहा, अतः हरेंद्रनाथ चट्टोपाध्याय महाशय एक अब्राह्मण से अपनी पुत्री का विवाह नहीं करायेंगे, तब इस समस्या का समाधान करते हुए उन्हीं भद्रजनों में से एक तर्करन कहता है- ब्राह्मणत्व और कुलीनता कोई वैसी वस्तु नहीं शैलेन बाबू कि किसी का भात खाते ही नष्ट हो जाय । 'मइतेइ' ब्रात्य (पतित) क्षत्रिय अवश्य है, किंतु यत्किंचित् प्रायश्चित कर लेने से ही काम चल जायगा। [3]

इस उद्धरण में ब्राह्मणों के वर्णगत उच्चता का दम्भ और दूसरे तथाकथित वर्णों को नीचा समझने की मानसिकता भी उजागर होती है । ब्राह्मणों द्वारा मणिपुरी समाज में फैलाए गए वर्ण-भेद को सुधारने पर ही भविष्य में जातिवाद का जहर फैलने से रोका जा सकता है।

'मुक्तावती' में शैलेंद्र यह बात कहता है- उन्होंने (मणिपुर में बसे ब्राह्मणों ने) मणिपुरी समाज को अपना कर भी यहाँ वर्ण-भेद और जाति-भेद को प्रोत्साहित किया। मैं उसी भेद को मिटाना चाहता हूँ ताकि यहाँ ब्राह्मणों और मइतेइयों का पास्परिक जातिजन्य विद्वेष कायम न रह जाय। भविष्य में जाति-वाद का जहर इनमें फैल न सके। [3]

मणिपुरी ब्राह्मणों ने ब्राह्मण कन्या का मइतेइ युवक के विवाह निषिद्ध कर रखा था। परंतु 'मुक्तावती' उपन्यास में वृंदासखी जो ब्राह्मण कन्या है उसने मइतेइ युवक गोविंद से प्रेम किया। उसके बाद जो परिस्थिति उत्पन्न हुई उसका वर्णन निम्न प्रकार है- प्रणय के उन मदोत्तेजित नेत्रों में मानव की सजातीयता के सिवा और कुछ रहा नहीं। लेकिन उनकी इस सजातीयत सम्भावना से उत्पन्न वह प्रणय-व्यापार जब खुले आम वर्ण-मर्यादा को चुनौती देने चला तो मर्यादा के महल में खलबली भी मच गई और उस महल के मजबूत खम्भे मानो प्रबल भूकम्प के आघात से हिल उठे [3]

'मुक्तावती' में ही जब गोविंद अचउबा शर्मा को भी मइतेइ माँ के गर्भ से उत्पन्न होने के कारण मइतेइ कहकर उसके और अचउवा शर्मा के स्तर को समान कहता है तब अचउवा शर्मा उसे उत्तर देते हुए कहता है कि ब्राह्मण वीर्य से उत्पन्न संतान ब्राह्मण ही होती है। इसलिए मइतेइ माता से उत्पन्न हुआ कहकर अचउवा शर्मा को गोविंद अपने बराबर नहीं मान सकता। अचउवा शर्मा ब्राह्मण है और गोविंद से ऊँचा है- यह सोच ले गोबिंद कि ब्राह्मण आखिर ब्राह्मण है। सभी जातियों में श्रेष्ठ। तुझे न भूलना चाहिए कि मइतेइ कन्या में ब्राम्हण वीर्य से उत्पन्न ब्राह्मण संतान में ब्राह्मण रक्त की प्रधानता होती है। अतः जाति रूप से ब्राह्मणों से समता का तेरा दावा सिवा उच्छृंखलता तथा धृष्टता के और कुछ नहीं। [3]

अपराध वह है, जो सामाजिक और मानवीय तौर पर अहितकर हो। अपराधी की मानसिकता विकृत होती है। हत्या, चोरी, लूट, बलात्कार, अपहरण आदि प्रमुख अपराध हैं। धार्मिक आधार पर भी अपराध विवेचित होते हैं। अपराध करने वाले को दण्ड देने के लिए समाज में कानून बनाये जाते हैं। फिर भी लोग अपराध करने से बाज नहीं आते। या तो अपराधी को दण्ड मिलने का डर नहीं होता या वे सोचते है कि कानून की किसी कमजोरी का सहारा लेकर वे बच जायेंगे।

भारत विभाजन के समय भारत में साम्प्रदायिक दंगे हुए थे। उन दंगों में भयानक मार-काट मची थी। दंगाई गैर धर्म की महिलाओं के साथ बलात्कार करते थे, धर्म परिवर्तन कराने की कोशिश भी करते थे और हत्याएँ भी। ये भयानक अपराध थे। पर उन अपराधियों को दण्ड नहीं दिया जा सका। 'मुक्ति' में भी नवजात मुक्ति की माँ सुक्ता देवी के साथ दंगाई पहले तो बलात्कार करने का प्रयास करते हैं और बाद में नृशंसता के साथ हत्या कर देते हैं। निम्नलिखित उद्धरण में इसी प्रसंग का और अपराधियों की गंदी मानसिकता का पता चलता है-

5.2.6 दास प्रथा

'दे दाव रे। साली को अपने जोबना का बड़ा गुमान है, दे दाव बताता हूँ।' इतना कहकर ही दाब ले याकूब ने बड़े जोर से छाती पर वार किया और एक ही बार में एक स्तन कटकर गिर गया। उसके कटते ही पुजारिन बेहोश हो गई। फिर भी उसने उसी तरह दूसरे झटके में उसका दूसरा स्तन भी काट लिया और बड़बड़ाया 'साली आई थी हरामी जनने। दूध पिलाएगी साली हमारी के पिल्लों को [6]

भारतीय समाज व्यवस्था में दास प्रथा का प्रचलन था । आधुनिक युग में इस प्रथा की विलुप्ति हुई है। 'जंगली फूल' में दास प्रथा के संदर्भ मिलते हैं। तानी कबीले के पिंज की पत्नी युद्ध में जीती गई दासी ही थी । तानी की दूसरी पत्नी याई को विवाह के समय पिता से बहुत सी दास-दासियाँ मिली थीं । दास-दासियों का जीवन स्वामी के इच्छानुसार चलता था। दासियों ने तो तानी कबीले के पुरुषों से विवाह भी किया था। फिर भी पति का उन पर अधिकार नहीं था। वे याई की दासियाँ थीं। अतः याई का ही उन पर अधिकार था- याई की दासियाँ थी; अपने पतियों की नहीं [11]

जब याई तानी को त्यागकर जाने वाली होती है, तब उसकी दास-दासियाँ भी उसी के साथ जाने को बाध्य होते हैं- याई अपने दास-दासियों और सभी सम्पत्ति को लेकर चली गई। [11]

भारतीय परम्परा में अतिथि को देवता माना जाता है । 'अतिथि देवो भवः' प्रसिद्ध भारतीय उक्ति है। आधुनिक काल में शहरों में अतिथि सत्कार की परम्परा अब उसी प्रकार विद्यमान नहीं है। गाँव-देहात में अब भी अतिथि के सत्कार में अपना सारा सामर्थ्य झोंक दिया जाता है। पूर्वोत्तर भी इस मामले में पीछे नहीं है। यहाँ अपरिचित लोगों का भी अतिथि सत्कार किया जाता है। 'रूपतिल्ली की कथा में खासी समाज की अतिथि परायणता का उल्लेख मिलता है। इस उपन्यास में अंग्रेजों के समय के मेघालय का चित्रण है। इसमें राफताब के सफर के संदर्भ में उपन्यासकार ने लिखा है- गाँव के लोग बड़े भले थे। बिना नाम ठिकाना पूछे ही अच्छा से अच्छा भोजन कराते थे । जानते थे जो भी आया है, भूखा प्यासा है। [9]

'सियांग के उस पार' में भी विक्रम और निसमी नियामदिंग तक के पैदल सफर में कई रातें अलग- अलग लोगों के घरों में गुजारते हैं। भोजन और आश्रय देकर गृहस्थ उनका सत्कार करते हैं। अतिथि सत्कार में पूर्वोत्तर के लोग किसी से पीछे नहीं हैं। 'देश भीतर देश' में विनय की रात में गाड़ी खराब हो जाती है। वह एक असमीया घर में आश्रय ग्रहण करता है। गृहस्थ भोजन और छत देकर उसका सत्कार करता है। जब विनय सुबह पैसे देने का प्रयास करता है, गृहस्थ पैसे लेने से इनकार कर देता है, और विनय को असमीया गमछा भेंट करता है- वह जब चलने लगा तो उसने अधेड़ व्यक्ति को सौ-सौ के दो नोट निकालकर देने की कोशिश की। लेकिन पूरी विनम्रता के साथ उसने हाथ जोड़कर उन्हें लेने से मना कर दिया। उल्टे उसे अपने हथकरों से बना असमिया गमछा, जिसमें लाल रंग की दोनों तरफ कढ़ाई होती है, उसे सम्मान स्वरूप भेंट किया। [27]

'जहाँ बाँस फूलते हैं' में माइकल को मारने के लिए बागी आते हैं। माइकल डोपा गाँव के उत्सव में अतिथि के तौर पर आता है। गाँव के कुछ प्रमुख लोगों को जब बागियों के इस इरादे का पता चलता है, तब वे कहते हैं- माइकल हमारा अतिथि है।......उसकी सुरक्षा की जिम्मेदारी हमारी है। [9]

इस पर बागी कहते हैं कि नृत्य के दौरान नहीं मारेंगे। नृत्य बंद होते ही मार देंगे। उसके बाद मालसोमा का इशारा समझ कर गाँव वाले नाचते ही रहते है और बागियों को हार मानकर चले जाना पड़ता लगता था अगली थाप पर उँगली फट जाएगी। पर नाचना गाना कम न हुआ। बागी भी समझ गए और मालसोमा को दुश्मन मानकर चले गए। [9]

पूर्वोत्तर के राज्यों ने बाहरी लोगों को भी अपनाया। पर धीरे-धीरे बाहरी लोगों के प्रति यहाँ के लोगों के मन में आक्रोश भाव पनप गया है। इसका सबसे सशक्त उदाहरण 1979-1985 के बीच होने वाला असम आंदोलन है । 'आहुति' में दो बहिराज्य के लड़कों को मणिपुरी लड़कियों से दोस्ती बढ़ाने के कारण कुछ स्थानीय युवक पीटकर मणिपुर से बाहर चले जाने का आदेश सुना देते हैं। इस प्रसंग में जब मनोज जिज्ञासा करता है तब नवीन शर्मा उसे बताता है- यहाँ के नवयुवकों को यह पसंद नहीं कि मनिपुर की लड़कियाँ बाहर वालों के साथ दोस्ती करे, हिले-मिले या मिले-जुले। इसके प्रति तीव्र प्रतिक्रिया होती है। [8]

इसके पीछे का कारण मणिपुर का इतिहास देता है। मणिपुरी इतिहास के विद्वान हेमचंद बाबू नवीन शर्मा और मनोज के सामने बाहरी लोगों के प्रति आक्रोश का कारण बताते हैं- इम्फाल पर भी जापानी बम गिरने लगे। लोग प्राणों की सुरक्षा के लिए शहर छोड़ भागने लगे। उस समय इन विदेशी सैनिकों (अंग्रेज सैनिकों) का व्यवहार बड़ा बुरा था । इन्होंने मनिपुर के समाज में स्त्रियों के खुले व्यवहार तथा भोलेपन का और युद्ध की स्थिति का नाजायज लाभ उठाया। उन्होंने बहुत बड़ी संख्या में महिलाओं का शोषण किया। पूरे समाज ने इस आघात को विवशता के साथ देखा, पर वे भूल नहीं सके। [8]

फिर वे आगे कहते हैं- इसके बाद से ही मनिपुरी समाज में यह भावना घर कर गई कि बाहर वाले यहाँ स्त्रियों का शोषण करने के लिए ही मित्रता करते हैं। पीढ़ी दर पीढ़ी यह भावना बहती रही और आज इस रूप में प्रगट हो रही है। [8]

5.2.7 नशाखोरी

नशाखोरी समाज के लिए एक बड़ी समस्या है। यह समाज में कई समस्याओं को जन्म देता है । नशाखोरी के कारण घरेलू हिंसा के हजारों मामले हर वर्ष सामने आते हैं। शराब पीना नशा करने का प्रमुख साधन है। पर ड्रग लेना भी नशाखोरों का प्रिय साधन है। आज पूरी दुनिया को ड्रग ने अपने कब्जे में ले लिया है। पूर्वोत्तर भारत में भी नशाखोरी की सैकड़ों घटनाएँ मिलती हैं । 'आहुति' में मनोज और चानु जब 'लेकविऊ रेस्ट्रॉ' में कॉफी पी रहे होते हैं तब उनको एक युवकों का दल रेस्ट्रों में ही सिरिंज के द्वारा ड्रग लेते हुए दिखते है- उनमें एक लड़का एक सिरिंज अपनी बाँहों में घोंप रहा था। उसके बाद उसने बगल वाले लड़के को सिरिंज बढ़ा दिया। उसने भी उसी तरह से सिरिंज अपनी बाँहों में लगाया। बारी- बारी से चारों ने अपनी-अपनी बाँहों में सूई ली। मनोज समझ गया, ये ड्रग ले रहे है। [8]

नशाखोरी का घरेलू हिंसा से सीधा संबंध है। इसकी तरफ संकेत करते हुए चानु कहती है- यहाँ शराब तो पहले ही बहुत पीते थे अब नई पीढ़ी के लोग ड्रग लेने लगे हैं। इन सब को स्त्रियों को ही भुगतना पड़ता है। [8]

पूर्वोत्तर के बहुत से समाजों में शराब बनाना और पिलाना आम रिवाज है। पर वे विदेशी शराबों की तरह उतने हानिकारक नहीं होते । 'जहाँ बाँस फूलते हैं का वियाकबेला शांति के दिनों की याद में अपने को स्थानीय शराब के नशे में डुबो देता है-और शांति अब सम्भव नहीं थी और जो उसकी मारकशक्ति को कमजोर बनाते थे- पनाह पाने के लिए अपने को स्थानीय शराब में डूबो देता। [9]

असली भारत गाँवों में बसता है। भारत में शहर तो मुट्ठी भर है, बाकी तो गाँव ही हैं और भारतीय सभ्यता-संस्कृति की विशेषताएँ गाँवों में ही सुरक्षित हैं। भारत को कृषि प्रधान देश कहना इसी का प्रमाण है। परंतु हमारे अधिकतर गाँव समृद्ध नहीं हैं। यहाँ शिक्षा की व्यवस्था, साफ-सफाई की व्यवस्था, जीवन के मानदण्ड निम्नकोटि के हैं। पूर्वोत्तर में कुछ ही शहर हैं, शेष गाँव हैं। ये गाँव अपने निवासियों

को रोटी, कपड़ा और मकान देने में असमर्थ होते जा रहे हैं। यही कारण है कि लोग शहरों की तरफ भाग रहे हैं। शहरों में मेहनत-मजदूरी, छोटी-छोटी नौकरियों की सम्भावना भी अधिक है। 'मिनाम' में यामी ऐसे एक पिछड़े अरुणाचली गाँव का तस्वीर प्रस्तुत करती है। वहाँ उसे कपड़ों का अभाव दिखता है। शिक्षा के लिए बना स्कूल खण्डहर हो गया है। यामी बहुत भावुक किस्म की युवती है। गाँवों की ऐसी हालत देखकर वह बेचैन हो जाती है और इन गाँवों के लिए कुछ करना चाहती है। वह अपनी सहेली आज्ञा से कहती है- जिस गाँव में कैम्प हुआ, वो बहुत पिछड़ा हुआ है। बच्चे नंगे घूम रहे थे। साफ-सफाई नाम की कोई चीज वहाँ नहीं है। जानवरों के बीच यह इतनी गंदी हालत में रह रहे हैं। कई लोग बीमर हैं, पर चिकित्सा का कोई प्रबंध नहीं है। कुत्ते और बच्चे एक साथ खा रहे थे। सरकारी प्राथमिक स्कूल की बिल्डिंग जंगल में खण्डहर सी हो गई, ऐसा लगता है कि वह काफी सालों से बंद पड़ा था।.... किसी भी घर में शौचालय नहीं है। [13]

यामी पिछड़े गाँवों को उन्नत करने का एकमात्र तरीका शिक्षा को मानती है। वह कहती है- सुधारने का एक ही तरीका है, शिक्षा [13]

इन पिछड़े गाँवों तक जाने के लिए रास्ते भी नहीं हैं जिन पर गाड़ियाँ चल सके। अरुणाचल में स्वतंत्रता के काफी समय बाद तक यातायात के लिए अच्छी सड़कों का निर्माण नहीं हो पाया था। अब स्थिति कुछ बेहतर है। यामी कहती है- मोई (मासी) कहती है, वहाँ जाने के लिए कोई साधन ही नहीं है। आने-आबो (माँ-पिता) भी इसलिए नहीं आ पाते। उन्हें दो-तीन दिन तक पैदल चलना पड़ता है। [13]

'सियांग के उस पार' में भी विक्रम और निसमी में यातायात की इसी समस्या से जूझते हैं।

पूर्वोत्तर भारत में भी देश के शेष भागों की तरह हिंदी फिल्में बहुत लोकप्रिय हैं। हिंदी फिल्मों का यहाँ क्रेज है। पूर्वोत्तर की भाषाओं में भी कई फिल्में हर साल बनती हैं, पर उनकी संख्या अपेक्षाकृत तौर पर बहुत कम है। असमीया में 1935 ई. में 'जयमती' फिल्म बनी थी। इससे स्पष्ट हैं कि पूर्वोत्तर की भाषाओं फिल्म निर्माण की दीर्घ परम्परा है। 'मिनाम' में जब यामी किसी गाँव में कैम्प करने के बाद उदास रहने लगती है तब उसकी सहेली आजा उसी दिन उसके पास आती है और किसी पुरानी हिंदी फिल्म का गीत गुनगुनाने लगती है- 'गुम है किसी के प्यार में....ल...लला... ला। [13]

यह हिंदी फिल्मों के गीतों की लोकप्रियता और प्रभाव ही है कि पूर्वोत्तर के लोग अवकाश के समय पर किसी भी समय कोई हिंदी फिल्मी गीत या उनकी धुन गुनगुनाते लगते हैं। यामी अपने मोदी गाँव में शिक्षिका की नौकरी करने लगती है। वहाँ की औरतों के बारे में वह एक बात गौर करती है कि यह गाँव की अशिक्षित महिलाएँ भी हिंदी फिल्मों के गीत गुनगुनाती रहती है। भले ही उसका अर्थ उन्हें न पता हो

ताजुब की बात है कि जो कभी भी शहर नहीं गई, वे स्त्रियों पुरानी हिंदी फिल्मों के गाने बहुत अच्छी तरह से गाती है। यह बात अलग है कि उन्हें उसके अर्थ का पता नहीं होता। शायद इसलिये वे कभी-कभी कुछ शब्दों के उच्चारण में गलती कर बैठती हैं।[13]

5.3 कहानियों में चित्रित पूर्वोत्तर भारत का सामाजिक जीवन

हिंदी कहानियों में पूर्वोत्तर भारत के सामाजिक जीवन की झाँकी मिलती है। निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत हम हिंदी कहानियों में चित्रित पूर्वोत्तर भारत के सामाजिक जीवन का विवेचन करेंगे-

5.3.1 स्त्री की स्वतंत्रता

पूर्वोत्तर में स्त्री का स्थान बहुत सम्मान जनक है। मणिपुर में ईमा बाजार और लक्ष्मी बाजार पूरी तरह से महिलाएँ ही चलाती हैं। यहाँ की स्त्री काफी स्वतंत्र है। रीतामणि वैश्य की 'लोकटाक कब तक !" कहानी में मणिपुर की स्त्रियों की स्वतंत्रता पर निम्नलिखित टिप्पणी की गई है-

मणिपुर में नारी का स्थान बहुत ऊँचा है। वह पुरुष के समान, बल्कि उससे आगे रहती है। ईमा मार्केट मणिपुरी महिलाओं के अधिकार और स्वतंत्रता का साक्षी है। इस बाजार का पूरा नियंत्रण औरतों के हाथों में होता है। यहाँ की लड़कियों को शादी के लिए मजबूर नहीं होना पड़ता। अपनी पसंद के लड़के को जीवन साथी के रूप में चुनने का उसे पूरा अधिकार होता है [16]

रितातामणि वैश्य की 'आस्था' कहानी में मनीषा के साथ मानस के बलात्कार की कोशिश के बाद जब अपना मुँह बंद रखने के लिए मानस का वकील मनीषा को पैसों का लालच देता है तब मनीषा कहती है- जो इज्जत लूट ली गई, भरपाई ले लेने से वह वापस तो नहीं आयेगी। (16)

आधुनिक युग की स्त्री अपनी स्वतंत्रता के लिये लड़ना जानती है। उपर्युक्त उद्धरण में एक स्त्री के अपने साथ हुये अन्याय का प्रतिदान लेने की दृढ़ता इसी बात का प्रमाण है।

स्त्री के लिए विवाह करना मानो अनिवार्य है। जो स्त्री विवाह नहीं करती उसके स्त्रीत्व पर ही प्रश्नचिह्न लग जाता है। अज्ञेय की 'हीली- बोन् की बत्तखें' कहानी में हीली- बोन् भी अविवाहित है और इसीलिए लोग उसे स्त्री ही नहीं मानते- लोग कहते थे, 'हीली सुंदर है, पर स्त्री नहीं है। वह बॉबी क्या, जिसमें सौंप नहीं बसता?[1]

पूर्वोत्तर में स्त्री का बहुत सम्मान है। कार्बी लोगों में भी स्त्री को बहुत मान दिया जाता है, इनमें स्त्री को बुरी नजर से नहीं देखा जाता। उदयभानु पाण्डेय की 'हर्ता कुँवर का वसीयतनामा' कहानी में इसका उल्लेख है- हमारे कबीले में न तो कोई तलाक प्रथा थी और न ही किसी की बहू-बेटी को बुरी नजर से देखा जाता था। [7]

मणिपुर में स्त्री स्वतंत्र है पर फिर भी व्यक्तिगत जीवन में पुरुष स्त्री पर अपना अधिकार जमाता है। रीतामणि वैश्य की 'लोकटाक कब तक!' कहानी में जेरू के आंतकियों के कब्जे में रहने के बाद लौटने पर दया शादी करने से पहले उसे यौन पवित्रता की मेडिकल जाँच कराना चाहता है- 'चल अस्पताल चलते हैं, डॉक्टरी जांच करवा लेते हैं। यह तेरे और मेरे रिश्ते का सवाल है। [16]

स्त्री चाहे कितना भी स्वतंत्र हो या काबिल उसे रसोई का काम संभालना ही पड़ता है। रीतामणि वैश्य की 'पतंगा' कहानी में सुदेम के प्रसंग में कहानीकार कहती है- औरत जात है, चाहे जो कुछ भी हो जाए, रसोई तो संभालना ही पड़ता है। [16]

लड़कियों के जन्म पर लोग दुःखी होते हैं, परेशान रहते हैं। घर में लड़का होना चाहिए। लड़कों से ही वंश चलता है जैसी दकियानुसी बातें मानने वाले सैकड़ों लोग आज भी मौजूद हैं। रीतामणि वैश्य की 'सुकून' कहानी में एक जगह ऐसे ही लोगों की आलोचना की गयी है- बहुत लोगों ने उनसे कहा था- घर में एक लड़का होना चाहिए। सुविधा होती है। इस पर उनका कहना था- मेरे घर में लड़के के न होने से आपको क्या तकलीफ है? [16]

इसी कहानी के नायक परीक्षा विभाग के सुपरिंटेंडेंट साहब लड़के-लड़कियों में भेद नहीं करते । वे सोचते है। देश में कितने ही बाप बेटी को बोझ समझते हैं, किसी भी तरह उसके हाथ पीले करने की ताक में रहते हैं। बेटी कोई भेड़-बकरी तो है नहीं। अच्छे खानदान से रिश्ता जोड़ने के लालच में कोई झूठ कहकर अपनी बेटी की शादी क्यों करे। [16]

रीतामणि वैश्य की एक दिन की डायरी' कहानी में कहानीकार स्त्री जीवन की विडंबना और स्त्री शोषण को उजागर करते हुए टिप्पणी करती हैं कि मानो स्त्री का जीवन पुरुष के लिए ही होता है, स्त्री को ममता के नाम पर, प्यार के नाम पर छला जाता है-

नारी का हर दिन पुरुष की तुष्टि में ही चला जाता है। उसके हरेक काम का लक्ष्य पुरुष होता है । वह कितना ही शिक्षित, सुसंस्कृत और काबिल क्यों न हो, पुरुष तंत्र को वह तोड़ नहीं पाती। सुबह की चाय की प्याली से लेकर शुरू होने वाला उसका हरेक दिन, दिनभर के बोझ ढोने के बाद रात पुरुष को संसर्ग देने में खत्म होता है। नारी का जीवन पुरुष से पुरुष के लिए पुरुष का होता है। कभी उसे जिम्मेदारी के नाम पर कभी प्रेम के नाम पर कभी ममता के नाम पर पुरुष के सामने झुकना होता है। [16]

स्त्री को कही आने जाने की स्वतंत्रता नहीं है। रात में बाहर निकलना या काम से रात को लौटना उसके दुश्चरित्र होने का सबूत है। ऐसी लड़की के साथ कोई कुछ भी कर सकता है। रीतामणि वैश्य की 'आस्था' कहानी में मानस का वकील मनीषा को उसके बलत्कार का दोषी उसी को ठहराते हुए कहता है- आप लड़की हैं, आधी रात को घर से बाहर क्यों निकलती हैं? हमारा संस्कार तो ऐसा नहीं कहता। घर की चाहरदीवारी में रहने में ही नारी की भलाई है। कोई भी चरित्रवान लड़की देर रात घर के बाहर नहीं रहती। [16]

कहा जाता है कि स्त्री का सबसे बड़ा दुश्मन पुरुष नहीं, स्त्री होती है। जोराम यालाम की 'नदी' कहानी में यह बात साबित हो जाती है। कहानी की नायिका पूदुङ का पति उसे छोड़कर उसकी बहन को रखने की बात करता है, तो बहन इसका समर्थन करती है- 'तुम क्या चाहती हो मैं वहीं करूँगी मेरी बहन ।' पूदुङ ने भरे गले से बहन को कहा । 'दीदी बुरा मत मानना, मैं तारीङ के साथ हूँ।' बहन ने दूसरी तरफ मुँह फेरते हुए कहा । [11]

पति की मृत्यु के बाद ससुराल पत्नी के लिए अपना नहीं रह जाता। जोराम यालाम की 'क्या कहेंगे लोग कहानी में रूनू के पति की मृत्यु के बाद उसकी सास उससे कहती है- जिसके लिए तुम यहाँ आई थी वह ही नहीं रहा। अब किसके लिए यहाँ रहोगी। अभी उम्र ही क्या हुआ है। तुम्हें लौट जाना चाहिए। [11]

स्त्री को अशिक्षित रखना तो हमारे देश में आम बात है। असम के चर अंचल तो और भी पिछड़े हुए हैं। यहाँ शिक्षा का प्रचार-प्रसार नहीं है। स्त्री शिक्षा तो और भी अवहेलित है। रीतामणि वैश्य की 'मृगतृष्णा' कहानी में एक चर अंचल की युवती के कॉलेज में पढ़ने के आने की कहानी है। उसको पढ़ाने के कारण पास- पड़ोस के लोग उसके पिता पर व्यंग्य करते हैं और ताने कसते हैं- मास्टर का दिमाग खराब हो गया कि बेटी को पढ़ाने के लिए दूसरे गाँव भेज रहा है। औरत जात है, घर में रहे, चूल्हा-पानी का काम सीखे और कहीं किसी के माथे डाल दे, बात खत्म । क्या जाने कहाँ क्या गुल खिलाएगी। गाँव की इज्जत मिट्टी में मिलाकर रहेगी। लड़की कब हाथ से फिसल जाएगी बाप को पता ही नहीं चलेगा। उस दिन बड़ा मजा आएगा। [16]

5.3.2 बलात्कार और वैश्यावृत्ति

बलात्कार स्त्री का तन-मन सब तोड़ देता है। यह अपराध हमारे देश में हर दिन हर घण्टे हो रहा है । पूर्वोत्तर भी इसका अपवाद नहीं है। जोराम यालाम की 'उसका नाम यापी था' कहानी की नायिका यापी का बलात्कार उसका होने वाला पति ही करता है- वह रोती रही पर तारो नहीं माना। वह चिल्लाती रही, पर कोई सुनने वाला भी नहीं था।... उसने शरीर को अपने हाथों से इस तरह ढकने की कोशिश की जैसे सचमुच अपने उन दो हाथों से पूरी देह छुपा ही लेगी। [11]

यापी के साथ उसका स्कूल का मित्र जामजा भी बलात्कार करता है। अचनाक क्या हुआ कि जामजा ने उसे जोर से पकड़ लिया और जबरदस्ती करने लगा। उसने स्वयं को छुड़ाने की भरसक कोशिश की परंतु निष्फल रही। [11]

रीतामणि वैश्य की 'आस्था' कहानी में मानस मनीषा के साथ बलात्कार करता है। कहानी में वर्णन लड़की के शरीर से मानो साँप रेंग गया। उसने आस-पास देखा, कहीं कोई नहीं है। उसने भागना शुरू किया। मानस ने उसका पीछा किया और गली के मोड़ पर उसने उसे जकड़ लिया [16]

वेश्यावृत्ति समाज का कलंक है। किसी युवती को मजबूरी में ही अपना तन बेचना पड़ता है। छगन लाल जैन की कहानी 'गरीब हूँ तो क्या?' में भिखमंगी युवती को अपने सुख पूर्वक जीवन के एवज में अपना शरीर फौजियों को बेचना पड़ता है। सुखपूर्वक जीने की लालसा भिखमंगी युवती में शुरू-शुरू में तो रहती है। पर समय के साथ वह ऊब जाती है और शरीर के बदले सुख नहीं चाहती, छूटकारा चाहती है। वह कहती है- मुझे बचा लो बाबू ।....इस जीवन से तो भिखारिन का जीवन ही अच्छा.... यहाँ से कहीं दूर ले चलो मुझे, ताकि इन फौजियों के चंगुल से बच जाऊ..... मैं इस खाने-पीने से ऊब गयी हूँ... मुझे बिल्कुल शांति नहीं...। [28]

अज्ञेय की 'मेजर चौधरी की वापसी' कहानी में शिलांग में कुछ स्थानीय महिलाओं द्वारा वेश्यावृत्ति करने का वर्णन आता है। मेजर चौधरी को एक गोरा सिपाही मिलता है जो शिलांग शहर में वेश्या ढूँढने जा रहा था- सारे शिलाङ के गाँवों की नेटिव बस्तियों की छाँट उन्होंने की है। मैं केवल परसों आया हूँ और दस दिन हमें और रहना है। मैं उनके बराबर होना चाहता हूँ, किसी से पीछे मैं नहीं रहना चाहता। [1]

रीतामणि वैश्य की 'बंजारन' कहानी में लाजो को अपना पेट पालने के लिए अपना देह बेचना पड़ता है। बंजारों का तंबू उखाड़कर अपने आय को बरकरार रखने के लिए उसे हवालदार को अपना तन सौंपना पड़ता है। फिर बेघर होने से बचने के लिए उसे फिर मकान मालिक से अपने देह का सौदा करना पड़ता है। इस संबंध में कहानी में वर्णन आता है- और उसी क्षण हवालदार कमरें में दाखिल हुआ। बाहर बेटी माँ के लिए तरस रही थी और अंदर हवालदार लाजो के प्यार में डूबने को आतुर था। लाजो पेट की आग बुझाने के लिए समिधा-सी अंधेरे में जल रही थी और उस समिधा से हवालदार की कामानि तृप्त हो रही थी। [16]

जोराम यालाम की 'क्या कहेंगे लोग' कहानी में नायिका रूनू को अपनी पढ़ाई जारी रखने के लिए वेश्यावृत्ति अपनाना पड़ता है- मेंरे पास और कोई चारा ही नहीं था। मुझे कुछ भी करके अपनी पढ़ाई पूरी करनी थी। [11]

5.3.3 विवाह

बहुविवाह की प्रथा भारतीय समाज में युगों से चली आ रही है। सामंतवर्ग और आम जनता में भी यह प्रथा प्रचलित थी। आज भी कई समाजों में ऐसी प्रथा प्रचलित है। जोराम यालाम की 'साक्षी है पीपल' कहानी में ताजुम की पाँच पत्नियाँ हैं- एक साथ दो-दो, तीन-तीन महीनों के अंतराल पर पाँच पत्रियों से पाँच पुत्र पैदा हुए। [11]

बहुविवाह के कारण घर में एकाधिक पत्नियाँ होने पर घरेलू झगड़ों से घर में हमेशा अशांति होती है। इसी कहानी में एक जगह ऐसे ही झगड़े का वर्णन आता है- कोई कह रही थी, 'झगड़े का कारण तो तुम हो।' कोई कहती, 'अच्छा मेंरे बाल खींचने किसने शुरू किए थे।' [16]

जोराम यालाम की 'उसका नाम यापी था' कहानी में यापी का पति दूसरी औरत ले आता है- तारो एक लड़की लेकर आ गया था [11]

इसी कहानी में उल्लेख आता है- गाँव में तीन, चार मर्दों को छोड़कर सभी तो दो-दो, तीन-तीन बीवियाँ रखते हैं। [11]

जोराम यालाम की 'यासो' कहानी में यासो का पति चार शादियाँ करता है- हमने भी अपनी मर्जी से ही चार चार शादियों की है। [11]

यासो के पिता की भी पाँच पत्नियाँ हैं। यासो के संबंध में विवाह से पूर्व उसकी सौत कहती है- नाबाम खोदा की पाँचवीं पत्नी की इकलौती बेटी है। [11]

जोराम यालाम की 'कामेश्वर बरुआ हालुआ बन गया' कहानी में कामेश्वर एक पत्नी के रहते हुए दूसरी पत्नी को धोखे में रखकर दूसरी शादी कर लेता है। [11]

पुराने जमाने में अनमेल विवाह को भी निभाते जाने में स्त्री मजबूर थी पर अब वह अनमेल विवाह में पति को छोड़ के जाने की सोचती भी है और जा भी सकती है। रीतामणि वैश्य की 'हरकांत की पत्नी' कहानी में हरकांत जैसे अधेड़ कुरूप व्यक्ति से रेवा जैसी सुंदर और कम उम्र युवती का विवाह करा दिया जाता है- उसकी शादी हरकांत नाम के इस अधेड़ कुरूप आदमी से कराई गई है, तो जिंदगी में खोने के लिए उसके पास और क्या कुछ बाकी था। [11]

रेवा हरकांत से लड़कर मायके जाने का बहाना ढूंढती रहती है। वह बहुत बेकार खाना पकाती है, पर हरकांत झगड़ता नहीं खुशी-खुशी खा लेता है- कुछ पकाकर उसके सामने डाल देती है। वह अच्छी तरह पके न पके, नमक हल्दी बराबर पड़े न पड़े, उनसे कोई संबंध नहीं रखती। रेवा जो कुछ भी पकाती है, हरकांत उसकी तारीफ करता हुआ खा जाता है। रेवा चाहती है कि वह उसको लेकर कुछ कहे, कोई आपत्ति करे, तो उसे बहाना मिल जाए लड़ने का झगड़ने का और इसी बहाने उसे छोड़ मायके चले जाने का। [11]

जब विवाह में वर और वधु अलग-अलग जाति के हो तो उस विवाह को अंतर्जातीय विवाह कहा जाता है। परिवारजन अपनी जाति में ही वर-वधु खोजते हैं। पर प्रेमी जोड़े कई बार इस बात का ध्यान नहीं रखते कि उसका साथी उसकी जाति का ही हो। ऐसे विवाह को परिवार और समाज का विरोध सहना पड़ता है। पर साहसी प्रेमी जोड़े अंतर्जातीय विवाह करते हैं। पूर्वोत्तर भारत में भी ऐसे विवाह होते हैं। उदयभानु पाण्डेय की ' श्मशान में श्वपच' कहानी में अजुत की माँ ब्राह्मण है और उसका पिता आदिवासी- कट्टर ब्राह्मण परिवार से बगावत कर उन्होंने मेरे पिता का वरण किया था। [7]

तलाक किसी वजह से विवाह विच्छेद की स्थिति को कहते हैं। स्त्री तलाक लेना चाहे भी तो बच्चों का मोह उसे ऐसा करने नहीं देता। रीतामणि वैश्य की कहानी 'एक दिन की डायरी' में श्रद्धा भी इसी स्थिति से जूझती है- श्रद्धा इस डोरी को कभी का तोड़ देना चाहती है। उसके पास धन, दौलत, शिक्षा, ज्ञान सब कुछ है, पर वह जब भी बच्चों की ओर देखती है, उसकी सोच जवाब दे जाती है। बाप के संसर्ग से वंचित कर अपने बच्चों का भविष्य वह अस्थिर नहीं बना सकती। [16]

विवाह में वधु पक्ष वर पक्ष को दहेज देता है। पर पूर्वोत्तर में कई समाजों में वर पक्ष को वधु पक्ष को विवाह शुल्क देना पड़ता है। यह पूर्वोत्तर की समाज व्यवस्था की एक विशेषता है। अरुणाचल में लड़के वाले लड़की वालों को विवाह शुल्क देते हैं। जोराम यालाम की 'यासो' कहानी में भी इसका उल्लेख आया है- बहुत गुस्सा आ रहा था पिताजी पर कि उन्होंने दस मिथुन में मुझे बेच दिया था। [11]

जोराम यालाम की 'क्या सच में वे कभी मिले भी थे!' कहानी में भी आमीन की माँ इसलिए चिंतित है कि फौजियों के संसर्ग में गाँव की लड़कियाँ रहने लगी है। यदि कुछ ऊँच-नीच हो गई तो वे विवाह-शुल्क का सारा सामान लड़के वालों को कैसे लौटा पायेंगे- कुछ ऊँच-नीच हो गया तो इतने सारे मिथुन और इतने सारे कपड़े तथा मीट को कैसे वापस दे पाएँगे वे? [11]

आगे कहानीकार कहती है- लड़के वालों ने पंद्रह मिथुन और याद नहीं कितने ओपोङ, कितने सूखे मीट उसके माँ-बाप को दे दिए थे। [11]

जोराम यालाम की 'नदी' कहानी में भी पूदुङ से विवाह करने के लिए लड़के वाले विवाह शुल्क देते है- लड़के वालों से बीस मिथुन लिए जा चुके थे। [11]

5.3.4 शिक्षा का प्रचार-प्रसार

शिक्षा जीवन को सही ढंग से जीने के लिए आवश्यक है। पूर्वोत्तर के लोगों में भी शिक्षा का प्रचार- प्रसार पुराने समय से हो रहा है। हाँलाकि आधुनिक समय में इस प्रक्रिया में तेजी आई है। अज्ञेय की 'नीली हँसी कहानी 1954 ई. में लिखी गई थी। उस समय असम में शिक्षा का प्रचार-प्रसार हो रहा था। इस कहानी में नायक के डिब्रूगढ़ के स्कूल से पढ़ाई पूरी कर मास्टरी करने का उल्लेख आता है-

डिब्रूगढ़ का स्कूल। देवकांत ने पढ़ाई पूरी कर ली है, और अभी स्कूल में मास्टरी शुरू की है।[1]

उदयभानु पाण्डेय 'माछखोवा में महामास्टर' कहानी में कहते हैं कि नवें दशक में असम में डिग्री कॉलेजों की संख्या में बहुत ज्यादा वृद्धि होने लगी थी- कोकराझाड़ से लेकर डिब्रूगढ़ तक डिग्री कॉलेज कुकुरमुत्तों की तरह उग रहे थे।[7]

बहुत से अशिक्षित और नशाखोर लोग अपने बच्चों को पढ़ाना और उनका पढ़ना महत्त्व का नहीं समझते। उदयभानु पाण्डेय की 'श्मशान में श्वपच' कहानी में अजुत का बाप उसकी किताबों को जला देता है- जा साले, आज तेरी सारी किताबें अग्नि देवता को भेंट चढ़ा देता हूँ।[7]

इक्कीसवीं सदी में पूर्वोत्तर के युवक-युवती शिक्षा के लिए पूर्वोत्तर के बाहर अधिक संख्या में जाने लगे हैं। यहाँ के युवा देश के बड़े-बड़े शहरों में शिक्षा अर्जित करने के लिए जाते हैं। रीतामणि वैश्य की 'लोकटाक कब तक!' कहानी में जेरू और दयासागर दिल्ली में पढ़ाई करते हैं- दया जेरू से तीन साल बड़ा था। वह पढ़ने में बहुत तेज था। इंटर के बाद आगे की पढ़ाई के लिए वह दिल्ली चला गया। तीन साल बाद जेरू भी वहाँ पहने पहुँची।[16]

पूर्वोत्तर में शिक्षा का प्रचार-प्रसार हो रहा है फिर भी बहुत से क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ शिक्षा की रोशनी नहीं पहुँच पा रही है। बड़ी जनजाति के लोगों के संबंध में भी यह बात कही जा सकती है। रीतामणि वैश की 'पतंगा' कहानी में नायक बीरलांग बागलारी सेकंड डिविजन में मैट्रिक की परीक्षा पास करता है तो उसके ताऊ उसके उज्ज्वल भविष्य के लिए आशावान होते हैं- पिछली बार उसने मैट्रिक की परीक्षा दी थी। रिजल्ट के दिन ताऊ अधीर होकर आँगन में चक्कर काट रहे थे। बारह बजे के करीब बीरलांग रिजल्ट के साथ आता है- 'ताऊ मुझे सेकंड डिविजन मिला। खुशी के मारे ताऊ की आँखों से आँसू टपकने लगे।[16]

असम के चर अंचल में शिक्षा का बहुत कम प्रसार है। इसका वर्णन रीतामणि वैश्य की 'मृगतृष्णा' कहानी में आता है- पिछले कुछ वर्षों तक इस गाँव के लोग बच्चों के स्कूल भेजने की जरूरत महसूस ही नहीं करते थे। लड़कियों का तो सवाल ही नहीं उठता।[16]

अरुणाचल में शिक्षा-दीक्षा का अच्छा प्रचार-प्रसार हो रहा है फिर भी बहुत से क्षेत्रों में शिक्षा की रोशनी कम ही पहुँची है। जोराम यालाम की 'साक्षी है पीपल' कहानी में अनपढ़ बच्चों के स्कूल संबंधी विचार द्रष्टव्य है- हाँ-हाँ, जंगल पसंद नहीं है, तो वह क्या कहता है, ईसकूल जाओ, ईसकूल। जहाँ सभी बच्चे जमा होकर ओआन ओआन कहकर चिल्लाते रहते हैं[11]

जात-पाँत की समस्या भारतीय समाज व्यवस्था की अमार्जनीय त्रुटि है। जातिगत ऊँच-नीच की भावना पूर्वोत्तर भारत में भी थोड़ी मात्रा में देखने को मिलता है। नटों को नीची जाति का माना जाता है। इसलिए उन्हें कोई अपने गाँव में बसने नहीं देता। रीतामणि वैश्य की 'बंजारन' कहानी में नट जाति की बसंती अपने दुःख की गाथा कहती है जो जात-पाँत जनित है- हमारा कोई ठिकाना नहीं होता। इससे पहले हम एक दूसरे गाँव के पास पड़ी जमीन में बैठे थे। अच्छा-खासा घर भी बना लिया था। गाँव वालों को जब पता लगा हम नट हैं, वे हमें भगाने पर तुल गए। उस साल दिवाली की बात है। मैं पास में बनी गौशाला में लगे हैंडपंप से पानी लेने चली। गौशाला वाले इस घटना पर भड़क गए। उन लोगों ने पहले हमें पीटा। कुछ देर बाद गाँव वालों ने साथ आकर हमारी झोपड़ी फूंक दी।[16]

प्रेम प्राणी जगत की स्वाभाविक और मधुर अनुभूति है। पर प्रेम संबंधों में कई जटिलताएँ भी है। रीतामणि वैश्य की पतंगा' कहानी में बीरलांग और देंखू के प्रेम के बाद उनका रिश्ता तय हो जाता है। पर बीरलांग बाद में सुदेम को भगा ले जाता है। बीरलांग और देंखू के प्रेम के बारे में लिखा गया है- बीरलांग और देंखू की प्रेम गाथा से सभी परिचित हो गये और दोनों के घरवालों ने इस प्रेम को स्वीकृति दे दी।[16]

और एक जगह आता है- बीरलांग लड़की भगा ले जा सकता है, इसका अंदाजा सबको था, पर वह लड़की देखू न होगी, इसका अंदाजा किसी को नहीं था।[16]

आज की युवा प्रेमी जोड़े प्रेम को खिलवाड़ मानने लगे हैं, इसका एक और उदाहरण रीतामणि वैश्य की 'मृगतृष्णा' कहानी में अफरीदा की रूममेट जूली के निम्नलिखित कथन में मिलता है- अरे पगली, देखने में हर्ज क्या है? कहाँ तेरे गाँव में ऐसा लड़का मिलेगा? अच्छा लगा तो चलाते रहना, नहीं तो छोड़ देना। तेरा घर यहाँ से बहुत दूर है, किसी को पता भी नहीं चलेगा। फिर घर जाके जिससे मर्जी शादी कर लेना। यहाँ अच्छा टाइम पास हो जाएगा।[16]

प्रेम प्रस्ताव बड़े अनोखे होते हैं और ऐसे प्रस्ताव के बाद प्रेम पात्र बेचैन रहती है। अप्रत्याशित प्रेम प्रस्ताव के बाद प्रेम पात्र के मन की स्थिति कैसी होती है, इसका सुंदर चित्रण रीतामणि वैश्य की 'व्यूह' कहानी में हुआ है- अगली सुबह जब उसने खिड़की खोली, तो कागज के टुकड़े में लपेटे एक ताजे गाजर ने खिड़की से होकर कमरे में प्रवेश किया। कागज में लिखा था- 'खा लो। सेहत के लिए अच्छा है।' प्रिया दिन भर अस्थिर रही और शाम को उसने सच्ची में गाजर खा लिया।[16]

प्रेमिका अपने अयोग्य प्रेमी को योग्य साबित करने का प्रयास करती है। अपने प्रेम पात्र की कमियों को समाज के आगे उजागर नहीं करना चाहती है। 'व्यूह' कहानी में प्रिया भी मोहन की गरीबी के संबंध में कहती है- ''मोहन हमेशा गरीब नहीं रहेगा। मैं भी नौकरी करूंगी।' प्रिया ने दूसरा बार भी आक्रामक तरीके से प्रतिरोध किया[16]

जोराम यालाम की 'क्या सच में वे कभी मिले भी थे' कहानी में आमीन का पति शहर में दूसरी स्त्री के साथ रहता था- आमीन उससे लिपट जाना चाहती थी कि अचानक अंदर से नाइटी पहने एक औरत अँगराई लेती हुई निकली।[11]

जोराम यालाम की ही 'नदी' कहानी में पूदुङ के पति का उसकी बहन के साथ परकीया संबंध होता है। तारीङ ने उसकी बहन की पवित्रता भंग कर दी थी। बहन पेट से थी।[11]

जोराम यालाम की 'मैं यामी हूँ' कहानी में यामी की सौतेली माँ पिता के घर में न रहने का फायदा उठाकर अवैध संबंध रखती है। उसका पिता एक दिन उससे पूछता है- तुझे माँ बहुत मारती है? मेरे जाने के बाद कोई दाढ़ी वाला आता रहता है?[11]

5.3.5 मातृसत्तात्मक समाज

दुनिया के अधिकतर समाज पितृसत्तात्मक हैं। पर खासी समाज मातृसत्तात्मक है। यहाँ परिवार की प्रमुख माताएँ होती हैं। संपत्ति का उत्तराधिकार भी स्त्री को ही मिलता है। अज्ञेय की 'हीली - बोन् की बत्तखें' कहानी एक खासी युवती की है। इस कहानी में कई जगह खासी समाज के ढाँचे को समझाने का प्रयास हुआ है- खासियों का जाति संगठन स्त्री प्रधान है, सामाजिक सत्ता स्त्री के हाथ में है और वह अनुशासन में चलती नहीं, अनुशासन को चलाती है।[1]

इसी कहानी में अज्ञेय ने आगे लिखा है- पिता नहीं रहे और स्त्री- सत्ता के नियम के अनुसार उनकी सारी संपत्ति सबसे छोटी बहिन को मिल गई।[1]

समाज में रहने वाले हर प्राणी को साहचर्यपूर्ण जीवन की आवश्यकता होती है। कार्बी जनजाति में एक घर में धान खत्म हो जाने पर दूसरे घर से धान ले आया जाता था। पर पढ़े-लिखे लोगों की संख्या में वृद्धि के बाद धान बेच देने के कारण यह साहचर्यपूर्ण व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गयी-

मेरे आजा के समय हमारे कबीले में एक नायाब प्रथा थी। जब किसी एक घर का धान खत्म होता, लोग दूसरे घर से धान ले आते। इसी तरह एक गरीब गाँव दूसरे अमीर गाँव से धान लाता। लेकिन पढ़े-लिखे आदिवासी ने ज्यादा धान खेत में बेचना शुरू कर दिया और कबीले का जो सनातन साम्यवाद था वह तहस-नहस हो गया।[7]

नशाखोरी समाज और परिवार को पंगु बना देता है। यह कई प्रकार की सामाजिक और पारिवारिक समस्याओं को जन्म देती है। छगन लाल जैन की 'हँसते-हँसते जीना' कहानी में भिखमंगे नायक के ताड़ी का आदी होने की बात आती है। ताड़ी, अर्द्धाहार, अधिक परिश्रम ने भिखमंगे नायक को पचास साल में अस्सी साल का बना दिया था। भिखमंगा बूढा अपने परिवार की कमाई के चालीस- पैंतालीस रुपये में से दस-पंद्रह रुपये ताड़ी पीने में ही खर्च कर देता था- इनमें से दस-पंद्रह के करीब तो ताड़ी पर ही उड़ जाते।[28]

इसी कहानी में आगे कहानीकार ने लिखा है- अति परिश्रम, अर्द्धाहार, मदिरापान आदि चायबागानी दैत्यों ने इसे पचास की उम्र में ही अस्सी साल का सा वृद्ध बना दिया।[28]

उदयभानु पाण्डेय की 'नगीना' कहानी में नायक पहले तो शराब बिल्कुल नहीं पीता था पर एक बार बिहार अपने गाँव जाकर ऊँची जात वालों से लड़-झगड़ कर पीट आने के बाद बहुत शराब पीने लगता है और पीकर लोगों से मार-पीट करके एक बार जेल में भी बंद हो जाता है- साला बहुत दारू पी गया और बाजार में हल्ला-गुल्ला करने लगा।[7]

इसी कहानी में आगे कहानीकार ने लिखा है- राम जियावन घर का काम करके रिन पटा रहा है और नगीना यहाँ दारू पी-पीकर पगला रहा है।[7]

बाद में नगीना का बेटा राम जियावन भी नशा करने लगता है- वह लड़खड़ाकर चल रहा था और उसकी आँखें चढ़ी हुई थी। लगता था, उसने खूब पी है।[7]

उदयभानु पाण्डेय की 'श्मशान में श्वपच' कहानी में अजुत के फूफाओं के आने पर शराब की महफिल जमने का उल्लेख आता है- घर होटल बना रहता था और मेरे फूफा जी लोग आते तो शराब पानी की तरह बहाई जाती थी।[7]

षष्टम अध्याय

उपसंहार

भारतीय संस्कृति विविध संस्कृतियों का संगम है। इस संगम में आदिवासी संस्कृति एक अविच्छिन्न धारा के रूप में दिखाई पड़ती है। वर्तमान समय में आदिवासी संस्कृति पर अनेक संकट के बादल छाये हुए हैं। इस वैश्वीकरण और मशीनीकरण के युग में सबसे अधिक यदि किसी को खतरा है तो वह आदिवासी जीवन-दर्शन एवं उनके मूल्यों को लेकर है । इसके पीछे के कारणों को तलाशते हुए विद्वानों ने यह माना है कि जब से भारतीय बाजार की नीति सबके लिए (विशेष रूप से बाहरी लोगों के लिए) खोला गया है तब से आदिवासियों के विकास के नाम पर उनके जल, जंगल और जमीन को छीना जाने लगा है। इससे आगे बढ़कर भी कहा गया है आदिवासियों से उनके पुरखों द्वारा संरक्षित प्राकृतिक सम्पदा को लूटा गया है। अपने सुख-सुविधाओं के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध उपयोग किया गया है। साथ ही आदिवासियों को नारकीय जीवन जीने को विवश किया गया है।

पूर्वोत्तर भारत, भारत के उत्तरपूर्वी दिशा में स्थित अरुणाचल प्रदेश, असम, त्रिपुरा, नागालैण्ड, मेघालय, मिजोरम, मणिपुर और सिक्किम इन आठ राज्यों के समूह को कहा जाता है । पहले अरुणाचल प्रदेश, नागालैण्ड, मिजोरम, मेघालय बृहत्तर असम के ही अभिन्न अंग थे । पूर्वोत्तर भारत प्राकृतिक संसाधनों की दृष्टि से बहुत समृद्ध है | यहाँ महिलाओं का बहुत सम्मान होता है और महिलाओं को अपेक्षाकृत अधिक स्वतंत्रता भी प्राप्त है। यह भूमि विभिन्न भाषाभाषी और विभिन्न संस्कृतियों के लोगों का निवास स्थल है । इन सभी राज्यों की अपनी अलग- अलग संस्कृति है। यहाँ विभिन्न प्रकार की जनजातियाँ निवास करती हैं । जिनमें प्रमुख हैं- बोडो, गारो, राभा, कार्बी, मिसिंग, डिमासा, उचई, त्रिपुरी, रियांग, जेलियांग, सेमा, मिसावो, मिजो, लुशाई, खासी, जयंतिया, अका तथा हमार आदि । भिन्न-भिन्न संस्कृति होने के बावजूद इनमें कहीं न कहीं एकता नजर आती है । सभी राज्य प्रकृति की सुंदरतम कृतियों में से एक हैं। पूर्वोत्तर भारत विविध जनजातियों, विविध भाषाओं एवं विविध संस्कृतियों का एक ऐसा गुलदस्ता है जिसमें अनेक रंग के फूल हैं। यह भारत का वह अभिन्न अंग है जिसके बिना भारत की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। पूर्वोत्तर भारत में कोई एक समाज निवास नहीं करता बल्कि कई जनजातियों के समाज का समूह निवास करता है । पूर्वोत्तर में जो आदिवासी समाज जीवन यापन कर रहा है। वह बहुत पहले से ही अपनी पहचान एवं अस्तित्व के लिए संघर्षरत है। पूर्वोत्तर में हुए सभी आंदोलनों के केंद्र में पहचान और अस्मिता मुख्य समस्या के रूप में रहा है । इस पर शोध-प्रबंध में विस्तार से विचार किया गया है ।

शोधार्थी ने पाया है कि वर्तमान में पूर्वोत्तर के आदिवासी समाज का अध्ययन- अध्यापन ज्ञान विभिन्न अनुशासनों के अंतर्गत किया जा रहा है । जिसके कारण आदिवासी जीवन-दर्शन और मूल्यबोध की अनेक जानकारियाँ प्राप्त हो रही हैं। किंतु जहाँ तक हिन्दी भाषा और साहित्य का प्रश्न है । वहाँ पूर्वोत्तर भारत लेखकों के लिए विस्मृत-सा रहा है। इस बात को इस ढंग से कहा जा सकता है कि हिन्दी साहित्य लेखन की दृष्टि से पूर्वोत्तर भारत सदा से उपेक्षित एवं अछूता रहा है। इसके साथ यह भी सत्य है कि हिन्दी साहित्य लेखन में आदिवासी जीवन और भी अधिक अनुपस्थित रहा है। शोधकार्य करते हुए पाया गया है कि वास्तविक रूप से इक्कीसवीं सदी में पूर्वोत्तर भारत के विषय में लेखन शुरू हुआ है । इन कार्यों में आदिवासी जीवन उभर कर सामने आया है । कथा साहित्य में पूर्वोत्तर भारत की आदिवासी अस्मिता एवं अस्तित्व के प्रश्न को मुख्य रूप से उठाया गया है। इसके साथ ही पूर्वोत्तर भारत के आदिवासी समाज की मुख्य चिंता और समस्याओं को अभिव्यक्ति मिली है । आज अनेक ऐसी रचनाएँ लिखी जा रही हैं जो पूर्वोत्तर भारत के आदिवासी विमर्श को केंद्र में लाने की आधारभूमि बनी हैं । अर्थात् पूर्वोत्तर भारत के आदिवासी जीवन को स्वर दे रही हैं। जो उनके जीवन की हलचलों एवं समस्याओं

को सामने ला रही हैं। जिनमें महत्वपूर्ण रूप से देवेन्द्र सत्यार्थी का 'ब्रह्मपुत्र', कृष्णचन्द्र शर्मा 'भिक्खु' का 'रक्तयात्रा', श्रीप्रकाश मिश्र के 'जहाँ बाँस फूलते हैं', 'रूपतिल्ली की कथा' तथा 'नदी की टूट रही देह की आवाज', महेंद्रनाथ दुबे का 'मुक्ति', लालबहादुर वर्मा का 'उत्तर-पूर्व', श्रीधर पाण्डेय की 'आहुति', तथा जोराम यालाम नाबाम का 'जंगली फूल' आदि है। इसके अतिरिक्त जोराम यालाम का कहानी संग्रह 'साक्षी है पीपल', जमुना बीनी का 'अयाचित अतिथि और अन्य कहानियाँ' एवं मोर्जुम लोयी का 'काबू' आदि प्रमुख हैं। जो आदिवासी विमर्श को मजबूती प्रदान कर रही हैं।

इस अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि पूर्वोत्तर के लोगों को शेष भारत के लोग अपने से अलग एवं भिन्न प्रजाति के मानते हैं। जबकि ऐसा नहीं है वे भी भारत के नागरिक हैं। पूर्वोत्तर के लोगों की भाषा एवं संस्कृति भले ही शेष भारत से भिन्न है; किन्तु कहीं न कहीं वह भारत की विविधता पूर्ण संस्कृति का ही एक अंग है। अभी तक पूर्वोत्तर के लोगों की आवाज को अनसुना किया जाता रहा है। जिसके कारण कुछ लोग अपनी बात को केंद्रीय सत्ता तक पहुँचाने के लिए हिंसा के रास्ते को भी अपनाते रहे हैं। प्रारंभिक दौर में पूर्वोत्तर के लोगों का संपर्क मैदानी भाग के व्यापारी एवं सैनिक वर्ग के लोगों से हुआ। दोनों लोगों के साथ इनका अनुभव अच्छा नहीं रहा। दोनों ने इनको ठगा जिसके कारण आज ये बाहरी लोगों के साथ व्यवहार करने में अत्यधिक सतर्कता बरतते हैं। पूर्वोत्तर के लोग सीधे-साधे एवं सरल प्रकृति वाले होते है, ये व्यापारियों की धूर्तता भरी चालों में आसानी से फँस जाते हैं। पूर्वोत्तर की पीड़ा किसी गैर समाज की पीड़ा नहीं है, बल्कि हम सब की अपनी पीड़ा है। अतः इसका हल भी हमें ही जल्दी से जल्दी खोजना होगा। हमारे स्कूली पाठ्यक्रम में भी पूर्वोत्तर के बारे में पर्याप्त जानकारी का अभाव नजर आता है। इस कमी को दूर करने की आवश्यकता है। शिक्षा ही एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा पूर्वोत्तर तथा शेष भारत के बीच सम्बन्धों में जो दूरी है। उसको जल्दी से जल्दी कम किया जा सकता है। पूर्वोत्तर के समाज को अपने दृष्टि से न देखकर बल्कि उनकी दृष्टि से देखने की आवश्यकता है। तभी उनके जीवन के दुख एवं दर्द को महसूस किया जा सकता है।

पूर्वोत्तर भारत पर आधारित हिंदी साहित्य परिमाण में कम है। हिंदी साहित्य के बड़े लेखकों का इस क्षेत्र को लेकर साहित्य रचने पर ध्यान कम ही गया है। पर सुखद आश्चर्य है कि अज्ञेय ने तीन यात्रावृत्त और पाँच कहानियाँ इस क्षेत्र को लेकर लिखे हैं। उनके बाद देवेंद्र सत्यार्थी, बलभद्र ठाकुर और कृष्ण चंद्र शर्मा 'भिक्खु' ने एक-एक उपन्यास इस क्षेत्र को केंद्र कर लिखा है। कुबेरनाथ राय ने भी कुछ निबंध इस क्षेत्र को लेकर लिखे हैं। महाभारत काल से ही पूर्वोत्तर भारत का संबंध भारत से रहा है।

'राह और रोड़े' एक राष्ट्रभाषा प्रचारक जीवनचंद्र हाजरिका की सच्चाई, कर्मठता की कहानी है। 'ब्रह्मपुत्र' में असम के दिसॉंगमुख नामक स्थान के माध्यम से पूरे असम का जनजीवन अपने सारे रंगों के साथ चित्रित है। इस उपन्यास में देवकांत क्रांतिकारी है जो आखिर में शहीद हो जाता है। 'मुक्तावती' में मणिपुर में अन्यायपूर्ण श्राद्ध-कर के विरुद्ध हुए संघर्ष को चित्रित किया गया है। 'जय आइ असम' में 'असम आंदोलन' के समय की असम की परिस्थितियों को चित्रित किया गया है। 'जहाँ बाँस फूलते हैं' में 1966 ई. के मिजो विद्रोह के बाद की मिजोरम की परिस्थितियों को चित्रित किया गया है। 'मुक्ति' में साँवरी नामक एक स्त्री की त्यागपूर्ण जीवन एवं ममतामयी चरित्र को उजागर किया गया है। 'रूपतिल्ली की कथा' दो मानव - बलि के ईर्द-गिर्द घूमती है। यह उपन्यास खासी प्रदेश में बाहरी धर्म और संस्कृति के धीरे-धीरे प्रभाव विस्तार करने की कहानी कहता है। 'उफ़्फ़' में उल्फा की गतिविधियों और भ्रष्ट अधिकारियों का चित्रण किया गया है।

'देश भीतर देश' में एक हिंदी भाषी युवक और एक असमीया युवती की प्रेम कहानी के माध्यम से असम की सामाजिक, राजनीतिक परिस्थिति का चित्रण है। 'लोहित' में 'असम आंदोलन' के समय का असम चित्रित है। 'सियांग के उस पार' एक हिंदी भाषी

युवक और एक अरुणाचली युवती की प्रेम कहानी है। ' में प्रागैतिहासिक काल की अरुणाचली कबीलाई जीवन का चित्रण है। 'मिनाम' अरुणाचल की 'जंगली' 'फूल' गालो जनजाति की कुछ स्त्रियों की संघर्ष की कहानी है।

अज्ञेय की पूर्वोत्तर केंद्रित कहानियों में फौजी जीवन के अनुभव, मनोवैज्ञानिक स्थितियाँ, और पूर्वोत्तर की सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश चित्रित हुआ है। छगनलाल जैन की पूर्वोत्तर भारत केंद्रित कहानियों में भिखमंगों के कठिन जीवन और गरीब होने के कारण उनको किसी अधिकार के योग्य न मानने की लोगों की मानसिकता चित्रित हुई है। उदयभानु पाण्डेय की पूर्वोत्तर केंद्रित कहानियों में असम की राजनीति, महिलाओं द्वारा सताये गए पुरुषों की दशा, शिक्षा को व्यवसाय में तब्दील करने से इनकार करने वाले शिक्षकों का जीवन आदि चित्रित हैं। रीतामणि वैश्य की कहानियों में पूर्वोत्तर के खासकर असम के विविध परिदृश्यों का चित्रण मिलता है। इनमें नारी जीवन की समस्याएँ, आतंकवाद, रीति-रिवाज, पर्व- तौहार आदि प्रमुख है। जोराम यालाम की कहानियों में अरुणाचल की महिलाओं के कठिन जीवन और उनका शोषण चित्रित है।

पूर्वोत्तर में स्त्री को अपेक्षाकृत अधिक सम्मान और स्वतंत्रता प्राप्त है। पर फिर भी स्त्री को दूसरे दर्जेका नागरिक साबित करने में पितृसत्तात्मक समाज कोई मौका नहीं छोड़ता। स्त्रियों की मानसिकता ही ऐसी बना दी जाती है कि वह खुद भी अपने आप को पुरुष से हीन मानने लगती है। स्त्री का साहसी होना, उसका देर रात तक किसी काम से बाहर रहना पुरुष समाज को पसंद नहीं और इसी कारण पुरुष ऐसी स्त्री को चरित्रहीन और समाज के लिए खतरा घोषित कर देते हैं। स्त्री के साथ कोई दुर्भाग्यपूर्ण घटना घट जाने पर उसको कलंकित मानकर उसका जीना दूभर कर दिया जाता है। स्त्री को शिक्षा दिलाना फिजुल का झंझट माना जाता है। पूर्वोत्तर के कई ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ स्त्री शिक्षा को नजरअंदाज कर दिया जाता है। स्त्री को अगर अपने अधिकारों के प्रति जागरूक करना है तो उनको शिक्षित करना होगा। कई मामलों में तो माँएँ ही अपनी बेटियों को पढ़ाना नहीं चाहती। उनके मुताबिक लड़की को चूल्हे चौके का काम ही तो करना है। स्त्री के साथ घरेलू हिंसा भी आम बात है। ससुराल में बहू को अलग-अलग तरीकों से सताया जाता है। पति, सास-ससुर, ननद, देवर सभी उस पर अत्याचार करते हैं। विवेच्य उपन्यासों में कई ऐसे स्थल है जहाँ स्त्रियों के साथ घरेलू हिंसा होते हुए चित्रित किया गया है।

प्रेम मानव जीवन का एक बड़ा अंग है। पर प्रेम में धोखाधड़ी होते हुए भी हम देख सकते हैं। विवेच्य कथा-साहित्य में प्रेम के अलग-अलग पहलुओं का बारीकी से चित्रण हुआ है। प्रेम का एक और रूप है परकीया प्रेम। परकीया प्रेम में अपने साथी के साथ बेईमानी की जाती है। इस प्रकार का संबंध अनैतिक है। इसकी वजह से घरेलू हिंसा साथ ही समाजिक समस्याएँ भी जन्म लेती हैं। विवेच्य कथा -साहित्य में कई ऐसे परकीया प्रेम संबंधों का चित्रण हुआ है। बहुविवाह, बालविवाह, अनमेल विवाह के कई उदाहरण भी विवेच्य कथा-साहित्य में हमें देखने को मिलते हैं। हिंदी के बड़े-बड़े साहित्यिकों ने इन समस्याओं पर लेखनी चलाई है। पूर्वोत्तर भारत से संबंधित हिंदी साहित्य के रचयिताओं ने भी इन समस्याओं को नजरअंदाज नहीं किया है। कई दशकों से पूर्वोत्तर में शिक्षा-दीक्षा का प्रचार हो रहा है। यहाँ के युवा देश के बड़े-बड़े शहरों में अध्ययन के लिए जाने लगे हैं। पूर्वोत्तर के समाज में देश के बाकी हिस्सों से आए लोग भी शामिल होते रहे हैं। हिंदी भाषी, मारवाड़ी, पंजाबी लोगों ने भी पूर्वोत्तर के समाज गठन में भागेदारी निभाई है। महिलाओं की स्वतंत्रता और विवाह आदि मामलों में उनकी राय को महत्त्व दिया जाना पूर्वोत्तर भारत के सामाजिक ढाँचे की एक विशेषता के तौर पर गिना जा सकता है। खासी समाज का मातृसत्तात्मक होना भी एक विशेषता के रूप में लिया जा सकता है। 'रूपतिल्ली की कथा' में तो राजा के द्वारा भी आय के लिए श्रम किए जाने की विशेष सामाजिक व्यवस्था का उल्लेख आता है। पूर्वोत्तर भारत के समाज की विशेषता है कि यहाँ की कई जनजातियों में लड़के वालों को विवाह-शुल्क पड़ता है। पर यह विवाह-शुल्क दिया जाना भी एक समस्या ही है। भले ही यह पूर्वोत्तर में स्त्री के ऊँचे दर्जे का

प्रतीक हो, पर यह प्रथा उसे क्रीत दासी भी बना देती है। विवेच्य कथा - साहित्य में कुछ अंतर्जातीय विवाह के भी उदाहरण मिलते हैं। स्त्री का शोषण भी एक बड़ी समस्या है। पूर्वोत्तर की स्त्री के अपेक्षाकृत अधिक स्वतंत्र होने पर भी बलात्कार के कई उदाहरण भी विवेच्य कथा-साहित्य में मिल जाते हैं। जात-पाँत और वर्ण-व्यवस्था की समस्या पूर्वोत्तर भारत में उतनी गंभीर तो नहीं है, पर इनके अस्तित्व को नकारा नहीं जा सकता। पूर्वोत्तर भारत के लोग बड़े अतिथि परायण होते हैं। यहाँ के लोगों की सरलता किसी का भी मन मोह सकती है। भले ही पूर्वोत्तर भारत तीव्र गति से विकास कर रहा हो, पर फिर भी यह अपेक्षाकृत पिछड़ा हुआ इलाका है। इस क्षेत्र को विकास के पथ पर आगे बढ़ाने के लिए गंभीर प्रयास वांछनीय है।

पूर्वोत्तर केंद्रित 14 उपन्यास और 37 कहानियों को पूर्ववर्ती अध्यायों में हमने विवेचित किया है। इन उपन्यासों और कहानियों में पूर्वोत्तर भारत का राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक-सांस्कृतिक जीवन को सूक्ष्मता से देखने का प्रयास हमने किया है। पूर्वोत्तर की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक-सांस्कृतिक जीवन की खुबियों को हमने देखा है। अनेक कमजोरियों के रहते हुए भी हिंदी साहित्य में उपेक्षित इस क्षेत्र को लेकर रचनाएँ करने के लिए इन लेखकों की सराहना की जाती है और की जानी भी चाहिए। पूर्वोत्तर भारत और शेष भारत के बीच सौहार्दपूर्ण संबंध स्थापित करने में इन लेखकों और उनकी रचनाओं की भूमिका को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। पूर्वोत्तर भारत को केंद्र करके जितना भी कथा-साहित्य रचा गया है, उनमें से कइयों में प्रामाणिक अनुभूतियों और प्रामाणिक तथ्यों की कमी खटकती है। प्रामाणिक अनुभूतियों और प्रामाणिक तथ्यों के अभाव में ऐसी रचनाएँ बहुत हद तक अपनी विश्वसनीयता खो देती है। साथ ही कलात्मक दृष्टि से बेहतर रचना बनने का सामर्थ्य भी खो देती है। पूर्वोत्तर भारत बहुरंगी समाज और संस्कृति का आगार है। यहाँ बहुत सी जाति-जनजातियों और भाषाभाषी लोगों का निवास हैं। पर पूर्वोत्तर भारत को केंद्र करके लिखे गए उपन्यासों और कहानियों में इस बहुरंगी समाज और संस्कृति को संपूर्णता में चित्रित करने में अधिकतर लेखक असफल रहे हैं। इतनी विविधतामय क्षेत्र को लेकर उत्कृष्ट कोटि की रचनाएँ लिखी जा सकती थी। पर ऐसा करने में लेखकों के असामर्थ्य के पीछे प्रतिभा की कमी और अनुभूति की अपरिपक्वता को कारण रूप में चिह्नित किया जा सकता है।

प्रस्तुत अध्ययन के बाद हमने यह पाया कि इस विषय का क्षेत्र व्यापक है। भविष्य में इससे संबंधित कई और महत्त्वपूर्ण शोध किये जा सकते हैं। इनमें से प्रमुख हैं- 'हिंदी कथा-साहित्य में चित्रित पूर्वोत्तर भारत का सांस्कृतिक संदर्भ', हिंदी कथा - साहित्य में चित्रित पूर्वोत्तर भारत का समाजशास्त्रीय अध्ययन', हिंदी कथा-साहित्य में चित्रित पूर्वोत्तर भारत की विविध समस्याएँ', 'हिंदी कथा - साहित्य और पूर्वोत्तर भारत का आतंकवाद: एक समीक्षात्मक अध्ययन', 'हिंदी कथा-साहित्य और पूर्वोत्तर भारत के विविध परिदृश्य' आदि। पूर्वोत्तर भारत पर लिखे जा रहे साहित्य से शोध के नये आयाम की संभावना बढ़ती जायेगी। आदिवासी विमर्श के आईने में पूर्वोत्तर संबंधी हिन्दी कथा साहित्य को जाँच- परखकर एक सकरात्मक निष्कर्ष पर पहुँचा गया है। जिसका संक्षेप में वर्णन ऊपर किया गया है। किसी के लिए भी इन निष्कर्षों से सहमति - असहमति का प्रश्न तो सदैव बना रहेगा। यह संवाद की एक प्रक्रिया है और इस प्रक्रिया का मूल्यांकन बार-बार किया जाना चाहिए। यह हिन्दी साहित्य के रचनात्मक विकास के लिए जितना सुखद होगा। उतना ही आदिवासी विमर्श के नये-नये क्षेत्रों के लिए भी। इस शोधकार्य ने हिन्दी साहित्य के विपुल भण्डार में थोड़ा भी योगदान दिया तो इसकी सार्थकता स्वत: सिद्ध होगी।

संदर्भ सूची

1. मीणा, गंगा सहाय, आदिवासी साहित्य विमर्श, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा.) लिमिटेड, नई दिल्ली, 2014, पृ. 22
2. दूबे, श्यामा चरण, समय और संस्कृति, साक्षरा प्रकाशन, दिल्ली, 2011, पृ.64
3. वही पृ. 65
4. गुप्ता, रमणिका (सं), आदिवासी विकास से विस्थापन, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट मिलिटेड, नई दिल्ली, 2008, पृ.81
5. 'उप्रेती, हरिश्चंद्र, भारतीय जनजातियाँ संरचना और विकास, पृ.47
6. खेस्स,वसंती, आदिवासी लोककथाओं में निहित मानव जीवन का सार (लेख), मड़ई पत्रिका, यादव, डॉ. कालीचरण (सं.) 2016, अंक-3, बिलासपुर, पृ. 174
7. वही पृ. 174
8. मिश्र, श्री प्रकाश, जहाँ बाँस फूलते हैं, यश पब्लिकेशन एंड डिस्ट्रीब्युटर्स, दिल्ली, 2018, पृ.68
9. सत्यार्थी, देवेन्द्र, ब्रह्मपुत्र, ज्ञान गंगा, दिल्ली, 1992, पृ. 14
10. मिश्र, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते हैं, यश पब्लिकेशंस, दिल्ली, 2015, पृ. 24
11. गुप्ता, रमणिका, आदिवासी विकास से विस्थापन, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट मिलिटेड, नई दिल्ली, 2008, पृ.07
12. यालाम, जोराम, जंगली फूल, यश पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्युटर्स, दिल्ली, 2018, पृ.157
13. सिंधी, नरेंद्र कुमार, वशुधार गोस्वामी, समाजशस्त्र विवेचन, पृ.324
14. लवानिया, एम.एम भारत में जनजातियों का समाजशास्त्र पृ 44
15. लवानिया, एम.एम भारत में जनजातियों का समाजशास्त्र पृ 72
16. तिवारी, डी. डी. हिंदी उपन्यास : स्वातंत्र्य के संघर्ष के विविध आयाम, पृ.68
17. तिवारी, डी. डी. हिंदी उपन्यास : स्वातंत्र्य के संघर्ष के विविध आयाम, पृ..68
18. दुबे, महेन्द्रनाथ, मुक्ति, फ्लैप से उद्धृत
19. दुबे, महेन्द्रनाथ, मुक्ति, फ्लैप से उद्धृत, पृ. IX
20. 'शुक्ल, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते हैं, प्राक्कथन से
21. 'शुक्ल, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते हैं, प्राक्कथन से, पृ. 24
22. 'शुक्ल, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते हैं, प्राक्कथन से, पृ.42
23. 'शुक्ल, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते हैं, प्राक्कथन से, पृ.45,
24. 'शुक्ल, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते हैं, प्राक्कथन से, पृ.55
25. 'शुक्ल, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते हैं, प्राक्कथन से, पृ.63,
26. 'शुक्ल, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते हैं, प्राक्कथन से, पृ.107

27. 'शुक्ल, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते हैं, प्राक्कथन से, पृ.145,

28. जैन महेंद्रनाथ, लिबरेशन, पृ.324

29. पाण्डेय, श्रीधर, आहुति, पृ। vii

30. वही, फ्लैप से उद्धृत

31. वही, पृ. 40-41

32. वही, पृ 29

33. वही, पृ.46

34. वही, पृ.90

35. वही, पृ 143

36. गुप्ता, रमणिका, आदिवासी विकास से विस्थापन, पृ. 07

37. मिश्र, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते हैं, पृ 99

38. वही, पृ 100

39. वही पृ 68

40. वही पृ 49

41. वही पृ 69

42. नागर, विमलशंकर, हिंदी के आंचलित उपन्यास: सामाजिक एवं सांस्कृतिक संदर्भ, पृ 34

43. पाण्डेय, श्रीधर, आहुति, पृ. 37

44. यालम, जोराम, जंगली फूल, पृ. 157

45. यालम, जोराम, जंगली फूल, पृ.

46. पाण्डेय, माधवेंद्र, पूर्वोत्तर की सांस्कृतिक पहचान, पृ 182

47. पाण्डेय, श्रीधर, आहुति, पृ. 09

48. वही, पृ. 40

49. वही, पृ.07

50. मिश्र,श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते है, पृ.39

51. वही, पृ. 40

52. यालम, जोराम, जंगली फूल, पृ.162

53. पाण्डेय, श्रीधर, आहुति, पृ.20

54. यालम,जोराम, जंगली फूल, पृ 49

55. मिश्र, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते है। पृ 183

56. यालम, जोराम, जंगली फूल, पृ 149

57. राय, गोपाल. हिंदी उपन्यास का इतिहास छठा संस्करण. नयी दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2016.

58. हिंदी कहानी का इतिहास (भाग 1). पहली आवृत्ति नयी दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2014.

59. वर्मा, डॉ. धीरेंद्र, संपा. हिंदी साहित्य कोश (भाग 1). पुनर्मुद्रण. वाराणसी: ज्ञानमण्डल लिमिटेड, 2021.

60. यादव, अनिल, वह भी कोई देश है महाराज, पृ.80

61. प्रभाकर, विष्णु, एक देश एक हृदय, पृ.63

62. निरुपमा, भारत के राज्य, पृ. 117

63. सिंह, जगमल, मणिपुर, पृ. 37

64. वजाहत, असगर, रास्ते की तलाश में, पृ.62

65. गर्ग, मृदुला, कुछ अटके कुछ भटके, पृ.68-69

66. अज्ञेय, जयदोल, पृ. 48-49

67. "माधवेन्द्र, श्रुति, पूर्वोत्तर की सांस्कृतिक पहचान, पृ. 15-16

68. " माधवेन्द्र, खुब्लेईशिबुनचिडवन, पृ.09

69. माधवेन्द्र, खुब्लेईशिबुनचिडवन, पृ. 28

70. 'अज्ञेय', सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय' की सम्पूर्ण कहानियाँ दिल्ली: राजपाल एण्ड सन्ज, 2017

71. हँसते-हँसते जीना. प्रथमावृत्ति पलासबाड़ी असम, 1948.

72. ठाकुर, बलभद्र, मुक्तावती इलाहाबाद: हिंदी भवन, 1958.

73. तिवारी, प्रमोद कुमार उफ़्फ़ दूसरा संस्करण. नयी दिल्ली: भारतीय ज्ञानपीठ, 2011.

74. द्विवेदी, हजारीप्रसाद हिंदी साहित्य: उद्भव और विकास बीसवाँ संस्करण. नयी दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2020.

75. दुबे, डॉ. महेंद्र नाथ मुक्ति प्रथम संस्करण नयी दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 1999.

76. पाण्डेय, उदयभानु. हर्ता कुँवर का वसीयतनामा. पहला संस्करण. नयी दिल्ली: भारतीय ज्ञानपीठ, 2012.

77. पान्डेय, श्रीधर. आहूति प्रथम संस्करण. पटना: जानकी प्रकाशन, 2008.

78. मिश्र, श्रीप्रकाश जहाँ बाँस फूलते हैं. संशोधित संस्करण. दिल्ली: यश पब्लिकेशन्स, 2011.

79. रूपतिल्ली की कथा. प्रथम पेपरबैक संस्करण. इलाहाबाद: लोकभारती, 2019.

80. यालाम, जोराम. जंगली फूल. प्रथम पुनर्मुद्रण दिल्ली: अनुज्ञा बुक्स, 2019.

81. साक्षी है पीपल प्रथम संस्करण. दिल्ली: अनुज्ञा बुक्स, 2019.

82. लोयी, मोर्जुम. मिनाम. प्रथम संस्करण. जयपुर: बोधि प्रकाशन, 2020.

83. वर्मा, दयाराम सियांग के उस पार पहला संस्करण. चेन्नई: नॉसन प्रेस, 2018.

84. वर्मा, नवारुण. जय आइ असम प्रथम संस्करण. इलाहाबाद: स्मृति प्रकाशन, 1983.

85. वैश्य, रीतामणि. "आस्था." स्नेहिल पत्रिका चतुर्थ वर्ष (2019).

86. "एक दिन की डायरी" दैनिक पूर्वोदय- लहरें पत्र (2018).

87. "पतंगा." साहित्य यात्रा पत्रिका अंक 11 (वर्ष 3).

88. "बंजारन" विश्व हिंदी पत्रिका (2019).

89. "मृगतृष्णा." मानव अधिकारः नई दिशाएँ पत्रिका अंक 14 (2017).

90. "लोकटाक कब तक!" साहित्य यात्रा पत्रिका अंक 16 (2018).

91. "सुकून." दैनिक पूर्वोदय - लहरें पत्र (2018).

92. "हरकांत की पत्नी." दैनिक पूर्वोदय-लहरें पत्र (2018).

93. शंभुनाथ. हिंदी उपन्यास: राष्ट्र और हाशिया प्रथम संस्करण नयी दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2016.

94. सत्यार्थी, देवेंद्र ब्रह्मपुत्र नयी दिल्ली: एशिया प्रकाशन, 1956.

95. सभरवाल, अनिता. लोहित. प्रथम संस्करण. दिल्ली: परमेश्वरी प्रकाशन, 2016.

96. सौरभ, प्रदीप देश भीतर देश. द्वितीय संस्करण. नयी दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2013.

97. जैन, छगनलाल राह और रोहे. ग्यारहवीं बार गुवाहाटी: असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, 2007.

98. सिंधी, नरेंद्र कुमार, वशुधार गोस्वामी, समाजशस्त्र विवेचन, पृ.324

99. लवानिया, एम.एम भारत में जनजातियों का समाजशास्त्र पृ 44

100. लवानिया, एम.एम भारत में जनजातियों का समाजशास्त्र पृ 72

101. तिवारी, डी. डी. हिंदी उपन्यास : स्वातंत्र्य के संघर्ष के विविध आयाम, पृ.68

102. तिवारी, डी. डी. हिंदी उपन्यास : स्वातंत्र्य के संघर्ष के विविध आयाम, पृ..68

103. दुबे, महेन्द्रनाथ, मुक्ति, फ्लैप से उद्धृत

104. दुबे, महेन्द्रनाथ, मुक्ति, फ्लैप से उद्धृत, पृ. IX

105. 'शुक्ल, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते हैं, प्राक्कथन से

106. 'शुक्ल, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते हैं, प्राक्कथन से, पृ. 24

107. 'शुक्ल, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते हैं, प्राक्कथन से, पृ.42

108. 'शुक्ल, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते हैं, प्राक्कथन से, पृ.45,

109. 'शुक्ल, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते हैं, प्राक्कथन से, पृ.55

110. 'शुक्ल, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते हैं, प्राक्कथन से, पृ.63,

111. 'शुक्ल, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते हैं, प्राक्कथन से, पृ.107

112. 'शुक्ल, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते हैं, प्राक्कथन से, पृ.145,

113. जैन महेंद्रनाथ, लिबरेशन, पृ.324

114. पाण्डेय, श्रीधर, आहुति, पृ। vii

115. वही, फ्लैप से उद्धृत

116. गुप्ता, रमणिका, आदिवासी विकास से विस्थापन, पृ. 07

117. मिश्र, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते हैं, पृ 99

118. नागर, विमलशंकर, हिंदी के आंचलित उपन्यास: सामाजिक एवं सांस्कृतिक संदर्भ, पृ 34

119. पाण्डेय, श्रीधर, आहुति, पृ. 37

120. यालम, जोराम, जंगली फूल, पृ. 157

121. यालम, जोराम, जंगली फूल, पृ. 157

122. पाण्डेय, माधवेंद्र, पूर्वोत्तर की सांस्कृतिक पहचान, पृ 182

123. पाण्डेय, श्रीधर, आहुति, पृ. 09

124. मिश्र,श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते है, पृ.39

125. यालम, जोराम, जंगली फूल, पृ.162

126. पाण्डेय, श्रीधर, आहुति, पृ.20

127. यालम,जोराम, जंगली फूल, पृ 49

128. मिश्र, श्रीप्रकाश, जहाँ बाँस फूलते है। पृ 183

129. यालम, जोराम, जंगली फूल, पृ 149

130. राय, गोपाल. हिंदी उपन्यास का इतिहास छठा संस्करण. नयी दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2016.

131. हिंदी कहानी का इतिहास (भाग 1). पहली आवृत्ति नयी दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2014.

132. वर्मा, डॉ. धीरेंद्र, संपा. हिंदी साहित्य कोश (भाग 1). पुनर्मुद्रण. वाराणसी: ज्ञानमण्डल लिमिटेड, 2021.

133. यादव, अनिल, वह भी कोई देश है महाराज, पृ.80

134. प्रभाकर, विष्णु, एक देश एक हृदय, पृ.63

135. निरुपमा, भारत के राज्य, पृ. 117

136. सिंह, जगमल, मणिपुर, पृ. 37

137. वजाहत, असगर, रास्ते की तलाश में, पृ.62

138. गर्ग, मृदुला, कुछ अटके कुछ भटके, पृ.68-69

139. अज्ञेय, जयदोल, पृ. 48-49

140. "माधवेन्द्र, श्रुति, पूर्वोत्तर की सांस्कृतिक पहचान, पृ. 15-16

141. " माधवेन्द्र, खुब्लेईशिबुनचिडवन, पृ.09

142. माधवेन्द्र, खुब्लेईशिबुनचिडवन, पृ. 28